ह्रीः

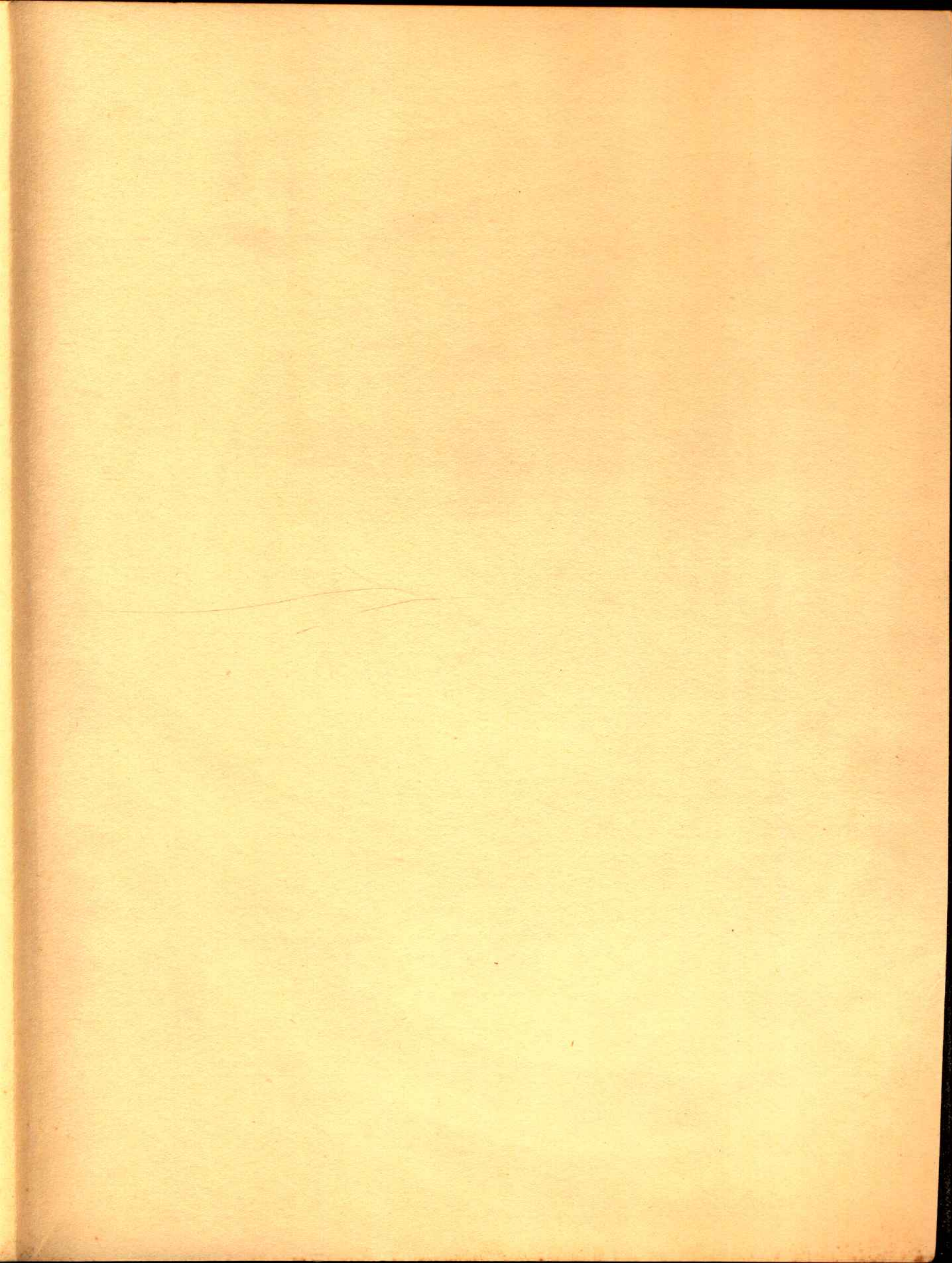
दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध पत्रिका

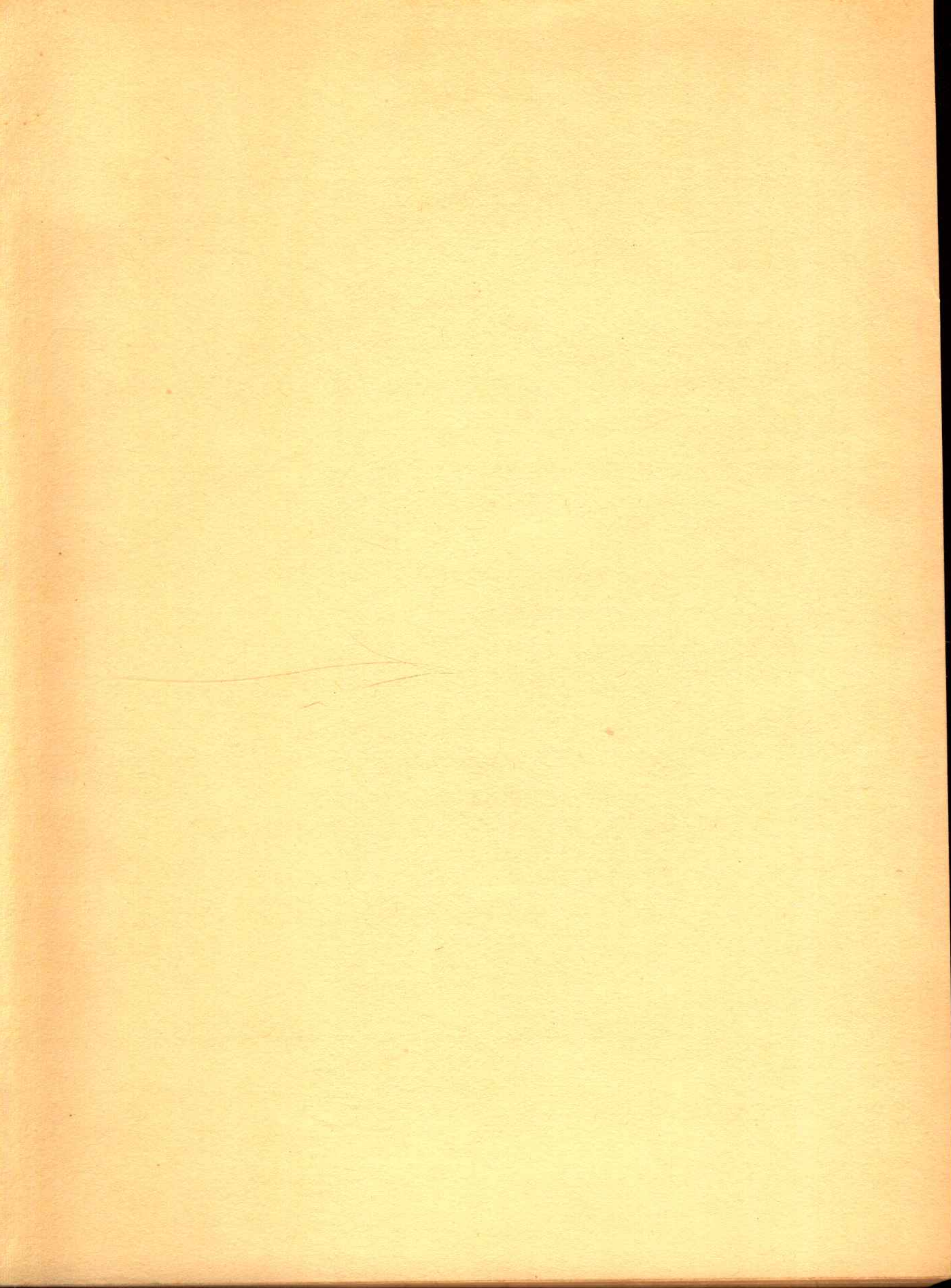
A Review of rare buddhist texts

2

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

1986





ह्रीः

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध पत्रिका

A Review of rare buddhist texts

2

Editors
PROF. S. RINPOCHE
Project Director

VRAJ VALLABH DWIVEDI
Deputy Director

सम्पादक
प्रो० एस० रिन्पोछे
योजना निदेशक

व्रजवल्लभ द्विवेदी
उपनिदेशक



भोटविद्या संस्थानम्

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना
केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

बुद्धाब्द २५३०

ख्रीस्ताब्द १९८६

मूल्य : रु० ३८.००

प्रकाशक :

केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा-संस्थान
सारनाथ, वाराणसी

मुद्रक :

रत्ना प्रिन्टिग वर्क्स, कमच्छा, वाराणसी।

धीः

विषयानुक्रमणी

•

अकृत्वेर्ष्यां विशिष्टेषु हीनाननवमत्य च ।
अगत्वा सदृशैः स्पर्धां त्वं लोके श्रेष्ठतां गतः ।।

अध्यर्धशतके (३।१) मातृचेटः

आर्यतारानमस्कारैकविंशतिस्तोत्रम्

[यह स्तोत्र श्री जगन्नाथ उपाध्याय जी के व्यक्तिगत संग्रह से उपलब्ध अप्रकाशित स्तोत्र-संग्रह (पत्रसंख्या 33-34, स्तोत्रक्रमांक 60) से लिया गया है। इस संग्रह का विवरण 'धीः' के प्रथम अंक, पृ० 51 में दिया जा चुका है।]

ॐ नमो भगवत्यै आर्यश्री-एकविंशतितारायै

नमस्तारे तुरे वीरे क्षणद्युतिनिभेक्षणे।
त्रैलोक्यनाथवक्त्राब्जविकसत्कमलोद्भवे ॥ 1 ॥

नमः शतशरच्चन्द्रसंपूर्णेव वरानने।
तारासहस्रकिरणैः प्रहसत्किरणोज्ज्वले ॥ 2 ॥

नमः कनकनीलाब्ज-पाणिपद्मविभूषिते।
दानवीर्यतपःशा(क्षा)न्तितितिक्षाध्यानगोचरे ॥ 3 ॥

नमस्तथागतोष्णीषविजयानन्तचारिणी(णि)।
शेषपारमिताप्राप्तजिनपुत्रनिषेविते ॥ 4 ॥

नमस्तुतारहुंकारपूरिताशादिगन्तरे।
सप्तलोकक्रमाक्रान्ता(न्ते) अशेषकरुणा(णे)क्षणे ॥ 5 ॥

नमः शक्रानर(ल)ब्रह्ममरुद्विश्वेश्वरार्चिते।
भूतवेतालगन्धर्वगणयक्षपुरस्कृते ॥ 6 ॥

नमः स्त्रदिति फट्कार परजत्र(यन्त्र)प्रमर्दिनि।
प्रत्यालीढपदन्यासे शिखी(खि)ज्वालाकुलोज्ज्वले ॥ 7 ॥

नमस्तुरे महाघोरे मालवीरविनाशिनि।
भृकुटीकृतवक्त्राब्जसर्वशत्रुनिसुन्दनी(षूदिनि) ॥ 8 ॥

नमः स्त्रीरत्नमुद्राङ्कहृदयाङ्गुलिभूषिते।
भूषिताशेषदिक्चक्रनिकरस्वकराकुले ॥ 9 ॥

नमः प्रमुदिताशेषमुक्ताक्षीरप्रसारिणि।
हसत्प्रहसतुत्तारे मारलोलवशङ्करि ॥ 10 ॥

नमः समन्तभूपालपत(ट)लाकर्षण(णे)क्षणे ।
चरभृकुटिहुँकारसर्वापदविमोचनी(चिनि) ॥ 11 ॥

नमः श्रीखण्डखण्डेन्दु[सु]मुक्ताभरण(णो)ज्ज्वले ।
अमिताभजिताभारभासुरे किरणोद्ध्रुवे(द्धुरे) ॥ 12 ॥

नमः कल्पान्तहुतभुग्ज्वालामालान्तरे(र)स्थिते ।
आलीढमुदि(द्रि)ताबद्धरिपुचक्रविनाशिनी(नि) ॥ 13 ॥

नमः करतरा(ला)घाट(त)चरणाहतभूतले ।
भृकुटीकृतहुँकारसप्तपातालभेदिनी(नि) ॥ 14 ॥

नमः शिवे शुभे शान्ते शान्तनिर्वाणगोचरे ।
स्वाहाप्रणवसंयुक्ते महापातकनाशनी(शिनि) ॥ 15 ॥

नमः प्रमुदिताबद्धरिपुगात्रप्रभेदिनि ।
दशाक्षरपदन्यासे विद्याहुँकारदीपिते ॥ 16 ॥

नम[स्तारे] तुरे पादघातहुँकारबीजिते ।
मेरुमण्डलकैलाशभुवनत्रयचारिणी(णि) ॥ 17 ॥

नमः सुरे स(श)राकारहरिणाङ्ककरे(र)स्थिते।
हरद्विरुक्तफट्कार(रे) अशेषविषनाशिणी(नि) ॥ 18 ॥

नमः सुरासुरगणयक्षकिन्नरसेविते ।
अबुद्धमुदिताभोगकरी(रि)दुःस्वप्ननाशिनी(नि)॥ 19 ॥

नमश्चन्द्रार्कसंपूर्णनयनद्युतिभास्वरे ।
ताराद्विरुक्ततुत्तारे विषमज्वल(र)नाशिनि ॥ 20 ॥

नमः स्त्रीतत्त्वविन्यासे शिवशक्तिसमन्विते ।
ग्रहवेतार(ल)यक्षोष्मनाशिनि प्रवरे तुरे ॥ 21 ॥

मन्त्रमूलमिदं स्तोत्रं नमस्कारैकविंशतिः(ति) ।
यः पठे प्रातः(पठेत् प्रयतः) धीमान् देव्या भक्तिसमन्विते(तः)॥ 22 ॥

सायं वा प्रातरुत्थाय स्मरेत् सर्वाभयप्रदम् ।
सर्वपापप्रशमनं सर्वदुर्गतिनाशनम् ॥ 23 ॥

अभिषिक्तो भवेत् तूर्णं सप्तभिर्जिनकोटिभिः ।
मासमात्रेण चैवासौ सुखं बौद्धपदं व्रजेत् ॥ 24 ॥

विषं तस्य महाघोरं स्थावरं चाथ जङ्गमम् ।
स्मरणान्न पदं याति खादितं पि(पी)तमेव वा ॥ 25 ॥

ग्रहजो(जा)लविषार्तानां परस्त्रीविषनाशनम् ।
अन्येषां चैव सत्त्वानां द्विसप्तमभिवर्तितम् ॥ 26 ॥

पुत्रकामो लभेत् पुत्रं धनकामो लभेद्धनम् ।
सर्वकामानवाप्नोति न विघ्नैः प्रतिहन्यते ॥ 27 ॥

॥ इति श्रीसम्यक्संबुद्धवैलो(रो)चनभाषितं भगवत्यार्यतारादेव्या नमस्कारैक-विंशतिनामाष्टोत्तरशतकं बुद्धभाषितं परिसमाप्तम् ॥



त्रिकायवज्रयोगिन्याः पिण्डार्थस्तुतिः

[यह स्तुति श्री जगन्नाथ उपाध्याय जी के व्यक्तिगत संग्रह में स्थित गुह्यसमयसाधनसंग्रह (पत्रसंख्या 181-182, क्रमसंख्या 24) से ली गयी है ।]

ॐ नमः वज्रयोगिन्यै । ॐ नमो बुद्धधर्मसंघेभ्यः । ॐ नमो गुरुबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः । ॐ नमो लोचनादिदशवज्रविलासिनीभ्यः । नमो यमान्तकादिदशक्रोढ(ध)वीरेभ्यः ।

वाराही शौण्डिनी चैव चण्डाली डोम्बिनी तथा ।
नटनी रजकी ब्राह्मी कपालिनी च सास(शाश्व)ता ॥ 1 ॥

अमृताऽमृतकुण्डली च ज्ञानज्योतिःप्रकाशिका ।
सर्वाशावीरदेवीनामियमेका महासुखा ॥ 2 ॥

शून्यता गीयते चासौ पर[ा]शक्तिः परात्परा ।
अमृतोर्द्धमना? दिव्या उपाया नित्यवाहिनी ॥ 3 ॥

खेचरी भूचरी चैव पातालवासिनी तथा ।
प्रवि(ति)ष्ठा पूरणी नित्यं त्रैलोक्यक्षोभती(भिणी)तथा॥4॥

बिन्दुनादकला देवी चन्द्रसूर्यात्मिका हि सा ।
[नित्या] नैर्माणिकी चैव संभागी च महासुखा ॥ 5 ॥

बिन्दुनादकलातीता प्रज्ञापारमिता मता ।
सर्वभावस्वभावा हि सर्वभावविवर्जिता ॥ 6 ॥

प्रलयोत्पत्तिहीना च प्रलयोत्पत्तिकारिणी ।
शाश्वतत्वात् स्थिता प्रोक्ता शाश्वतेन च वर्जिता ॥ 7 ॥

गम्भीराऽऽलिङ्गितोदारा महार्था स्वधिमुक्तिका ।
शून्यतात्रयहीना च प्रभास्वरस्वरूपिणी ॥ 8 ॥

एकाराक्षररूपा च वंकाराक्षरसंगता ।
विचित्रादिक्षणैर्युक्ता चतुरानन्दरूपिणी ॥ 9 ॥

बाह्यमण्डलचक्रेऽपि स्फुरन्ती च त्रिकायतः ।
कायवाक्चित्तभावेषु कायवाक्चित्तभूषणी ॥ 10 ॥

अतीत्य कायवाक्चित्तैः समत्वेन च मध्यगा ।
नैरात्म्यरूपिणी देवी तथतायां प्रतिष्ठिता ॥ 11 ॥

कमलकुलिशाक्रान्तशून्यतात्रयरूपिणी ।
ललनारसनायोगादवधूती महासुखा ॥ 12 ॥

संसारतारणी चैषां तथा तासां प्रतीत्यजा ।
यां लब्ध्वा योगिनो मुक्ता भवसंसारबन्धनात् ॥ 13 ॥

इत्येषा ऋद्धिदा प्रोक्ता सिद्धिदा चैव योगिनी ।
मोक्षद्वारपरा चैव सतताभ्यासकारिणाम् ॥ 14 ॥

वज्रवत् कुरुते देहं रससिद्धि ददाति च ।
गुरुपादप्रसादेन लब्धेयं वज्रयोगिनी ॥ 15 ॥

य(ए)तस्याः पाठमात्रेण पुण्यसंभारमादरात् ।
प्राप्नोति सततं योगी ज्ञानसंभारसंभृतः ॥ 16 ॥

इति गुह्यसमयतन्त्रे पिण्डार्थाः षोडशश्लोकास्त्रिकायवज्रयोगिन्याः समाप्ताः ।
कृतिरियं सिद्धाचार्यश्रीविरूपादानामिति ॥



दुर्लभ ग्रन्थ परिचय

—जनार्दन पाण्डेय—

[इस शीर्षक से 'धीः' के प्रथम अंक में (1) गुह्यसमयसाधनसंग्रह तथा (2) बौद्धस्तोत्रसंग्रह का विवरण दिया गया था। प्रस्तुत अङ्क में इसी शीर्षक की संख्या 1 में धारण्यादिसंग्रह का परिचय दिया जा रहा है।

यह 371 ग्रन्थों का संग्रह है, जिनमें 263 धारणी एवं रक्षामन्त्र हैं, 48 स्तोत्र हैं तथा 53 स्फुट ग्रन्थ हैं। यद्यपि ग्रन्थों के संग्रह का कोई क्रम निश्चित नहीं है, किन्तु क्रमसंख्या प्रत्येक ग्रन्थ के अन्त में दी गई है। अतः हमने सुविधा की दृष्टि से धारणियों और रक्षामन्त्रों को अकारादि क्रमानुसार रखकर ग्रन्थ में निहित संख्या को 'ग्रन्थाङ्क' नाम से दिया है। इन मन्त्रात्मक ग्रन्थों पर अपनी ओर से कोई टिप्पणी नहीं की गयी है। स्फुट ग्रन्थों का विवरण दे दिया है तथा स्तोत्रों को आगे स्तोत्रसंग्रह में दिया गया है।

यह ज्ञातव्य है कि म० म० हरप्रसाद शास्त्रीजी ने नेपाल दरबार लाइब्रेरी मैन्यु० कैटलाग भाग 2 में जिस बृहद्धारणीसंग्रह का उल्लेख किया है, उससे यह संग्रह भिन्न है।

इसी शीर्षक की संख्या 2 में तीन स्तोत्र संग्रहों का परिचय दिया गया है—(1) बौद्धस्तोत्र-संग्रह—इसमें 37 स्तोत्रों का, (2) नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह—इसमें 55 स्तोत्रों का और (3) धारण्यादिसंग्रह में गृहीत 48 स्तोत्रों का, इस प्रकार कुल 144 स्तोत्रों का विवरण दिया गया है। प्रत्येक स्तोत्र का प्रारम्भिक प्रतीक भी दे दिया है, जिससे एक नाम के भिन्न-भिन्न स्तोत्रों की स्पष्ट प्रतीति हो सके।]

3. धारण्यादिसंग्रह

'धीः' के प्रस्तुत अङ्क में 'धारण्यादिसंग्रह' का विवरण दिया जा रहा है। बौद्ध वाङ्मय में धारणियों का अत्यधिक महत्त्व है। ऐहिक सुख शान्ति की प्राप्ति एवं दुःख-बाधाओं से निवृत्ति के लिये धारणी का उपयोग किया जाता है। यद्यपि धारणी भी स्तोत्र की भाँति तत्तद्देवता की आराधना ही है, परन्तु स्तोत्र और धारणी में यह अन्तर है कि स्तोत्र की रचना कोई भी कर सकता है पर उससे फल की प्राप्ति रचयिता की आत्मशक्तिसंपन्नता पर निर्भर है, किन्तु धारणियाँ अनुभवी सिद्धों की मन्त्रात्मक वाणियाँ हैं, जिनकी अमोघता पर सन्देह नहीं किया जा सकता।

इस 'धारण्यादिसंग्रह' की मूल प्रति राष्ट्रीय अभिलेखागार नेपाल में है और उसी की फोटो कापी केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान के ग्रन्थालय से प्राप्त हुई है, जिसकी पंजीकृत संख्या 5068 है।

महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री जी ने 'दरबार लाइब्रेरी मैन्यु० कैटलाग भाग 2, परिशिष्ट (पृष्ठ 250-263) में 'बृहद्धारणीसंग्रह' का उल्लेख किया है और उसमें संकलित 411 धारणियों की सूची दी है, प्रस्तुत धारण्यादिसंग्रह उससे भिन्न है। इसमें 371 ग्रन्थों का संग्रह किया गया है, जिनमें 263 धारणियाँ तथा मन्त्र हैं, 48 स्तोत्र हैं और शेष स्फुट ग्रन्थ हैं।

यद्यपि मूल ग्रन्थ में विषय के अनुसार संग्रह का कोई क्रम नहीं है, अतः विवरण में सुविधा की दृष्टि से हमने इसे तीन भागों में विभक्त किया है—1. मन्त्र एवं धारणियाँ, 2. स्फुट ग्रन्थ, 3. स्तोत्र। इनमें स्तोत्रों का विवरण आगे स्तोत्रसंग्रह के साथ दिया जा रहा है तथा धारणियों एवं स्फुट ग्रन्थों का विवरण यहाँ प्रस्तुत है। कौन ग्रन्थ मूल प्रति में कहाँ पर अंकित है, इसके लिये प्रत्येक का ग्रन्थाङ्क दे दिया है, जो मूल प्रति में भी अंकित है। मूल प्रति का परिचय इस प्रकार है—

ग्रन्थ धारण्यादिसंग्रह
ग्रन्थकार मैत्रेयनाथ आदि
ल० सं० 3-589, **वि० सं०** 559, **फोटो प्रति सं०** 5068
पत्र सं० 1-335, **पंक्ति सं० प्र० प०** 13, **अक्षर सं० प्र० पं०** 41
लिपि—देवनागरी, **लिपिकाल** सं० 980 (ने० ?)
पूर्ण

प्रारम्भ

ॐ नमो भगवत्यै आर्यप्रज्ञापारमितायै

एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् श्रावस्त्यां विहरति स्म जेतवनेऽनाथपिण्डदस्यारामे महता भिक्षुसङ्घेन सार्धं परिपूर्णेनार्हद्भिर्भिक्षुसहस्रेण बोधिसत्त्वानां च महासन्नाहसन्नद्धानां परिपूर्णैर्दशभिर्बोधिसत्त्वसहस्रैः सार्धं सर्वैरविनिवर्तनीयैरनुत्तरायाः सम्यक्संबोधेः। तद्यथा—

अन्त

बुद्धं नमामि सततं वरपद्मपाणिं मैत्र्यात्मकं गगणगं च समन्तभद्रम्।
यक्षाधिपं परहितोद्यतमञ्जुघोषं विष्कम्भिणं क्षितितनुं प्रणमामि भव्यम्॥
कारुण्याम्भःप्रतिष्ठं प्रणिधिविषरुहं वीर्यसंभारदण्डं
शीलं चैवादिपत्रं शमथमनुदलं वज्रधीकेशराग्रम्।

*...

....

पुष्पिका

आर्यप्रज्ञापारमितादिधारणीसंग्रहः समाप्तः ॥

अतिरिक्त

ये धर्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेषां तथागतो ह्यवदत् ।
तेषां च यो निरोध एवंवादी महाश्रमणः ॥

देवधर्मादिप्रवरमहायानयादिनां परमपोशकश्री3वज्रदेवीचरणसेवितश्रीवज्राचार्यसिमुनिकस्य माता पिता भ्राता पुत्र पौत्रादिसगणपरिवाराणां यत् पुण्यं तद् भवत्वाचार्योपाध्यायमातापितृ-पूर्ववद् गमनं कृत्वा हेरा कार्येति स्थित्वा श्रीवज्राचार्यं हेरावज्राचार्य त्वा सकलसत्त्वराशेरनुत्तर-ज्ञानफलं प्राप्तं योऽस्तु ॥ श्रेयोऽस्तु ॥ संवत् 980 मिति आश्विन कृष्ण त्रयोदशि पर चतुर्दशि आदित्यवार दिने लिखितं सम्पूर्णमिति ॥

दानपते नेपालमण्डले सुवर्णपत्रारमहानगरे महिभद्राचार्यसंस्कारितमैत्रीबुद्धपूरितमहाविहार-या श्री 3 वज्रदेवी चरणसेवित श्री....................

धारणियों एवं मन्त्रों का विवरण

क्रमसं०	ग्रन्थाङ्क	धारणी	देवता	पत्राङ्क
1	28	(आर्य) अक्षोभ्यनामधारणी	अक्षोभ्य	60a
2	357	(आर्य) अतीतानामधारणी	अतीता	299b
3	23	(आर्य) अभयंकरीनामधारणी	अभयंकरी	58b
4	30	(आर्य) अमिताभनामधारणी	अमिताभ	60a
5	89	अमृतभक्षानामधारणी	मञ्जुनाथ	108a
6	208	[1](आर्य) अमोघतथागतस्य नामधारणी	अमोघ	242a
7	294	अमोघपदधारणी	,,	260a
8	31	(आर्य) अमोघसिद्धिनामधारणी	,,	60a

*. फोटो कापी में स्पष्ट पाठ्य नहीं है ।

1. केवल पुष्पिका है, मन्त्र नहीं ।

9	95	अरपचनमञ्जुश्रीनामधारणी	मञ्जुश्री	108b-109a
10	324	अष्टडाकिनीहृदयमन्त्रः	डाकिनी	285b
11	355	(आर्य) अष्टमहाभयपुङ्गीलनामधारणी	पुङ्गील	299a-b
12	90	अष्टमहाभयहरणतारानामधारणी	तारा	108a-b
13	340	अष्टमहाभैरवधारणी	महाभैरव	292a
14	216	(आर्य) आनन्दादिलोकेश्वरनामधारणी	लोकेश्वर	242b-243a
15	10	(आर्य) षट्पारमिताहृदयनामधारणी	षट्पारमिता	37a-b
16	328	उग्रतारानामधारणी	उग्रतारा	287a-289a
17	99	उग्रतारानामधारणी	,,	109a
18	329	उग्रतारानामधारणी	,,	289a
19	188	उग्रतारामहामन्त्रधारणी	,,	217b
20	193	उग्रतारासाधनधारणी	,,	220b
21	330	(आर्यश्री) उग्रतारावज्रयोगिन्या यन्त्रोद्धारणी	,,	289a
22	7	(आर्य) उष्णीषचक्रवर्तिनामधारणी	प्रत्यङ्गिरा	35a
23	263	उष्णीषमहावरनामधारणी	,,	253a
24	152	(आर्य) उष्णीषविजयानामधारणी	,,	145b-147a
25	138	(आर्य) उष्णीषविजयासाधननामधारणी	,,	125b-126b
26	327	एकजटाध्यानधारणी	एकजटा	286a-b
27	84	एकजटानामधारणी	,,	105b-137b
28	302	(आर्य) एकजटानामधारणी	,,	260a-263b
29	291	एकपदनामधारणी	वज्रिणी	259b
30	222	(आर्य) एकश्लोकातिपकाल-नामधारणी	प्रज्ञापारमिता	246a
31	250	ॐकारनामधारणी	वैरोचन	251a
32	40	कर्णजापानामधारणी	कर्णजापा	60b-61a
33	92	कर्मराजनामधारणी	योगाम्बर	108b
34	269	(आर्य) कामिनीश्रीदेवीनामधारणी	कामिनी	254b
35	114	कालचक्रनिवर्धनधारणी	कालचक्र	113b
36	71	(आर्य) कुरुकुल्लानामधारणी	कुरुकुल्ला	101b
37	184	(आर्य) केतुग्रहशान्तिधारणी	केतु	215a-b
38	254	खंकारनामधारणी	अमोघसिद्धि	251b

39	102	गगणाक्षेपवज्रयोगिनीनामधारणी	वज्रयोगिनी	109b
40	129	गगणात्मशुक्लवर्णवज्रवाराहीनामधारणी	वज्रवाराही	121b-122b
41	58	गन्ध(ण्ड)व्यूहोनामधारणी	गण्डव्यूह	93b
42	66	[1]गाथाद्वयनामधारणी	अमोघसिद्धि	96b-97a
43	155	(आर्य) ग्रहमातृकानामधारणी	ग्रहमातृका	148b-151a
44	358	(आर्य) ग्रहमातृकानामधारणी	,,	299b-302b
45	367	चक्रसंवरस्य हृदयमन्त्रमालानामधारणी	हेरुक	326b-327a
46	141	चण्डमहारोषणधारणी	चण्डमहारोषण	127b
47	314	चण्डमहारोषणधारणी	,,	281a
48	227	चतुर्दिग्लोकपालनामधारणी	लोकपाल	246b
49	318	(आर्य) चतुर्योगदेवदेवीधारणी	जातिस्मरा	282b-283a
50	299	(श्री) चन्द्रनामधारणी	चन्द्रमा	260a
51	80	चिन्तामणिनामधारणी	चिन्तामणि	104b-105a
52	81	चिन्तामणिनामधारणी	,,	105a
53	245	चिन्तामणिलोकेश्वरनामधारणी	लोकेश्वर	250a-b
54	204	(आर्य) चिन्तामणिवैरोचननामधारणी	वैरोचन	241b
55	34	चुन्द्राभगवतीधारणी	चुन्द्रा	60b
56	82	चुन्द्राभट्टारिकाया रक्षामन्त्रः	,,	105a-b
57	236	चुन्द्रामधूरिकानामधारणी	,,	248b-249a
58	247	चैत्यपुद्गलस्य हृदयनामधारणी	चैत्यपुद्गल	250b
59	12	(आर्य) जम्भलजलेन्द्रस्य नामधारणी	जम्भलजलेन्द्र	38a
60	335	जाङ्गुलीधारणी	जाङ्गुली	290a-b
61	72	(आर्य)जाङ्गुलीनामधारणी	,,	101b
62	336	जाङ्गुलीहृदयमन्त्रः	,,	290b
63	332	(आर्य) जाङ्गुलीहृदयमन्त्रः	,,	289a
64	54	जातिस्मरानामधारणी	जातिस्मरा	92b-93a
65	55	जातिस्मरानामधारणी	,,	93a
66	288	जारिघपदनामधारणी	वज्रमुखी	259b

1. यह पृथक् धारणी नहीं है। क्रमांक 8 और 78 (ग्रन्थांक 31.32) की अमोघसिद्धि-सर्वदुर्गति-शोधनधारणी का 108 जप करने का विधान मात्र है।

67	231	ज्ञानदेवीनामधारणी	ज्ञानदेवी	247a
68	51	तथागतगुह्यनामधारणी	तथागत	88B-90a
69	191	(आर्य) ताराकल्पोपदेशधारणी	तारा	220a
70	192	(आर्य) तारादशाक्षरविधानधारणी	,,	220a-b
71	209	(आर्य) तारानामधारणी	,,	242a
72	63	(आर्य) ताराप्रतिज्ञानामधारणी	,,	95a
73	338	(आर्य) ताराहृदयमन्त्रः	,,	290b
74	252	त्रांकारनामधारणी	रत्नसंभव	251b
75	145	त्रैलोक्यविजयानामधारणी	त्रैलोक्यविजयभट्टारक	130b
76	85	(आर्य) दशक्रोधमहाभैरवनामधारणी	महाभैरव	107b
77	100	दशक्रोधानामधारणी	टक्किराज	109a-b
78	32	(आर्य) दुर्गतिपरिशोधिनीनामधारणी	सर्वदुर्गतिपरिशोधनराज	60a
79	190	द्वादशसूर्यनामधारणी	सूर्य	217b-220a
80	240	द्वादशाक्षरनामधारणी	वागेश्वर	249b
81	281	द्विभुजमहासंवरनामधारणी	महासंवर	257a-b
82	198	धर्मचक्रप्रवर्तननामधारणी	तथागत	223b-224a
83	268	धूमाङ्गारीनामधारणी	धूमाङ्गारी	254b
84	138	ध्वजाग्रकेयूरीनामधारणी	ध्वजाग्रकेयूरी	125a-b
85	65	(आर्य) ध्वजाग्रकेयूरीनामधारणी	,,	95b 96b
86	274	नवनागस्य हृदयधारणी	नाग	356a
87	87	(आर्य) नामसंगीतिधारणी	मञ्जुश्रीनामसंगीति	107b-108a
88	179	निशाभैरवधारणी	निशाभैरव	210a
89	18	नीलकण्ठनामधारणी	अवलोकितेश्वर	54a-b
90	189	नीलसरस्वतीधारणी	तारा	217b
91	331	नीलसरस्वतीयन्त्रोद्धारणी	,,	289a
92	125	नैरात्म्यासाधनधारणी	नैरात्म्या	120a
93	312	नैरात्म्यागुह्येश्वरीदेव्या मन्त्रधारणी	,,	280a-b
94	248	पञ्चजिनधर्मधातुवागीश्वरधारणी	धर्मधातुवागीश्वर	251a
95	282	पञ्चमहारक्षानामधारणी	पञ्चमहादेवी	257b
96	286	पद्मनित्यनाथेश्वरनामधारणी	पद्मनित्यनाथ	259a

97	234	(आर्य) पद्मपदनामधारणी	पद्मनित्यनाथ	248b
98	214	(आर्य) पद्मपाणिलोकेश्वरनामधारणी	,,	242b
99	341	पद्मोत्तमनामधारणी	,,	292a
100	241	(आर्य) पद्मोत्तरनामधारणी	,,	249b
101	56	(आर्य) पर्णशबरीमहामारीप्रशमनीनामधारणी	पर्णशबरी	93a-b
102	212	(आर्य) पाण्डरीतारादेवीनामधारणी	पाण्डरीतारा	242a
103	133	पीतवर्णप्रज्ञापारमिताधारणी	प्रज्ञापारमिता	123b-124a
104	4	(आर्यश्री) पीतवर्णप्रज्ञापारमिताधारणी	,,	30a
105	110	पुण्यविवर्धननामधारणी	सुवर्णप्रभ इन्द्रराज	110b-111a
106	346	पूजामेघधारणी	वज्रेश्वरी	295a
107	2	प्रज्ञापारमिताधारणी	प्रज्ञापारमिता	21a
108	360	प्रज्ञापारमिताधारणी	,,	303a
109	5	(आर्य) प्रज्ञापारमिताधारणी	,,	30a
110	44	(आर्य) प्रतिसराकल्पधारणी	प्रतिसरा	65a-66a
111	343	प्रत्यङ्गिरापठितसिद्धा	प्रत्यङ्गिरा	292b
112	287	प्रत्यालीढपदनामधारणी	वज्रराक्षसी	259b
113	104	प्रसन्नतारानामधारणी	प्रसन्नतारा	110a
114	224	प्रसन्नतारानामधारणी	,,	246b
115	38	(आर्य) प्रहस्तनामधारणी	प्रहस्त	60b
116	91	बुद्धभट्टारकस्य नामधारणी	बुद्ध	108b
117	284	बोधिसत्त्वषोडशनामधारणी	,,	258a
118	166	भीमसेननामधारणी	भीमसेन	182b-184b
119	128	भूतडामरसंक्षिप्तधारणी	भूतडामर	121Ab
120	229	भृङ्गारीतारानामधारणी	तारा	247a
121	36	भैषज्यनामधारणी	तथागत	60b
122	220	मञ्जुवज्रनामधारणी	मञ्जुवज्र	244a
123	37	(आर्य) मञ्जुश्रीप्रतिज्ञानामधारणी	मञ्जुश्री	60b
124	301	(आर्य) मञ्जुश्रीभट्टारकप्रतिज्ञानामधारणी	,,	260b
125	352	(आर्य) मञ्जुश्रीमन्त्रसूत्रम्	,,	298a
126	290	मदपण्डधारणी	नागवज्र	259b

127	107	महाकालस्य धारणी	महाकाल	110a-b
128	181	[1]महादेवीपरिवर्तोनामधारणी	महादेवी	212a-213b
129	117	(आर्य) महाप्रतिसराधारणी	महाप्रतिसरा	115a
130	337	(आर्य) महाप्रतिसरानामधारणी	,,	271a-273a
131	105	महाभैरवस्य धारणी	भैरव	110a
132	79	महाभैरवस्य नामधारणी	,,	104a-b
133	311	(आर्य) महामन्त्रानुसारिणी	,,	278b-280a
134	139	महामायानामधारणी	महामाया	126b-127a
135	78	(आर्य) महामायावज्रवाराहीनामधारणी	,,	103a-104a
136	68	महामायाविजयवाहिनीनामधारणी	,,	97-b99a
137	119	(आर्य) महामायूरीधारणी	महामायूरी	115a-116a
138	46	(आर्य) महामायूरीविद्याराज्ञीनामधारणी	,,	74b-84b
139	309	(आर्य) महामायूर्या विद्याराज्ञ्या मन्त्रोद्धारणी	,,	276a-277b
140	159	(आर्य) महामेघनिर्नादविजृम्भितसुरकेतु-नामधारणी	नागराज	169a-172a
141	43	(आर्य) महाविद्यामहाप्रतिसराधारणी	महाप्रतिसरा	61a-65a
142	47	(आर्यश्री) महाशीतवतीनामधारणी	महाशीतवती	84b-86a
143	310	(आर्य) महाशीतवतीनामधारणी	,,	277b-278b
144	122	(आर्य) महाशीतवतीसाधननामधारणी	,,	116a
145	116	महासरस्वतीधारणी	सरस्वती	114a-115a
146	368	महासंवरमालामन्त्रधारणी	संवर	327a-b
147	142	महासंवरस्य कर्मराजविशुद्धिनामधारणी	,,	127b-128a
148	308	(आर्य) महासाहस्रप्रमर्दिनीनामधारणी	साहस्रप्रमर्दिनी	273a-276a
149	24	(आर्य) मणिभद्रनामधारणी	मणिभद्र	59a
150	211	(आर्य) मामकीतारादेवीनामधारणी	तारा	242a
151	213	(आर्य) मायाजाललोकेश्वरनामधारणी	लोकेश्वर	242a-b
152	73	(आर्य) मारीचीनामधारणी	मारीची	101b-102a
153	154	(आर्य) मारीचीनामधारणी	,,	148 a-b

1, सुवर्णप्रभासोत्तमे सूत्रेन्द्रराजे ।

154	239	(आर्य) मारीचीनामधारणी	मारीची	249a-b
155	364	(आर्य) मारीचीनामधारणी	,,	309a
156	16	मुखाङ्गोकर्णासिद्धिनिकानामधारणी	अवलोकितेश्वर	53b-54a
157	49	मूलविद्यानामधारणी	बोधिसत्त्व	88a-b
158	351	(आर्य) मेधाकरीनामधारणी	अवलोकितेश्वर	298a
159	96	मैत्रेयनामधारणी	मैत्रेय	109a
160	61	(आर्य) मैत्रेयीप्रतिज्ञानामधारणी	,,	94a-b
161	22	मोक्षप्रदनामधारणी	अवलोकितेश्वर	58b
162	103	रक्तयमारिनामधारणी	रक्तयमारि	109b-110a
163	206	(आर्य) रत्नराजनामतथागतधारणी	रत्नकेतु	241b
164	29	(आर्य) रत्नसंभवनामधारणी	रत्नसंभव	60a
165	183	(आर्य)राहुव्यग्रशान्तिस्वस्ति-उपद्रवनामधारणी	राहु	214a-b
166	210	(आर्य) रोचनानामधारणी	रोचना	242a
167	278	(श्री) लक्ष्मीदेवीधारणी	लक्ष्मी	256b-257a
168	69	(आर्य) लङ्कावतारधारणी	लङ्कावतार	99a-100a
169	101	लोकपालस्य नामधारणी	लोकपाल	109b
170	256	वज्रकत्थननामधारणी	वज्रकत्थन	252a
171	292	वज्रकर्षणपदधारणी	वज्रकर्षण	259b
172	263	वज्रकेतुनामधारणी	वज्रकेतु	252b
173	113	(आर्यश्री) वज्रगान्धारीनामधारणी	वज्रगान्धारी	113a-b
174	77	[1]वज्रगान्धारीनामधारणी	,,	102b-103a
175	136	वज्रचर्चिकानामधारणी	वज्रचर्चिका	124b-125a
176	140	वज्रज्वालानलार्कधारणो	वज्रज्वालानलार्का	127a-b
177	323	वज्रडाकिनीहृदयमालामन्त्रः	वज्रडाकिनी	284b-285b
178	98	वज्रतारानामधारणी	वज्रतारा	109a
179	238	वज्रतारानामधारणी	,,	249a
180	259	वज्रतेजोनामधारणी	वज्रतेजा	252b
181	262	वज्रधर्मनामधारणी	वज्रधर्म	253a
182	255	वज्रधातुमण्डलधारणी	वज्रधातु	251b-252b

1. हयग्रीवकल्पे ।

183	25	वज्रपाणिमहारक्षानामधारणी	वज्रपाणि	59a-b
184	296	वज्रमुण्डाभिपदधारणी	वज्रमुण्डा	260a
185	130	वज्रयोगिनीनामधारणी	वज्रयोगिनी	122a
186	334	वज्रयोगिनीमन्त्रः	,,	290a
187	257	वज्रराजनामधारणी	वज्रराज	252a
188	313	(आर्य) वज्रवाराह्या रहस्यमालामन्त्रः	वज्रवाराही	280b-281a
189	273	वज्रविलासिनीनामधारणी	वज्रविलासिनी	249a
190	195	(आर्य) वज्रविदारणहृदयमन्त्रधारणी विद्याराज्ञीसोमचन्द्रनामधारणी	वज्रविदारिणी	220b-222b
191	150	वज्रविदारणीनामधारणी	,,	144a-145a
192	226	वज्रवीरमहाकालस्य नामधारणी	महाकाल	246b
193	293	वज्रवीरासनपदधारणी	वज्रवीरासन	259b
194	131	(आर्य) वज्रशृङ्खलाधारणी	वज्रशृङ्खला	123a
195	258	वज्रसाध्यनामधारणी	वज्रसाध्य	252a-b
196	261	वज्रहासनामधारणी	वज्रहास	252b
197	126	वज्रह्लेंकारभैरवस्य धारणी	वज्रह्लेंकारभैरव	120a
198	149	[1]वसुधारानामधारणी	वसुधारा	143b-144a
199	134	वसुधाराधारणी	,,	124a-b
200	48	(आर्य) वसुधारानामधारणी	,,	87b-88a
201	13	(आर्य) वसुन्धारानामधारणी	,,	38a-48a
202	207	(आर्य) वाग्वज्रनामतथागतधारणी	वाग्वज्रतथागत	241b
203	194	विपन्नाशकर्मताराहृदयकल्पधारणी	तारा	220b
204	205	(आर्य) विश्वभद्रनामधारणी	विश्वभद्र	241b
205	356	(आर्य) विश्वम्भरानामधारणी	विश्वंभरा	299b
206	217	(आर्य) वुंगमल्ललोकेश्वरनामधारणी	वुंगमल्ल	243a
207	27	(आर्य) वैरोचननामधारणी	वैरोचन	59b
208	289	वैशाखपदधारणी	वज्रपूतना	259b
209	15	व्याधिप्रशमनीधारणी	सिंहनादलोकेश्वर	53a
210	50	शताक्षरनामधारणी	तथागत	88b

1. सम्यग्संबुद्धभाषिता ।

211	76	शाक्यमुनीनां विशेषधारणी	शाक्यमुनि	102b
212	111	(आर्य) षडक्षरीधारणी	बुद्ध	111a-112a
213	20	(आर्य) षडक्षरीमहाविद्यानामधारणी	,,	55a-b
214	232	षड्योगिनीनामधारणी	योगिनी	247b-248a
215	67	(आर्य) षण्मुखीनामधारणी	षण्मुखी	97a-b
216	97	सद्धर्मपाठधारणी	सद्धर्मपुण्डरीका	109a
217	228	सद्धर्मपाठनामधारणी	,,	246b
218	64	(आर्य) सद्धर्मपुण्डरीकाया मन्त्रधारणी	,,	95a-b
219	53	सपनविद्याधारणी		92b
220	297	समन्तभद्रनामधारणी	समन्तभद्र	260a
221	230	समाधियोगाम्बरस्य नामधारणी	योगाम्बर	247a
222	267	समाधियोगाम्बरनामधारणी	,,	254b
223	57	समाधिराजनामधारणी	,,	93b
224	180	[1]सरस्वतीदेवीपरिवर्तोनामधारणी	सरस्वती	210b-212a
225	221	सर्वकालज्ञतानामधारणी	बोधिसत्त्व	244a-246a
226	6	[2]सर्वज्ञताकारधारणी	,,	30a-35a
227	345	[3]सर्वज्वरप्रशमनीधारणी	महाकाल	293b-295a
228	246	सर्वत्राणमन्त्रधारणी	वज्रसत्त्व	250b
229	244	सर्वपापदहननामधारणी	तथागत	250a
230	41	(आर्य) सर्वपापदहननामधारणी	,,	61a
231	295	सर्वपापञ्जयधारणी	,,	260a
232	223	सर्वबुद्धचूडामणिनामधारणी	बुद्ध	246a
233	182	सर्वबुद्धबोधिसत्त्वनामधारणी	,,	213b-214b
234	42	[4]सर्वबुद्धबोधिसत्त्वनामसंधारणी	,,	61a
235	235	[5]सर्वबुद्धभट्टारकनामधारणी	,,	248b
236	36	सर्वमङ्गलनामधारणी	तथागत	60b

1. सुवर्णप्रभासोत्तमे सूत्रेन्द्रराजे ।
2. आर्यश्रीकरुणापुण्डरीकमहायानसूत्रे ।
3. महाकालतन्त्रे ।
4-5 सुवर्णप्रभासोत्तमे सूत्रेन्द्रराजे ।

237	26	[1]सर्वरोगप्रशमनीनामधारणी	,,	59b
238	93	सर्वलोकेश्वरधारणी	लोकेश्वर	108b
239	219	(आर्य) सर्वलोकेश्वरधारणी	,,	244b
240	300	(आर्य) सर्वविघ्नहरणीनामधारणी	विघ्नहरणी	260a-b
241	337	सर्वविषकर्ममन्त्रः	,,	290b
242	17	(आर्य) सहस्रभुजलोकेश्वरधारणी	,,	54a
243	19	(आर्य) सहस्रावर्तानामधारणी	सहस्रावर्ता	55a
244	132	संक्षिप्तद्विभुजहेरुकनामधारणी	हेरुक	123a-b
245	275	संवरनामधारणी	संवर	256a-b
246	45	(आर्य) साहस्रप्रमर्दिनीनामधारणी	साहस्रप्रमर्दिनी	66a-74b
247	135	(आर्य) सितातपत्रापराजितानामधारणी	प्रत्यङ्गिरा	124b
248	88	[2]सिद्धिनिकानामधारणी	सिद्धिनिका	108a
249	106	सिद्धिविघ्नेश्वरधारणी	विघ्नेश्वर	110a
250	225	सिद्धिविघ्नेश्वरनामधारणी	,,	246b
251	270	(आर्य) सुखावतीव्यूहनामधारणी	सुखावती	255a
252	298	(श्री) सूर्यधारणी	सूर्य	260a
253	84	सूर्यरक्षामन्त्रः	,,	105b
254	326	सोपचारनमोसन्मुखाधारणी	लोकनाथ	286a
255	127	[3]हयग्रीवधारणी	हयग्रीव	120b-121a
256	218	(आर्य) हलाहललोकेश्वरनामधारणी	हलाहललोकेश्वर	243a-244a
257	35	हुताशनतेजोनामधारणी	,,	60b
258	251	हुंकारनामधारणी	वज्रधातु	251b
259	243	हुंकारसंभवनामधारणी	,,	249a-250b
260	59	(आर्य) हेमाङ्गनामधारणी	हेमाङ्ग	93b-94a
261	325	हेरुकरक्षामन्त्रः	हेरुक	285b-286a
262	143	हेवज्रनामधारणी	हेवज्र	128a-129a
263	253	ह्लांकारनामधारणो	अमिताभ	251b

1. हेरुकस्य ।
2. आर्यावलोकितेश्वरमुखोत्कीर्णा ।
3. हयग्रीवभैरवस्य धारणी वा ।

अतिरिक्त ग्रन्थों का परिचय

1. ग्रन्थाङ्क 1, **आर्यासप्तशतिका प्रज्ञापारमिता**

पत्र सं० 1-21b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह मिथिला विद्यापीठ, दरभङ्गा से महायानसूत्रसंग्रह, भाग 1 (पृष्ठ 340-349) में प्रकाशित है ।

2. ग्रन्थाङ्क 3, **अभिसमयालङ्कारः**

ग्रन्थकार—मैत्रेयनाथ, **पत्र सं०** 21b-30b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह मिथिला विद्यापीठ, दरभङ्गा से (1) अष्टसाहस्रिका प्रज्ञापारमिता के साथ, (2) बिब्लोथिका बुद्धिका में तिब्बती अनुवाद के साथ तथा (3) के० उ० ति० शि० संस्थान सारनाथ वाराणसी से स्फुटार्था वृत्ति के साथ प्रकाशित है ।

3. ग्रन्थाङ्क 8, **आर्यानित्यतासूत्रम्**

पत्र सं० 35a-36b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः सर्वज्ञाय

एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् श्रावस्त्यां विहरति स्म जेतवनेऽनाथपिण्डदस्यारामे महता भिक्षुसंघेन सार्द्धं त्रयोदशभिर्भिक्षुशतैः । तत्र खलु भगवान् भिक्षूनामन्त्रयते स्म—अनित्या भिक्षवः सर्वसंस्कारा अध्रुवा अनास्वासिका विपरिणामधर्माणः । यद्यावद्भिक्षवः सर्वेभ्यः संस्कारेभ्योऽलं निर्वर्तितुमलं विरक्तमलं विमोक्तुम् ।

अन्त

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥

इदमवोचद्भगवानात्तमनास्ते च भिक्षवः सा च पर्षद् भगवतो भाषितमभ्यनन्दन् ।

पुष्पिका

इत्यार्यानित्यतासूत्रम् ।

विशेष

इस ग्रन्थ में संसार और सांसारिक पदार्थों की अनित्यता का अत्यन्त रोचक विवरण दिया गया है ।

4. ग्रन्थाङ्क 14, **आर्यामोघपाशनामहृदयं महायानसूत्रम्**

पत्र सं० 48a-53b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐनमः श्रीलोकनाथाय अमोघपाशाय भगवते नमः । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् पोतालकपर्वते विहरति स्म, आर्यावलोकितेश्वरस्य भगवन् अनेकसालतालतमालचम्पकाशोकानिमुक्तके नानारत्नवृक्षसमलंकृते महता भिक्षुसंघेन सार्धं····

अन्त

सर्वाशाः परिपूरयति मनःशिलाञ्जनं वा परिजप्य अक्षीण्यञ्जयित्वाऽन्तर्हितो भवति आकाशे क्रामति असंमोहज्ञानव्यूहनामसमाधिं प्रतिलभते । यदिच्छति तत्करोति इति । इदमवोचद् भगवानात्तमना आर्यावलोकितेश्वरो बोधिसत्त्वो महासत्त्वस्ते च शुद्धा वासका देवपुत्राः सदेवासुरमानुषा गन्धर्वाश्च लोको भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यामोघपाशनामहृदयं महायानसूत्रं समाप्तम् ।

विशेष

इसकी महती फलस्तुति प्रारम्भ के 2 पत्रों और अन्त के एक पत्र में की गई है । बीच के 2 पत्रों में मन्त्रात्मक सूत्र हैं ।

'अमोघपाशकल्पराजसूत्र' नाम से एक ग्रन्थ Monumenta Nipponika Vol XVII Page 265-328 में 1962 में छपा है, ऐसी सूचना है । उक्त अंश उसमें है या नहीं, यह अनुसन्धेय है ।

5. ग्रन्थाङ्क 21, **आर्यभद्रचरीमहाप्रणिधानराजः**

पत्र सं० 55b-58b, **पूर्ण** ।

विशेष

1. यह 'आर्यभद्रचरीप्रणिधानगाथा' नाम से **नामग्याल इंस्टीट्यूट आफ तिब्बतोलॉजी, गंगटोक से**, 2. संस्कृत पाठ का क्रिटिकल एडि० जर्मन इंट्रोडक्सन के साथ **ममरीज आफ द फेकेल्टो आफ लिबरल आर्ट एण्ड एजुकेशन** नं० 13, 1962 पेज 1-18 में, तथा 3. गण्डव्यूहसूत्र (बौद्ध ग्रन्थावली, नं० 5) में प्रकाशित है ।

6. ग्रन्थाङ्क 33, **गाथाद्वयम्**

पत्र सं० 60a, **पूर्ण** ।

विशेष

अमोघसिद्धिनामधारणी (ग्रन्थाङ्क 31) तथा सर्वदुर्गतिपरिशोधनधारणी (ग्रन्थाङ्क 32) इन दोनों धारणियों को गाथाद्वय नाम देकर एक पंक्ति में केवल फलस्तुति लिखी गई है ।

7. ग्रन्थाङ्क 62, **प्रणिधानराजः**

ग्रन्थकार मञ्जुघोष, **पत्र सं०** 94b-95a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो बुद्धाय

यावतीः प्रथमाः कोट्यः संसारस्यानुवर्तिताः ।
तावत् सत्त्वहितार्थाय चरिष्याम्यमृताश्वरीम् ॥

अन्त

कायवाक्कर्मविच्चाहं शोधयिष्यामि सर्वशः ।
शोधयिष्यमेनं कर्म कर्तव्येऽस्मिन् शुभंकरम् ॥

पुष्पिका

इति मञ्जुघोषकृतिः प्रणिधानराजः समाप्तः ।

विशेष

केवल छः श्लोक हैं ।

8. ग्रन्थाङ्क 70, **कल्पावदानवाक्यम्**

पत्र सं० 100a-101a, **पूर्ण** ।

विशेष

यह ललितविस्तर के अन्तर्गत "फुसमल्लिकापरिवर्तनाय भाषितं कल्पावदानवाक्यम्" से लिया गया है ।

9. ग्रन्थाङ्क 74, **आर्यवज्रसरस्वतीसाधनम्**

पत्र सं० 102a, **पूर्ण** ।

विशेष

गायकवाड़ ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 340) में प्रकाशित है ।

10. ग्रन्थाङ्क 114, **हेवज्रधारणपूजाविधिः**

पत्र सं० 113b-114b, **पूर्ण** ।

विशेष

गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 479) में प्रकाशित है ।

11. ग्रन्थाङ्क 117, **आर्यमहाप्रतिसरासाधनम्**

पत्र सं० 115a-115b, **पूर्ण** ।

विशेष

गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 397) में प्रकाशित है ।

12. ग्रन्थाङ्क 119, **आर्यमहासाहस्रप्रमर्दिनीसाधनम्**

पत्र सं० 116a, **पूर्ण** ।

विशेष

गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 400) में प्रकाशित है ।

13. ग्रन्थाङ्क 120, **आर्यमहामन्त्रानुसारिणीसाधनम्**

पत्र सं० 116a, **पूर्ण** ।

विशेष

गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 401) में प्रकाशित है ।

14 ग्रन्थाङ्क 122, **पञ्चरक्षामहादेवीसाधनम्**

पत्र सं० 116b-119b, **पूर्ण** ।

विशेष

'पञ्चरक्षाविधानम्' नाम से गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 405-413) में प्रकाशित है ।

15. ग्रन्थाङ्क 123, **हस्तपूजाविधानम्**

पत्र सं० 119b-120a, **पूर्ण** ।

विशेष

गा० ओ० सि० बड़ौदा से साधनमाला (पृ० 498-499) में प्रकाशित है ।

16. ग्रन्थाङ्क 144, **आर्यस्वल्पाक्षरा प्रज्ञापारमिता**

पत्र सं० 129a-130b, **पूर्ण** ।

विशेष

मिथिला विद्यापीठ, दरभङ्गा से महायानसूत्रसंग्रह, भाग 1 (पृ० 93-94) में प्रकाशित है ।

17. ग्रन्थाङ्क 147, **आर्यापरिमितायुर्नाम महायानसूत्रम्**

पत्र सं० 131b-137a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो बुद्धाय । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् श्रावस्त्यां विहरति स्म जेतवने अनाथपिण्डदस्यारामे महता भिक्षुसंघेन सार्द्धमर्द्धत्रयोदशशतभिक्षितैः संबहुलैश्च बोधिसत्त्वैर्महासत्त्वैस्तत्र खलु भगवान् मञ्जुश्रियं कुमारभूतमामन्त्रयते स्म । अस्ति मञ्जुश्रि उपरिष्टायां दिशायामपरिमितगुणसंचयनो नाम लोकधातुः । तत्रापरिमितायुर्ज्ञानसुविनिश्चिततेजो नाम तथागतोऽर्हत् सम्यक्संबुद्ध एतर्हि तिष्ठति ।

अन्त

इदमवोचद् भगवानात्तमनास्ते च भिक्षवस्ते च बोधिसत्त्वाः महासत्त्वाः सा च सर्वावती पर्षत्सदेवमानुषासुरगरुडगन्धर्वश्च लोको भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यापरिमितायुर्नाम महायानसूत्रं समाप्तम् ।

विशेष

इसमें अपरिमितायु से सम्बद्ध कई सूत्र दिये गये हैं और प्रत्येक के लिखने-लिखाने, पूजा करने, धारण करने आदि की पृथक् पृथक् फलस्तुतियाँ भी उनके साथ दी हैं ।
शतपिटक वाल्यूम 244 में भी अमितायुसूत्र नाम से एक ग्रन्थ छपा है, किन्तु वह इससे भिन्न है ।

18. ग्रन्थाङ्क 148, **आर्यसर्वतथागतोष्णीषसितातपत्रानामापराजिता प्रत्यङ्गिरामहाराज्ञी**

पत्र सं० 137b-143b, पूर्ण ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीसर्वबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् देवेषु त्रयस्त्रिंशेषु विहरति स्म, सुधर्मायां देवसभायां महता भिक्षुसंघेन महता च बोधिसत्त्वसंघेन भिक्षुशतैः शक्रेण च देवानामिन्द्रेण सार्धम्, तत्र खलु भगवान् प्रज्ञप्त एवासने निषद्य उष्णीषमवलोकितं नाम समाधिं समापद्यते स्म, समनन्तरसमापन्नस्य भगवत उष्णीषमध्यादिमानि मन्त्रपदानि निश्चरन्ति स्म—

अन्त

बुद्धयोगेन सर्वोपद्रवेषु त्रिजप्ता कर्तव्या। सर्वबुद्धबोधिसत्त्वाश्च सदेवमानुषासुरगरुडकिंनर-महोरगश्च लोको भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यसर्वतथागतोष्णीषसितापत्रानामापराजिता प्रत्यङ्गिरामहाविद्याराज्ञी समाप्ता ।

विशेष

यह अपराजिता प्रत्यङ्गिरा का विशेष मन्त्र है, बीच बीच में फलस्तुति भी है । इसका तीन बार पाठ करने से सभी उपद्रव शान्त होते हैं, ऐसी धारणा है ।

19. ग्रन्थाङ्क 151, **आर्यगणपतिहृदयम्**

पत्र सं० 145a-145b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो भगवत्यै आर्यगणपतिहृदयायै, नमो रत्नत्रयाय । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् राजगृहे विहरति स्म गृध्रकूटपर्वते महता भिक्षुसंघेन सार्धमर्धत्रयोदशभिर्भिक्षुशतैः

सर्वबुद्धैश्च बोधिसत्त्वैश्च बोधिसत्त्वेन महासत्त्वेन । तेन खलु पुनः समयेन भगवान् आयुष्मन्तमानन्दमामन्त्रयते स्म । यः कश्चित् कुलपुत्रानन्द इमानि गणपतिहृदयानि धारयिष्यति वाचयिष्यति पर्यवाप्स्यति प्रवर्तयिष्यति तस्य सर्वकार्याणि सिद्धयन्ति ।

अन्त

स जातौ जातौ जातिस्मरो भविष्यति । इदमवोचद्भगवानात्तमनास्ते च बोधिसत्त्वा महासत्त्वाः सा च पर्षत् सर्वावती सदेवमानुषासुरगरुडगन्धर्वश्च लोको भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यगणपतिहृदयं परिसमाप्तम् ।

विशेष

इसमें गणपति की विशेष साधना एवं उसकी फलस्तुति दी है ।

20. ग्रन्थाङ्क 153, **आर्यपञ्चविंशतिकाप्रज्ञापारमिताहृदयम्**

पत्र सं० 147a-148a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो भगवत्यै प्रज्ञापारमितायै । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् राजगृहे विहरति स्म गृध्रकूटपर्वते महता भिक्षुसंघेन सार्धं महता च बोधिसत्त्वसंघेन । तेन खलु पुनः समयेन भगवान् गम्भीरावभासं नाम धर्मपर्यायं समाधिं समापन्नः ।

अन्त

साधु साधु कुलपुत्र ! एवमेतद् गम्भीरायां प्रज्ञापारमितायां कर्तव्यं यथा त्वयाभिदृष्टं तदनुमोद्य सर्वतथागतैरर्हद्भिः सम्यक्संबुद्धैः । इदमवोचत् भगवानात्तमना.................... भाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यपञ्चविंशतिकाप्रज्ञापारमिताहृदयं समाप्तम् ।

विशेष

इसमें आर्य अवलोकितेश्वर द्वारा शारिपुत्र को उपदेश दिया गया है कि जो प्रज्ञापारमिता चर्या करना चाहे, उसे क्या क्या करना चाहिये ।

21, ग्रन्थाङ्क 160, **महामेघसमाधिवर्षापणम्**

पत्र सं० 172a-176b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो भगवते शाक्यमुनये । नमो....सागरेभ्यः सम्यक्संबुद्धेभ्यः । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् नन्दोपनन्दनागराजभवने विहरति स्म श्रीमणिरत्नगर्भमहामेघमण्डलकूटागारे

महता भिक्षुसंघेन सार्धं महता च बोधिसत्त्वसंघेन सार्धं महता च नागराजगणेन सार्धम् तद्यथा····

अन्त

ॐ भक्ष भक्ष आगच्छ आगच्छ महानागाधिपति सर्वभूर्भुवः हूं हूं फट् स्वाहेति मन्त्रेण पथे क्षीरबलिं दत्त्वा पञ्चोपचारेण पूजयित्वा संतोष्य शताक्षरं पठेत्, क्षमापयित्वा विसर्जयेत् ।

पुष्पिका

इति महामेघसमाधिवर्षापणं समाप्तम् ।

22. ग्रन्थाङ्क 161, **वर्षापणविधिः**

ग्रन्थकार —अभयाकर गुप्त, **पत्र सं०** 176b-177a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीवज्रसत्त्वाय । शून्यतानन्तरं झटिति वस्वादिनागवर्णाष्टदलं तत्कर्णिकायां सूर्यं हूं वज्रगरुडनागभ्रमरकं कृष्णवर्णं दंष्ट्रोत्कटभीषणं चतुर्मुखमष्टभुजं क्रुद्धं षोडशवर्षाकारं भावयेत् ।

अन्त

ॐ भक्ष भक्ष आगच्छ आगच्छ महानागाधिपात सर्वभूर्भुवः हुं हुं स्वाहेति नागबलिमन्त्रं पठेत् क्षीरबलिमधितिष्ठेत् पूर्ववत्पूजां कुर्यात् शताक्षरं पठेत् क्षमापयेदिति ।

पुष्पिका

इति वर्षापणविधिः समाप्ता । कृतिरियं महापण्डित-अभयाकरगुप्तपादानाम् ।

23. ग्रन्थाङ्क 163, **साम्यन्तु(ङ्गः?)विहाराम्नायवर्षापणविधिः**

पत्र सं० 177a-179a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो रत्नत्रयाय । ॐ नमश्चन्द्रवज्रपाणये । बन्ध बन्ध स्वरूपकालरूपिणि स्वाहा । चीवरकर्णिके सप्ते जप्ते जगद्विबन्धः कार्यः पूर्वमेव धर्मभानके कृतरक्षाविधानेन अव्यं नागानां हृदयं नाम इमं वाच इतीतव्यम् ।

अन्त

मैत्री भवतु सर्वसत्त्वेषु अभयं भवतु सर्वतिर्यग्योनिगतानां साम्यन्तु सर्वदुर्गतयः स्वाहा ।

पुष्पिका

समाप्तमिति श्रीसाम्यंतु(गु)विहाराम्नायवर्षापणविधिः ।

विशेष

ग्रन्थ सं० 23-25 वर्षापणविधि के हैं । इन्हें देखने पर ज्ञात होता है कि पूर्व काल में

अवर्षण होने पर इस विधि से वर्षा कराई जाती थी। इन सभी में नागराजों की पूजा का विधान है। संभवतः प्रत्येक विहार की अपनी पृथक् पद्धति थी। विश्रुत विद्वान् अभयाकर गुप्त और साम्यंतु(गु) विहार की 2 पद्धतियों के साथ सामान्य विधि भी यहाँ दी गई है।

24. ग्रन्थाङ्क 169, **गोश्रृङ्गपर्वते स्वयम्भूचैत्यभट्टारकोद्देशः**

पत्र सं० 188b-200b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो धर्मधातवे

सद्धर्मः श्रीमता येन त्रिषु लोकेषु देशितः ।
देवदेवाधिदेवाय तस्मै नमोऽर्कबन्धवे ॥
नत्वा गोश्रृङ्गशैलस्य धर्मधातुं स्वयंभुवम् ।
तदुद्देशमहं वक्ष्ये लोकानां पुण्यवृद्धये ॥

अन्त

श्रोतव्यं मनसा भक्त्या धर्मधातुसमुद्भवम् ।
सर्वपापविनाशार्थं सर्वकामफलप्रदम् ॥
स्वर्गेषु पशुमान् वज्रविड····घृणिभूजलेर्थिभिः ।

पुष्पिका

इति गोश्रृङ्गपर्वते स्वयंभूचैत्यभट्टारकोद्देशे नेपालविषये महाप्रभावो नाम अष्टमः परिच्छेदः समाप्तः ॥

विशेष

इसमें आठ परिच्छेद हैं, जिनमें वर्णित विषय प्रत्येक परिच्छेद की पुष्पिका से स्पष्ट हो जाते हैं—1. धर्मधातु-उत्पन्ननाम, 2. पूजाफलनिर्णयो नाम, 3. उपछन्दोहप्रकाशो नाम, 4. ग्रामनगरनिगमजनपदराष्ट्रराजधान्यप्रवर्तमानो नाम, 5. तीर्थवर्णनो नाम, 6. धर्मधातुवागीश्वरनामसंज्ञावर्तनो नाम, 7. धर्मधातुवागीश्वरगुप्तो नाम, 8. नेपालविषये महाप्रभावो नाम। इसीमें गोश्रृङ्ग पर्वत और साम्यङ्गु विहार की भी महत्ता दर्शाई है।

25. ग्रन्थाङ्क 170, **वसुधारादेवीपूर्वकथाव्रतधर्मनन्दिमुख-अश्वघोषावदानम्**

पत्र सं० 200b-206a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीवसुधारायै

वसुधारां सदा नत्वा दारिद्र्यमवतारणीम् ।
देशयामि मनुष्यार्थं सर्वदुःखप्रमोचनीम् ॥

अन्त

अथ राजपुत्रमेकं जौवराज्ये स्थापयित्वा धर्मदेशनार्थं तेन जोवराजेन सर्वामात्यमण्डले धर्मं प्रकाशयित्वा सुखेनालं भूत्वा तिष्ठति ।

पुष्पिका

इति श्रीवसुधारादेवीपूर्वकथाव्रतधर्मसपूर्णनन्दिमुख-अश्वघोषावदानः परिसमाप्तः ।

विशेष

इसमें वसुधारा देवी के व्रत और पूजा का विधान है । सब प्रकार के दारिद्र्य का शमन करने के लिये इसका अनुष्ठान किया जाता है ।

26. ग्रन्थाङ्क 171, **हालाहलहृदयम्**

पत्र सं० 206a-206b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीआर्यावलोकितेश्वराय । अथ खलु मैत्रेयबोधिसत्त्वो महासत्त्वो भगवन्तं शाक्यमुनिं तथागतमर्हन्तं सम्यक्संबुद्धं प्रणम्यैवमाह—अभिजानाम्यहं रत्नकेतोस्तथागतस्य संमुखे श्रुतमार्यावलोकितेश्वरस्य बोधिसत्त्वस्य महासत्त्वस्य हलाहलं नाम हृदयमन्त्रं तदहं भाषयिष्यामि ।

अन्त

एवं चाहं भगवन्नवलोकितेश्वर पश्चानन्तर्यकारि अपि साधयेत्, यदि न सिध्येत् तदाहमेव पश्चानन्तर्यकारि स्याम् । संवादिताश्च मया बुद्धा भगवन्तः ।

पुष्पिका

इति हालाहलहृदयं समाप्तम् ।

विशेष

हालाहल साधन के कई प्रकार साधनमाला में उपलब्ध हैं, यह उनसे भिन्न है ।

27. ग्रन्थाङ्क 172, **त्रिस्कन्धकम्**

पत्र सं० 206b-208a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः सर्वबुद्धबोधिसत्त्वेभ्यः । समन्वाहरन्तु मां बुद्धा भगवन्तः । अहमेवंनामा बुद्धं भगवन्तं शरणं गच्छामि । धर्मं शरणं गच्छामि । संघं शरणं गच्छामि ।

अन्त

एवं पञ्चत्रिंशत्तथागतनामानि पापशोधनाय पालिपृच्छासूत्रे भगवता आर्यशारिपुत्रमुद्दिश्य बोधिसत्त्वानां सर्वापत्तिविशोधनायोक्तानि ।

पुष्पिका

इति त्रिस्कन्धकं समाप्तम् ।

विशेष

ये रूपादि पाँच स्कन्धों से भिन्न हैं। ये तीन स्कन्ध हैं—वन्दना, प्रायश्चित्त और परिणामना। इसमें 35 तथागतों को प्रणाम करके पापों का परिशोधन करने की व्यवस्था की गई है।

28. ग्रन्थाङ्क 187, **आर्यप्रज्ञापारमिताहृदयम्**

पत्र सं॰ 216a-217a, **पूर्ण** ।

विशेष

यह मिथिला विद्यापीठ, दरभङ्गा से महायानसूत्रसंग्रह, भाग 1 (पृष्ठ 98-99) में प्रकाशित है।

29. ग्रन्थाङ्क 201, **आर्यसर्वदुर्गतिपरिशोधनराजस्य कल्पदेशः**

पत्र सं॰ 226b-230b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीवज्रसत्त्वाय। ॐ नमो भगवते सर्वदुर्गतिपरिशोधनराजाय ॐ वज्राधिष्ठान-समय हूँ। ॐ धय धय सर्वपापविशोधनी हूँ सर्वकर्मावरणविशुद्धि स्वाहा।

अन्त

ॐ वज्राभिषिकमिति। इदमवोचद् भगवानात्तमना ते सशक्रब्रह्मादिदेवमानुषासुर-गन्धर्वयक्षराक्षसादिभिर्लोको भगवतो भाषितमभ्यनन्दन्निति।

पुष्पिका

आर्यसर्वदुर्गतिपरिशोधनराजस्य तथागतस्यार्हतः सम्यक्संबुद्धस्य कल्पदेशः समाप्तः।

विशेष

आर्यसर्वदुर्गतिपरिशोधन तन्त्र मोतीलाल बनारसीदास–दिल्ली, से रोमन लिपि में प्रकाशित है, किन्तु उसमें ठीक इसी रूप में यह अंश नहीं मिलता। प्रतीत होता है पूरे प्रकरण का सार एकत्र कर यह प्रयोगात्मक रूप बनाया गया है। इससे मिलता-जुलता विषय उक्त ग्रन्थ के पृष्ठ 126 से 130 तक दीखता है, पर आनुपूर्वी नहीं मिलती।

30. ग्रन्थाङ्क 202, **मञ्जुश्रीज्ञानसत्त्वस्य परमार्था नामसंगीतिः**

पत्र सं॰ 230b-240b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह बौद्ध परम्परा में सर्वाधिक मान्य ग्रन्थ है। अनेक टीका-उपटीकाओं से उपबृंहित इसका विशाल साहित्य प्राचीनकाल से ही उपलब्ध है। इसके कई संस्करण प्रकाशित हैं। इसके विशेष परिचय के लिये 'धीः' प्रथम अंक, पृ॰ 220 से 228 द्रष्टव्य हैं।

31 ग्रन्थाङ्क 203, **तथागतषोडशाक्षरनिरञ्जनतत्त्वम्**

पत्र सं० 240b-241b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीवज्रसत्त्वाय । वज्रसत्त्व उवाच—निरञ्जन निराकार शून्याशून्यमहाशून्य निरालम्ब निराकार····

अन्त

वायुदेव महाबल एते तथागताद्याः संस्थिरा भवन्तु अवन्तु पृथिवीमण्डलमवन्तु वज्रकवचं वज्रमवतु सः ।

पुष्पिका

इति श्रीवज्रसत्त्वकायसर्वतथागतषोडशाक्षरनिरञ्जनतत्त्वं समाप्तम् ।

विशेष

इसमें वज्रकाय की प्राप्ति के लिये तथागत की आराधना की गई है ।

32. ग्रन्थाङ्क 264, **वज्रधातुमहामण्डलपूजाविधानम्**

पत्र सं० 253a, **पूर्ण** ।

"ॐ वज्रहेतुमहामण्डले वज्रचक्रमहायाने सुप्रतनवज्राङ्गे वज्रमण्डल नमोस्तु ते । ॐ ततो वायुपद्मेषु मैत्रेयामोघदर्शनम् अपायनहशोकनिघातं नमस्ते अक्षोभ्यदर्शनं दक्षिणस्यासराजेषु गन्धहस्तिसुरंगमगगणगञ्जनज्ञकेतुरत्नसंभवसमास्तथा ।"

पुष्पिका

इति वज्रधातुमहामण्डलपूजाविधानं समाप्तम् ।

विशेष

केवल एक ही मन्त्र है ।

33. ग्रन्थाङ्क 303, **षोडशभुजमहाकालसाधनम्**

पत्र सं० 265a-266b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह गा० ओ० सि० बड़ोदा से साधनमाला (पृ० 597-599) में प्रकाशित है ।

34. ग्रन्थाङ्क 305, **तत्त्वज्ञानसंसिद्धिः**

ग्रन्थकार—शून्यसमाधिपाद, **पत्र सं०** 266B-269B, **पूर्ण** ।

पुष्पिका

समाप्तोऽयं तत्त्वज्ञानसंसिद्धिर्नाम स्वाधिष्ठानश्चेति । कृतिरियमाचार्यमञ्जुघोषाधिष्ठितार्य-श्रीभद्रपादपङ्कजपरागप्रणयिनां पण्डितश्रीशून्यसमाधिपादानामिति ।

विशेष

यह ग्रन्थ महासुखप्रकाशिका टीका सहित धर्मोदय सभा काठमांडू नेपाल, से प्रकाशित है। पुष्पिका का उक्त अंश प्रकाशित ग्रन्थ में नहीं है।

35. ग्रन्थाङ्क 315, **चण्डमहारोषणमन्त्रतन्त्रान्तपटल:**

पत्र सं० 281a-282a, **पूर्ण।**

प्रारम्भ

ॐ नमश्चण्डमहारोषणाय। अथातः संप्रवक्ष्यामि सर्वमन्त्रसमुच्चयम्। अथ भगवान् सर्वमारपराजयं नाम समाधिं समापद्येदं मन्त्रसमुच्चयमाह।

अन्त

छिन्धि छिन्धि भिन्धि भिन्धि मारय मारय तापय तापय शोषय शोषय छेदय छेदय भेदय भेदय दुष्टविरूढचित्तकान् भस्मीकुरु भस्मीकुरु हुं हुं फट् स्वाहा।

पुष्पिका

इति चण्डमहारोषणमन्त्रतन्त्रान्तपटल: समाप्त:।

विशेष

इसमें चण्डमहारोषण के 10 प्रकार के मन्त्र दिये हैं। अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी, न्यू हैवन कनेक्टिकट से रोमन लिपि में प्रकाशित ग्रंथ में यह पंचम पटल है।

36. ग्रन्थाङ्क 316, **एकलवीरसमाधिहृदयम्**

पत्र सं० 282a-282b, **पूर्ण।**

प्रारम्भ

नम एकलवीराय श्रीमत्पञ्चारविन्दाय सर्वसत्त्वोपकारिणे नमो विघ्नापहारकाय त्रि-एक-मुक्तोपकारिणे देवखड्गाय····

अन्त

ॐ चामुण्डे अजितेऽपराजिते हुं हुं हुं रम रम स्वाहा।

पुष्पिका

इति श्रीएकलवीरसमाधिहृदयं समाप्तम्।

37. ग्रन्थाङ्क 321, **आर्यभृकुटी-आराधनम्**

पत्र सं० 283b-284b, **पूर्ण।**

प्रारम्भ

ॐ नमो आर्यभृकुटीतारायै। पूर्वोक्तविधानेन स्वहृद्बिन्दुमध्ये बीजषष्ठमनेन पूरितं शून्यवतोक्त्वान्त: मध्येन्दुना शिरसि भूषितं····

अन्त

शेषा वज्ररक्षणा। इयं भृकुटीमुद्रा, पश्चात् मन्त्रं जपेत्। ॐ भृ० स्वाहा।

पुष्पिका

इत्यार्यताराभृकुटी-आराधनं समाप्तम्।

38. ग्रन्थाङ्क 322, **चक्रसंवरतन्त्रोक्तपटलहृदयम्**

पत्र सं० 284a-284b, **पूर्ण**।

प्रारम्भ

नमो हेरुकाय। एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तयोगिनी-भगेषु विजहारेति।

अथातो रहस्यं वक्ष्ये मन्त्रजापस्य लक्षणम्।
मण्डलं वर्जयेत् पूर्वं पश्चाद् देवतात्मकम्॥

अन्त

विहारे मण्डपे स्थाने वर्जयेन्मण्डलं वरम्।
जप्यमा[ना]यां सदा योगसिद्धिर्भवति····॥

पुष्पिका

इति श्रीचक्रसंवरतन्त्रान्तपटलहृदयं समाप्तम्।

39. ग्रन्थाङ्क 339, **आर्यताराकल्पदेशः**

पत्र सं० 290B-292A, **पूर्ण**।

प्रारम्भ

नमो रत्नत्रयाय। नमः श्रीमदार्यावलोकितेश्वराय बोधिसत्त्वाय महासत्त्वाय महाकारुणिकाय। नमस्तारायै। ॐ तारे तारये हुं हुं हुं समयस्थिते भर भर····

अन्त

तदिदानीं प्रचलत्पदमात्रेण सिद्ध्यति सर्वकार्यं च साधयति।

पुष्पिका

लब्धममिताभगर्भमन्त्रभगवत्यार्यताराया: कल्पदेशः समाप्तः।

40. ग्रन्थाङ्क 342, **कुरुकुल्लाहृदयकवचम्**

पत्र सं० 292a, **पूर्ण**।

प्रारम्भ

नमः कुरुकुल्लायै। श्वेते हुं फट् शिरसि, श्वेते जटिनि स्वाहा शिखायां रत्नामिताभ····

अन्त

ॐ आः हुं आः हुं इति त्र्यक्षरेणान्वितं वै तदधिष्ठानमधिष्ठानान्मन्त्रसिद्धिरिति ।

पुष्पिका

इति कुरुकुल्लाहृदयमन्त्रकवचं समाप्तम् ।

41. ग्रन्थाङ्क 344, **आर्यप्रज्ञापारमिता त्रिदेवताहृदयसमुच्चयम्**

पत्र सं० 292b-293b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमो रत्नत्रयाय । ॐ प्रज्ञे प्रज्ञे महाप्रज्ञे स्वाहा । ॐ गते गते पारसंगते बोधि स्वाहा । नमः सप्तानां सम्यक्संबुद्धकोटीनां····

अन्त

सर्वसिद्धिं मे प्रयच्छ सर्वकर्मसु मे चित्तं श्रियं कुरु हुं ह ह ह ह हो भगवन् वज्रहेरुक मा मे मुञ्च हेरुक महासमयसत्त्व आः हुं फट् ।

पुष्पिका

आर्यप्रज्ञापारमितात्रिदेवताहृदयसमुच्चयं समाप्तम् ।

42. ग्रन्थाङ्क 347 **तथागतशताक्षरमन्त्रः**

पत्र सं० 295a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

नमस्त्रैयधि(ध्वि)कानां तथागतानां सर्वत्राप्रतिहता या त्रिधर्मता····

अन्त

गगणमहाबलरक्षणज्वलनमागरे स्वाहा ।

पुष्पिका

इति तथागतशताक्षरमन्त्रः समाप्तः ।

विशेष

चार पंक्ति का एक ही मन्त्र है ।

43. ग्रन्थाङ्क 349, **आर्यश्रीवज्रवीरमहाकालतन्त्रोक्तहृदयम्**

पत्र सं० 295b-297b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीमद्वज्रमहाकालाय । एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् देवीनां भगेषु यथानर्थं तथा विजहारेति । देव्याह—भगवांस्तु येषु प्रतिमान् सत्त्वांस्तेषां किमुपायं कर्तव्यं देव येन हि मोदयन्ति तत्त्वं प्रचारय भगवानाह····

अन्त

इदमवोचद् भगवान् महाकालस्तन्त्रमन्त्रधारिणीभाषितमभ्यनन्दन्निति ।

पुष्पिका

आर्यश्रीवज्रमहाकालतन्त्रोक्तहृदयं समाप्तम् ।

विशेष

इसमें महाकाल के विविध स्वरूपों के भिन्न भिन्न मन्त्र हैं तथा पृथक् पृथक् कार्यों के लिये भी पृथक् मन्त्र हैं ।

44. ग्रन्थाङ्क 359 **आर्यग्रहमातृकाहृदयम्**

पत्र सं० 302b-303a, **पूर्ण** ।

विशेष

12 पंक्तियों में एक ही मन्त्र है ।

45. ग्रन्थाङ्क 361, **हस्तपूजाविधिः**

पत्र सं० 303a-303b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह गा० ओ० सि० बड़ोदा से साधनमाला (पृ० 498-499) में प्रकाशित है ।

46. ग्रन्थाङ्क 362, **सिद्धैकलवीराक्षोभ्यश्रीचण्डमहारोषणसाधनम्**

पत्र सं० 303b-305a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

अथात ऋजुवृत्तो तन्त्रराजराजेश्वरश्रोलश्रीएकलवीरनिर्गततन्त्रश्रीचण्डमहारोषणम् । प्रथमं तावन्मन्त्री ध्यानाय एकवृक्षे श्मशाने वा····

अन्त

संपूर्णहृष्टचित्तेन रागारागादिवर्जितः ।
अक्षोभ्यमुद्रा ते सर्वे तस्मादक्षोभ्यमौलिताम् ॥

पुष्पिका

इति सिद्धैकलवीराक्षोभ्यश्रोचण्डरोषणसाधनं समाप्तम् ।

47. ग्रन्थाङ्क 363, **सहजाभिलाषं नामाभिसमयः**

ग्रन्थकार बोधिमहाबन्धुदत्तकोक । **पत्र सं०** 305a-309a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

अथातः प्रणम्य वज्रधरे श्रीमौलिन उद्यम्य कथ्यते मन्त्रपदसारसंग्रहं नानाचित्तभेदनिगदित-

मन्त्रयन्त्रार्थं यत् किञ्चैकवीरनिर्गतसारसंग्रहं च यथा अग्निना दह्यते काष्ठं भिद्यते गिरि-र्हेमेन यथा श्रीः तपते गात्रं तद्वदेकल्लवीरस्य साधनम् ।

अन्त

करोति सर्वंकर्माणि अचलवीरप्रसादतः ।
भावितात्मकस्वरूपेण राजवत् यद् भुवि ॥ हुं फट् ।

पुष्पिका

इति सिद्धैकवीरप्रतिभेदान्तरसहजाभिलाषं नामाभिसमयः समाप्तः । अचलाभिसमय-प्रसिद्धः । कृतिरियं बोधिमहाबन्धुदत्तकोकपादानामिति ।

48. ग्रन्थाङ्क 365, **भगवतीरत्नसञ्चयगुणगाथा**

पत्र सं० 309a-324b, **पूर्ण** ।

विशेष

यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और प्राचीन ग्रन्थ है। मिथिला विद्यापीठ, दरभङ्गा से महायान-सूत्रसंग्रह, भाग 1 (पृ० 352-397) में प्रकाशित है। इसका विवरण 'धीः' प्रथम अंक (पृ० 43-44) में आ चुका है।

49. ग्रन्थाङ्क 366, **चक्रसंवरसाधनम्**

पत्र सं० 324b-325b, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

ॐ नमः श्रीचक्रसंवराय । ॐ नमः श्रीवज्रधराय ।
श्रीपद्मभृद्द्विपमहोग्रग्रहाग्रमूर्ति संवर्तकालनवलीसकान्तिम् ।
वक्त्रत्रयं कुलिशखड्गधरं सकर्तिश्चक्राब्जकर्पलभृतं मनसा नमामि ॥

अन्त

तर्जय तर्जय आकर्ष आकर्ष ॐ ह्रां ह्रां ज्ञां ज्ञां यं यं ह्रीं ह्रीं हं, हं, हें हें किलि किलि मिलि मिलि झिलि झिलि हुं हुं फट् स्वाहा ।

पुष्पिका

इति श्रीचक्रसंवरविवृतौ तन्त्रे श्रीचक्रसंवरसाधनं समाप्तम् ।

50. ग्रन्थाङ्क 367, **अभिसमयनिर्देशः**

पत्र सं० 325b-326b **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

एवं मया श्रुतमेकस्मिन् समये भगवान् सर्वतथागतकायवाक्चित्तवज्रयोगिनीभगेषु विजहार । आर्यानन्दप्रभृतिवीतरागप्रमुखैः । आर्यावलोकितेश्वरोऽशीतियोगीश्वरमध्ये वज्रपाणि व्यवलोक्य तस्मिन्········कोऽब्रवीत् ।

अन्त

पूर्णा सेवा यदा काले मौनं तत्र प्रकारयेत् ।
साधयन् मन्त्रसामर्थ्यं.......................... ॥

पुष्पिका

अभिसमयनिर्देशपटल एकादशमः समाप्तः ।

51. ग्रन्थाङ्क 370, **बुद्धगण्डी**

ग्रन्थकार अश्वघोष । **पत्र सं०** 328a-330a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

पूर्वं [वै] बोधिमूले दिगयनपथे मारगान्नृत्यगीतान्
गंगौ गंगौ गगंगौ घघनघन पृथुद्वन्द्वमन्त्रैरजस्रैः ।
यामेभिर्दिव्यरूपैरुपरतुरभितुं...............................
क्षोभं नैवानुयातः सुरनरनमितः पातु वः शाक्यसिंहः ॥ 1 ॥

अन्त

पीनोत्तुङ्गस्तनीनां हरिणदृशदृशां हंसलीलागतीनां
दं दं दं दं ददं दं तनि तनि तनितस्तालिका कामिनीनाम् ।
तुं तुं तुं तुं तुतुं तुं तनुकटिमभितो गीततो गीतवाद्यैः
टुं टुं टुं टुं टुटुं टुं टुमिति मितनता हन्यते गण्डिकेयम् ॥ 32 ॥

पुष्पिका

इति बुद्धगण्डी समाप्ता । कृतिरियमाचार्यश्री-अश्वघोषपादानाम् ।

52. ग्रन्थाङ्क 371, **धर्मगण्डी**

ग्रन्थकार मयूरकवि । **पत्र सं०** 330a-332a, **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

उच्चैः शैलाग्रदेशे प्रसवसुखरसंभाग आसीदधस्ताद्
व्याघ्रीं दृष्ट्वा बुभुक्षाक्षुभितसकलदिक्क्षामलोलाक्षियुग्माम् ।
यः कारुण्यादसूनां निजतनुमददादात्ममन्त्रानुसिद्ध्यै
तस्य त्रैलोक्यबन्धोः स्मरबलजयिनो वाद्यते धर्मगण्डी ॥ 1 ॥

अन्त

अहं मयूरः कविराजसूनुः काव्यं करोमीति किमत्र चित्रम् ।
विहाय [सर्वं] च करीन् सभाजयन् तृणानि किं खादति सिंहपोतः ॥ 35 ॥

पुष्पिका

इति धर्मगण्डी समाप्ता । कृतिरियं मयूरस्य महाकवेः ।

53. ग्रन्थाङ्क 372, **गण्डीस्तवः**

ग्रन्थकार आर्यदेवपाद । **पत्र सं॰** 332a-334b. **पूर्ण** ।

प्रारम्भ

आपातालान्तदेवाः सुरनरगरुडा दैत्यगन्धर्वयक्षाः
सिद्धा विद्याधराद्या जलधितटगता नागसत्त्वाः समग्राः ।
गण्डीशब्दं समन्ताद् रभसितमनसः स्वासनेऽस्मिन् प्रसन्नाः
श्रोतुं····रधीरा विमलगुणगणस्यास्य त्रैलोक्यबन्धोः ॥ 1 ॥

अन्त

मारैर्नानाप्रकारैरसिपरशुधनुर्बाणहस्तैर्ज्वलद्भिर्-
भीमास्यैर्दुष्टदंष्ट्रैर्गजभुजगमुखैः सिंहवक्त्रैः श्ववक्त्रैः ।
प्रत्यञ्चेनोनमस्य क्षणमपि शमितस्तस्य बुद्धस्य पादौ
गन्तुं लोकोऽपि सर्वो ध्रुवमिति गतभीः चैषु गण्डी निनाद्या ॥ 34 ॥

पुष्पिका

इति गण्डीस्तवः समाप्तः । कृतिरियमाचार्य-आर्यदेवपादानाम् ।

अतिरिक्त

बुद्धं नमामि सततं वरपद्मपाणिं नैरात्मकं गगणगं च समन्तभद्रम् ।
यक्षाधिपेन रहितोद्यतमञ्जुघोषं विष्कम्भिणमिति तनुं च नमामि भव्यम् ॥
कारुण्याम्भःप्रतिष्ठं प्रणिधिविषरुहं वीरसम्भारदण्डं
शीलन्धारादि पत्रं शमथमनुदलं वज्रधीः केशराग्रम् ।
* ···
···

इति संवत् 1951 साल मिति आश्विन वदि ५ रोज शुभम् ।

---

* फोटो प्रति में पाठ्य नहीं है ।

4. स्तोत्रसंग्रह

प्रस्तुत अङ्क में निम्नांकित तीन संग्रहों में संगृहीत स्तोत्रों का विवरण दिया जा रहा है—

1. बौद्धस्तोत्रसंग्रह
2. नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह
3. धारण्यादिसंग्रह

1. बौद्धस्तोत्रसंग्रह

इसकी मूल प्रति राष्ट्रीय अभिलेखागार काठमांडू नेपाल में है, जिसकी फोटो प्रति केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षासंस्थान, वाराणसी के ग्रन्थालय से उपलब्ध हुई है। इसका विवरण इस प्रकार है—

ग्रन्थ बौद्धस्तोत्रसंग्रह
ग्रन्थकार जयप्रतापमल्ल आदि
ल० सं० 4-1033, **वि० सं०** 651, **फोटो प्रति सं०** 5070
पत्र सं० ठ्यासफू*, **फोटो प्रति पत्र सं०** 58
पंक्ति सं० प्रति पत्र 6, **अक्षर सं० प्रतिपंक्ति** 32
लिपि नेवारी, **आधार** – नेपाली कागज
आकार 21½ × 8½ से. मी.
अपूर्ण

इस ग्रन्थ में 37 स्तोत्र हैं। प्रतीत होता है ठ्यासफू के पत्र जीर्ण होने से टूट कर नष्ट हो गये हैं। जितना अंश उपलब्ध हुआ है, उसी की यह फोटो कापी है। इसीलिये बीच-बीच में पत्र न होने से 4 स्तोत्र खंडित हैं और अन्त में विशेष पुष्पिका, लिपिकार का परिचय, मिति आदि उपलब्ध नहीं हैं।

स्तोत्रों में कुछ अर्वाचीन स्तोत्र भी हैं।

---

* 'ठ्यासफू' नेवारी भाषा का शब्द है। पुस्तक लिखने के लिये हाथ से बने कागज को इच्छित आकार में मोड़ लिया जाता है, किन्तु पत्र अलग अलग नहीं किये जाते। इस प्रकार प्रत्येक पत्र के एक ओर ही लिखा जाता है। जब पूरी लम्बाई में (10.20.50 जितने पत्रों में उसे मोड़ा गया हो) लिखा जाय तभी दूसरी ओर से लिखा जा सकता है। देखने में इसके पत्र अलग-अलग प्रतीत होते हैं, पर खोलने पर वह कुण्डली की तरह एक ही लम्बाकार खुलता है। पत्र के एक ओर लिखी सामग्री का सम्बन्ध उसके नीचे के पत्र से होता है, पीठ पर लिखे से नहीं, इसको ठ्यासफू कहते हैं।

2. नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह

ग्रन्थ नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह
ग्रन्थकार सर्वज्ञमित्र आदि
ल० सं० 4-2089, **वि० सं०** 630, **फोटो प्रति सं०** 5071
पत्र० सं० ठ्यासफू, **फोटो प्रति पत्र सं०** 129
पंक्ति सं० 5 **अक्षर सं०** 34
लिपि नेवारी, **आधार** नेपाली कागज
आकार 23 × 8 से.मी.
अपूर्ण

इसकी मूल प्रति भी राष्ट्रीय अभिलेखागार काठमाण्डू नेपाल में है, जिसकी फोटो प्रति के० उ० ति० शि० संस्थान, वाराणसी के ग्रन्थालय से उपलब्ध हुई है।

इस संग्रह में 55 स्तोत्र हैं। नामसंगीति दो बार (पत्र 1-24 तथा 65-82) लिखा गया है। सर्वप्रथम नामसंगीति से प्रारम्भ होने से इसका नाम नामसंगीतिस्तोत्रसंग्रह रखा है। इसमें प्राचीन और अर्वाचीन दोनों प्रकार के स्तोत्र हैं। कुछ विशेष रागों में गेय भी हैं, जिनके प्रारम्भ में ही राग का नाम दे दिया गया है।

3. धारण्यादिसंग्रह

इसका परिचय दुर्लभ ग्रन्थ परिचय (1) में दिया जा चुका है। इसमें बीच-बीच में स्तोत्र भी दिये हैं, जिनकी संख्या 49 हैं। ये सभी प्राचीन स्तोत्र हैं। ग्रन्थ में ये एक क्रम से न होकर व्यवधान पूर्वक लिखे गये हैं। इसलिये यहाँ प्रत्येक स्तोत्र का ग्रन्थाङ्क (अर्थात् मूलसंग्रह में ग्रन्थ जिस संख्या में उपलब्ध है) भी दिया जा रहा है।

प्रस्तुत संग्रहों को स्तोत्रानुक्रमणी

●

1. बौद्ध स्तोत्र संग्रह

क्रमांक	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
1	लोकपालस्तोत्रम्	10	लोकपाल			1-2	आरम्भ का अंश नहीं है।
2	जगन्मोहनस्तोत्रम्	10	बुद्ध	जयप्रताप मल्ल	वन्दे त्वामाद्य-	3-4	
3	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	9	अवलोकितेश्वर	चन्द्रिका भिक्षुणी	भुवनत्रयवन्दित	5-6	
4	भीमसेनस्तवः	16	भीमसेन		भज पवनज-	6-9	राग यमन में गेय।
5	अम्बुधारास्तवः	9	शाक्यमुनि		विश्वमिदं	9-10	
6	धर्मधातुगीतस्तोत्रम्	16	बुद्ध		दारिद्र्यपङ्क-	10-11	
7	नरकोद्धारस्तोत्रम्	7	”		असुरसुर-	12	राग मल्लार में गेय।
8	मणिकमालास्तोत्रम्	15	अवलोकितेश्वर		सर्वं बुद्धं मणिक-	12-14	
9	आर्यावलोकितेश्वरस्वरूपस्तोत्रम्	6	”		पद्मनाभ शुभ-	15	
10	लोकपालस्तवः	11	लोकपाल		पूर्वदिशं	15-16	राग मल्लार में गेय।
11	आर्यावलोकितेश्वरवन्दनास्तवः	12	अवलोकितेश्वर		आराधिताय	17-18	
12	शाक्यमुनिवन्दना	12	शाक्यमुनि		दुर्लभश्री-	18-20	
13	मुक्तिमालास्तवः	12	अवलोकितेश्वर		नमामि लोके-	20-21	
14	आर्यावलोकितेश्वरस्तवः	11	”		प्रणम्य नाथं	21-22	
15	स्वकरास्तवः	9	”		सर्वसुरासुर-	22-23	
16	अवलोकितेश्वराष्टकम्	9	”		स्तुत्वा गुण्यं	23-25	
17	लोकनाथस्तवः	19	लोकनाथ		नौमि चरण	25-26	पुष्पिका नहीं है।
18	अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	6	अवलोकितेश्वर	वासुकि नाग	जटाधरं सौम्य	26-27	

क्रमांक	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
19	वज्रमहाकालस्तोत्रम्		महाकालः			27	बीच के पत्र खंडित हैं। आरंभ का अंश नहीं है।
20	बुद्धधर्मसंघस्तोत्रम्	12	वुंगमेश्वरबुद्धः		मञ्जुश्रीलोक-	28-30	
21	मगरायस्तवः	6	बुद्धः		कायोत्तर	30-31	
22	करुणास्तवः	22	अवलोकितेश्वरः		श्रीधर्मधातु	31-33	
23	बुद्धगीतिस्तवः	12	बुद्धः		अन्तिमं श्री	34-35	
24	रत्नमालास्तोत्रम्	27	अवलोकितेश्वरः		इन्द्रादिदेव-	35-38	अपूर्ण है।
25	बुद्धधर्मसंघस्तोत्रम्	20	बुद्धः		कल्पादिके	38-41	
26	वज्रमहाकालस्तोत्रम्	4	महाकालः		अपघन	41-42	फोटो लेने में पत्र अव्यवस्थित होने से अपूर्ण है।
27	मञ्जुबोधस्तोत्रम्	4	मञ्जुबोधः		मञ्जुश्रीलोक	42	
28	पञ्चतथागतस्तोत्रम्	6	तथागतः		मध्यगतवि-	43	
29	भीमसेननामस्तोत्रम्	2	भीमसेनः		भीमसेनो	43	अपूर्ण है, आगे के पत्र नहीं हैं।
30	स्वयम्भूभट्टारकस्तोत्रम्	3	स्वयम्भूः	जयप्रताप-मल्लदेवः		44	प्रारम्भ का अंश नहीं है।
31	त्रिगुणात्मकार्यावलोकितेश्वरस्तो०	11	अवलोकितेश्वरः	,,	विश्वविभूषण	44-47	
32	अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	19	,,		स्तुत्वापरं	47-50	
33	धर्मधातुगीतस्तवः	13	लोकनाथः		सर्वसूल-	50-51	
34	बुद्धगीतस्तोत्रम्	25	बुद्धः		आदिगुरुं	51-53	राग यमन में गेय।
35	मञ्जुश्रीनमस्कारस्तोत्रम्	9	मञ्जुश्रीः		श्रीमञ्जुनाथ-	54-55	
36	मणिकमालास्तोत्रम्	15	अवलोकितेश्वरः		दानवराजि-	55-57	
37	धर्मधातुगीतम्	13	बुद्धः		सिद्धिर्मणि-	57-58	
38	बुद्धहरिहरस्तोत्रम्	8	,,		बुद्धहरिहर-	59	

2. नामसङ्गीतिस्तोत्रसंग्रहः

क्रमांक	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
39	नामसङ्गीतिः	167	मञ्जुश्रीनामसंगीतिः		अथ वज्रधरः	1-24	
40	स्रग्धरास्तोत्रम्	37	तारा	सर्वज्ञमित्रः	बालार्कालोक-	24-32	
41	मञ्जुघोषस्तोत्रम्	1	मञ्जुघोषः	विश्वकर्मा	शमधर-	32	
42	गणपतिस्तोत्रम्	1	गणपतिः		गणाधीशं	32	
43	भीमराजस्तोत्रम्	12	भीमसेनः		नमोस्तु श्री-	33-35	
44	वज्रमहाकालस्तोत्रम्	9	महाकालः	आचार्यनागार्जुनः	हाहाहांकार-	35-37	
45	अष्टमङ्गलस्तवः	8	बुद्धः		मञ्जुश्रीचक्र-	37-39	
46	बुद्धगीतम्	7	,,		अतसिकुसुम-	39-40	राग मलार में गेय।
47	मञ्जुनाथस्तोत्रम्	4	मञ्जुघोषः		श्रीमञ्जुनाथ-	40	आगे पत्र खंडित हैं।
48	पञ्चतथागतस्तोत्रम्	3	तथागतः			41	प्रारम्भ का अंश नहीं है।
49	यमराजस्तोत्रम्		अवलोकितेश्वरः	यमराजः	नमस्तेऽव-	41-42	गद्य है।
50	सप्तबुद्धस्तवः	9	सप्तबुद्धाः		उत्पन्नो बन्धु-	42-44	
51	शाक्यमुनिचैत्यवन्दनास्तोत्रम्	13	शाक्यमुनिः		उक्तिगम्भीर-	44-46	
52	जगन्मोहनस्तोत्रम्	10	विद्याधरी	जयप्रतापमल्लः	वन्दे त्वामानन्द	46-47	राग ललित में गेय।
53	नरकोद्धारस्तोत्रम्	15	बुद्धः		दारिद्र्यक्लेश-	47-49	
54	कायूत्तरस्तोत्रम्	4	लोकनाथः		कायूत्तरचेत-	49	पंचम राग में गेय।
55	षट्पारमितास्तोत्रम्	6	षट्पारमिता		दानवरे नः	49-50	
56	वज्रसत्त्वस्तोत्रम्	6	वज्रसत्त्वः		अज्ञानकाल-	50-51	
57	अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	6	अवलोकितेश्वरः	वासुकिनागः	जटाधरं	51-52	
58	विघ्नेश्वरस्तुतिः	9	विघ्नेश्वरः		सिन्दूरारुण-	52-53	
59	अवलोकितेश्वरस्तुतिः	4	अवलोकितेश्वरः		सौम्यसुबुद्धि-	53	राग भास में गेय।
60	बुद्धगीतम्	8	बुद्धः		कमलकुलिश-	53-54	राग ललित में गेय।

क्रमांक	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
61	भीमराजस्तुतिः	6	भीमसेनः		रक्तवर्णं महा-	54·55	
62	भीमसेनोत्पत्तिस्तवः		,,		लक्ष चन ?	55·56	दण्डक प्रतीत होता है।
63	भीमसेनस्तोत्रम्	40	,,		भीमसेनो महा-	56·60	ब्रह्मजावरभैरवहर्षकुमारसंवादे
64	वज्रयोगिनीस्तोत्रम्	9	तारा		जगतजननि	60·62	
65	अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	6	अवलोकितेश्वरः	अनन्तनागः	कामुनिपर्वत-	62	
66	पञ्चाक्षरस्तुतिः	6	बुद्धः		न लोको न	62·63	
67	वैरोचनधारणी	1	वैरोचनः		नमो भग-	63	
68	अक्षोभ्यधारणी	1	अक्षोभ्यः		नमो भग-	63	
69	पञ्चबुद्धस्तोत्रम्	12	पञ्चबुद्धाः		मोक्षद्वार-	63-65	
70	नामसङ्गीतिः	167	मञ्जुश्रीनामसंगीतिः		अथ वज्रधरः	65·82	
71	दशवरास्तवः	25	अवलोकितेश्वरः	राजा हर्षदेवः	श्रुतमधिगत-	83·86	
72	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	24	,,	चरपटिपा	देवमनुष्या-	86-89	
73	आर्यावलोकितेश्वररूपस्तोत्रम्	24	,,		सर्वत्र तं	89·92	
74	करुणास्तवः	25	,,		स्तुत्वा प्रणम्य	92-96	
75	शाक्यमुनिस्तोत्रम्	9	शाक्यमुनिः	यशोधरा	स्रग्वी निरमृदु-	96-97	
76	बुद्धगीतस्तोत्रम्	13	बुद्धः		उक्तिमंशी-	97-98	
77	शारदास्तोत्रम्	8	शारदा		इन्द्रादिदेव-	98-100	
78	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	9	अवलोकितेश्वरः	चन्द्रकान्ता भिक्षुणी	भुवनत्रय-	100-101	
79	धर्मधातुगीतम्	12	बुद्धः		सिद्धिमुनिवर-	101-102	राग ललित में गेय।
80	पञ्चबुद्धस्तोत्रम्	6	,,		मध्यगत-	102-103	
81	धर्मधातुचैत्यवर्णकगीतम्	22	,,		श्रीधर्मधातु-	103 105	
82	बुद्धभट्टारकवन्दना	5	,,	राजा हर्षदेवः	जानि बोधि-	105-106	
83	दीपङ्करस्तोत्रम्	7	,,		ब्रह्महरिहर	106·107	राग ललित में गेय।

क्रमांक	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
84	वरुणवन्दना	5	वरुण:		अरुणत्रुण-	107	
85	स्वयम्भूस्तोत्रम्	17	स्वयम्भू:		मञ्जुश्रीकृत-	108-110	आगे पत्र खंडित हैं।
86	अवलोकितेश्वरस्तवराज:	10	अवलोकितेश्वर:	जयप्रतापमल्लदेव:		111-112	प्रथम श्लोक नहीं है।
87	वरूथभीमस्तव:	15	भीम:	,,	हे जय जिनवर	113-116	
88	बुद्धगीतम्	25	बुद्ध:		आदिप्रभञ्जन-	116-118	राग पंचम में गेय।
89	रत्नमालास्तोत्रम्	25	अवलोकितेश्वर:		लोकेश्वरं विमल-	118-122	
90	बुद्धगीतम्	8	बुद्ध:		असुरसुर-	122-123	राग मलार में गेय।
91	वन्दनास्तोत्रम्	12	अवलोकितेश्वर:		आराधितत्रि-	123-124	
92	लोकपालस्तोत्रम्	10	लोकपाला:		पूर्वदिगंपति-	124-125	राग मलार में गेय।
93	जिनवरस्तोत्रम्	9	जिन:		दानवराजन-	125-126	अपूर्ण है।
94	पञ्चतथागतस्तोत्रम्	6	तथागत:			127	प्रारम्भ का अंश नहीं है।
95	पोतलकास्तोत्रम्	8	अवलोकितेश्वर:		जय सिद्धि-	127-128	
96	कल्पान्तिकस्तोत्रम्	6	,,		कल्पान्तिके	129	अपूर्ण है।

3. धारण्यादिसंग्रह

क्र०	ग्रन्थाङ्क	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
97	75	वज्रवैरोचनीस्तव:	3	वज्रवैरोचनी		देवि त्वमेव	102	
98	86	आलीढदेवीस्तुति:	4	आलीढा		श्रीहेरुकं	107	
99	107	गणेशषोडशनामानि	3	गणेश:		सुमुखश्चैक-	110	
100	112	आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	गद्य है	अवलोकितेश्वर:		एवं मया श्रुत-	112-113	सर्वज्ञजिनकरण्डको नाम।
101	146	लोकातीतस्तव:	27	बुद्ध:		लोकातीत नम-	131	
102	156	लोकेश्वरशतकम्	101	अवलोकितेश्वर	वज्रदत्त:	भास्वन्माणिक्य-	151-158	

धी:

क्र०	ग्रन्थाङ्क	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
103	157	स्रग्धरास्तोत्रम्	37	तारा	सर्वज्ञमित्रः	बालार्कालोक-	158-161	
104	158	सूर्यशतकम्	100	सूर्यः	मयूरः	जम्भारातीव	161-169	
105	164	पीठस्तवः	73	पीठदेवता		ब्रह्माणीप्रोत-	179-181	
106	165	शनिस्तोत्रम्	48	शनिः		प्रणम्य देव-	181	
107	167	भीमसेनस्तोत्रम्	10	भीमसेनः		देवदेव महा-	184-185	
108	168	वागीश्वरपूजाविधिस्तोत्रम्	44	वागीश्वरः		मञ्जुघोषं महा-	185-188	
109	173	ताराष्टकम्	9	तारा		मातर्नील-	208	
110	174	वज्रवाराहीस्तोत्रम्	12	वज्रवाराही		नमस्ते वज्र-	209	
111	175	वज्रवैरोचनीस्तुतिः	2	वज्रवैरोचनी		देवि त्वमेव	209	
112	176	वज्रविलासिनीस्तुतिः	9	वज्रविलासिनी		उद्यातादल-	209	
113	177	वज्रविलासिन्यष्टकम्	9	,,		नमामि वज्र	209-210	
114	178	नागपूजास्तोत्रम्	गद्य	नागः		ॐ वज्रसत्त्व-	210	
115	185	विघ्नान्तकस्तवः	8	विघ्नान्तकः		विघ्नान्तकं	215-216	
116	186	षडक्षरस्तवः	7	बुद्धः		ॐकारध्यान-	216	प्रथमाक्षरसंवर्तमन्त्रयुतः ।
117	196	नैरात्म्यादेव्यष्टकम्	8	नैरात्म्या देवी		निरालम्ब	222	
118	197	महोग्रतारास्तुतिः	15	उग्रतारा		प्रकटविकट-	222-223	
119	199	तारानामाष्टोत्तरशतम्	59	तारा		श्रीमत्पोतलके	223-224	
120	200	आर्यतारानमस्कारैकविंशतिः	27	,,		नमस्तारे	224-226	
121	233	मायाचक्रस्तोत्रम्	7	,,		मायाचक्रस्थिता	248	
122	242	शनिद्वादशनामस्तोत्रम्	3	शनिः		क्रोधः शनै-	249	
123	249	पञ्चाक्षरस्तोत्रम्	5	बुद्धः		न जातो न	251	
124	265	षोडशयोगिनीस्तवः	16	योगिन्यः		नमो डाकिनी	253-254	
125	266	चतुःषष्टियोगिनीस्तवः	10	योगिन्यः		सर्वभावा-	254	
126	271	हरसिद्धिस्तोत्रम्	1	हरः		हरशिल-	255	

क्र०	ग्रन्थाङ्क	स्तोत्र	श्लोक सं०	देवता	स्तुतिकर्ता	प्रारम्भ	पत्र सं०	विशेष
127	272	पद्मपाणिलोकेश्वरस्तोत्रम्	1	पद्मपाणिलोकेश्वरः		नमो बुद्धं	255	
128	273	आर्यावलोकितेश्वरनामशतकम्	गद्य	अवलोकितेश्वरः		पृथ्वीवरो	255-256	
129	276	वज्रवाराहीस्तोत्रम्	3	वज्रवाराही		धर्मोदया	256	
130	277	सरस्वतीस्तोत्रम्	3	सरस्वती		पद्मोपरि	256	
131	279	अष्टलोकपालस्तोत्रम्	8	लोकपालाः		इन्द्रः सुरपतिः	257	
132	280	शनैश्चरद्वादशनाम	गद्य	शनिः		दक्षिणाभिः	257	
133	283	अष्टमातृकास्तोत्रम्	9	अष्टमातृकाः		ब्रह्माणीहंस-	257-258	
134	285	नवग्रहदेवतापाठः	9	नवग्रहाः		नम आदित्य	258-259	दण्डक है।
135	303	प्रतिसरास्तुतिः	19	प्रतिसरा		रक्ष प्रतिसरे	263-265	भद्रकल्पावदाने।
136	306	कमलाकरसर्वतथागतस्तुतिः	34	तथागताः		ये जिनपूर्वक-	269-271	सुवर्णप्रभे।
137	317	वाग्वाणीस्तोत्रम्	10	सरस्वती		सरस्वती नम-	282	
138	320	सरस्वतीशतस्तवः	गद्य	,,		नमो भगवत्यै	282-283	सुवर्णप्रभोक्तम्।
139	333	वज्रयोगिनीस्तुतिः	14	वज्रयोगिनी		भगवतीदिगं	289-290	परामर्थमन्त्रानुसारिणी।
140	348	विघ्नान्तकस्तोत्रम्	गद्य	विघ्नान्तकः			295	
141	350	त्रियोगिनीनमस्कारस्तवः	3	योगिनी		नमस्ते वज्र	297	
142	353	बुद्धस्तवः	24	बुद्धः	धर्मराजः	नमस्ते लोक-	298-299	कारण्डव्यूहे
143	354	,,	6	,,	उमामहेश्वरौ	नमोहं भगः	299	,,
144	372	गण्डीस्तवः	34	,,	आर्यदेवः	आपाताला-	332-334	

प्रस्तुत स्तोत्रों की देवतानुक्रमणी

स्तुतिकर्ताओं की अनुक्रमणी

उद्धृत ग्रन्थों की अनुक्रमणी

गेय रागों की अनुक्रमणी

राग पंचम	54,88
राग भास	59
राग मलार	7,10,46,90,91
राग यमन	4,34
राग ललित	52,60,79,83

उपर्युक्त संग्रहों में द्विरावृत्त स्तोत्र

स्तोत्र	कर्ता	क्रमांक
अवलोकितेश्वरस्तोत्रम्	वासुकिनागः	18, 57
आर्यावलोकितेश्वरस्तोत्रम्	चन्द्रकान्ता भिक्षुणी	3, 78
जगन्मोहनस्तोत्रम्	जयप्रतापमल्लः	2, 52
नामसङ्गीतिः	मञ्जुश्रीनामसंगीतिः	39, 70
स्रग्धरास्तोत्रम्	सर्वज्ञमित्रः	40, 103



लुप्त बौद्ध-वचन संग्रह

—व्रजवल्लभ द्विवेदी—

[इस शीर्षक के अन्तर्गत "धीः" के प्रथम अंक में सेकोद्देशटीका, चर्यागीतिकोशव्याख्या, दोहाकोशव्याख्या, अद्वयवज्रसंग्रह, ज्ञानसिद्धि और निष्पन्नयोगावली में उद्धृत लगभग ३० ग्रन्थ-ग्रन्थकारों के वचनों का संग्रह आवश्यक टिप्पणियों के साथ किया गया था। इस अंक में उक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, वसन्ततिलकटीका, साधनमाला, गुह्यसमयसाधनसंग्रह, हेवज्र-तन्त्रटीका (योगरत्नमाला) से संकलित लगभग उतने ही ग्रन्थ-ग्रन्थकारों के वचनों का संग्रह किया जा रहा है।]

आदिबुद्ध

(1)

[1]विरागान्न परं पापं न पुण्यं सुखतः परम्।
अतोऽक्षरसुखे चित्तं निवेश्यं तु सदा नृप॥

(2)

[2]पतिते बोधिचित्ते तु सर्वसिद्धिनिधानके।
मूर्च्छिते स्कन्धविज्ञाने कुतः सिद्धिरनिन्दिता॥

[3]आर्यदेवपाद

(6)

[4]विग्रहे यः परिहारं कृते शून्यतया वदेत्।
सर्वं तस्याप(रि)हृतं समं साध्येन जायते॥

(7)

[5]नान्यया भाषया म्लेच्छः शक्यो ग्राहयितुं यथा।
न लौकिकमृते लोकः शक्यो ग्राहयितुं तथा॥

---

1. दोहाकोशव्याख्या, पृ० 154
2. तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, पृ० 6
3. प्रथम अंक में आर्यदेवपाद और आर्यपाद के पाँच वचन संगृहीत हैं। यहाँ दो वचन और दिये जारहे हैं।
4. योगरत्नमाला, पृ० 104
5. तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, पृ० 5

आलिचतुष्टय

(1)

[1]चतस्रो गतय ऊर्ध्वं पार्श्वमृजुरधश्चेति[2] ।

[3]उच्छुष्मतन्त्र

(1)

[4]शिवशक्तिसमायोगात् सत्सुखं परमाद्वयम् ।
न शिवो नापि शक्तिश्च रत्नान्तर्गतसंस्थितम् ॥

गुह्यतत्त्वप्रकाश

(1)

[5]एकारः पृथिवी ज्ञेया कर्ममुद्रा तु लोचना ।

(2)

[6]चतुर्भिः प्रत्ययैर्ग्राह्यम् ।

चतुर्देवीपरिपृच्छामहायोगतन्त्र

(1)

[7]चतुरशीतिसाहस्रे धर्मस्कन्धे महामुने ।
तत्त्वं वै ये न जानन्ति सर्वे ते निष्फलाय वै ॥

---

1. वसन्ततिलकटीका, पृ० 36
2. यह उद्धरण दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोध योजना में विद्यमान 'वसन्ततिलक' की मातृका से संगृहीत है । टीका के साथ इस ग्रन्थ का प्रकाशन शीघ्र होने वाला है ।
3. लुप्तागमसंग्रह, द्वितीय भाग के उपोद्घात (पृ० 22) में उच्छुष्मभैरव शीर्षक के अन्तर्गत इसका परिचय दिया गया है ।
4. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 28
5. वसन्ततिलकटीका, पृ० 28
6. वसन्ततिलकटीका, पृ० 167
7. दोहाकोशव्याख्या, पृ० 105, 115, 149; चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 22 में यह वचन महायोगतन्त्र के नाम से स्मृत है ।

चतुःप्रदीप

(1)

[1]यः प्रत्ययैर्जायति स ह्यजातो
न तस्य उत्पाद स्वभावतोऽस्ति ।
यः प्रत्ययाधीन स शून्य उक्तः
यः शून्यतां जानति सोऽप्रमत्तः ॥

ज्ञानपाद

(1)

[2]एवंविधैश्च चेतसि यत्किञ्चित् कायवाङ्मनस्कर्ममुद्रामन्त्राकारं गदितं सर्वबुद्धैरित्युक्तम् ।

ज्ञानालोकालङ्कारमहायानसूत्र

(1)

[3]अविकल्पितसङ्कल्प अप्रतिष्ठितमानस ।
अस्मृत्यमनसिकार निरालम्ब नमोऽस्तु ते ॥

डाकिनीवज्रपञ्जर

(1)

[4]प्रथमं तोयसेकेन द्वितीयं मौलिसेकतः ।
तृतीयं पट्टसेकेन चतुर्थं वज्रघण्टया ॥
पञ्चमं स्वाधिपेनैव नामसेकं तु षष्ठमम् ।
बुद्धाज्ञा सप्तमं सेकं कलशं सेकमष्टमम् ॥
नवमं गुह्यसेकेन दशमं प्रज्ञाभिषेकतः ।
तत्त्ववज्रप्रयोगेण सर्वान् वज्रव्रतान् ददेत् ॥
व्याकरोति स्वय शास्ता एष सेकविधि स्वयम् ।
आचार्यो नावमन्तव्यः सुगताज्ञां न लङ्घयेत् ॥

---

1. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 25
2. वसन्ततिलकटीका, पृ० 49
3. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 25, 34, 60
4. सेकोद्देशटीका, पृ० 27

(2)

[1]सर्वज्ञहेतुकं तद्धि सिद्धिनिकटे प्रवर्तकम् ।
पश्चान्मायोपमाकारं स्वप्नाकारं क्षणात्क्षणम् ॥

(3)

[2]षडङ्गं भावयेत् तस्मात् स्वाधिष्ठानसमं पुनः ।
पश्चात् स्वं लक्षयेच्चिह्नमनुलोमविधिक्रमैः ॥

(4)

[3]सिद्धयत्यशेषनिःशेषं त्रैधातुकं चराचरम् ।
लोकधातुषु सर्वेषु यावन्तो वज्रदेहिनः ॥

(5)

[4]शून्यताकरुणाभिन्नं यत्र चित्तं प्रभाव्यते ।
सा हि बुद्धस्य धर्मस्य संघस्यापि हि देशना ॥

(6)

[5]अक्षोभ्य एव नाम्योती ? सर्वरागविवर्जितः ।
सा(शा)श्वतेनायुतं प्रोक्तं कोटिवज्राङ्कवज्रिणे ॥
अमितायुनाख्यातं यावद(ा)काशसप्तिरात्रि ? ।

[6]तत्त्वसंग्रहतन्त्रराज

(1)

[7]सर्वतथागतमहाबोधिदृढसत्त्व इत्यारभ्य अनादिनिधनः शान्तो भगवान् महाबोधिसत्त्ववज्रः समन्तभद्रो महाबोधिसत्त्वः सर्वतथागत-हृदयेषु विजहार ।

---

1. सेकोद्देशटीका, पृ० 40
2. ,, पृ० 40
3. ,, पृ० 41
4. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 26
5. वसन्ततिलकटीका, पृ० 24-25
6. महासमयकल्पराज, सर्वतथागततत्त्वसंग्रह अथवा सर्वतथागततत्त्वसंग्रहमहायान-अभिसमयकल्पराज के नाम से प्रकाशित ग्रन्थ से यह भिन्न है या अभिन्न, इसका निर्णय मुद्रित ग्रन्थ में इस उद्धरण की उपलब्धि पर निर्भर है।
7. ज्ञानसिद्धि, पृ० 81-82

अथ सर्वतथागताः प्राहुः—कथं त्वं कुलपुत्रानुत्तरां सम्यक्-सम्बोधिमभिसंभोत्स्यसे यस्त्वं सर्वतथागततत्त्वान्यभिज्ञाय इष्टतर-पुण्यान्युपहससीति ।

सर्वार्थसिद्धिबोधिसत्त्व आह—भगवन्तः सर्वतथागता आज्ञाप-[यथ] कथं प्रतिपद्यामीदृशं तत्त्वमिति ।

तथागता आहुः—प्रतिपद्यस्व कुलपुत्र स्वचित्तप्रत्यवेक्षणसमा-धानेन प्रकृतिसिद्धेन रुचिजप्तेन मन्त्रेणेति । ॐ चित्तप्रतिवेधं करोमीति ।

महाबोधिसत्त्व आह—आ ज्ञातो भगवन्तः सर्वतथाग[ताः] स्वहृदि चन्द्रमण्डलाकारं पश्यामि ।

प्रकृतिप्रभास्वरमिदं कुलपुत्र चित्तं चन्द्रमण्डलवत् । चन्द्रमण्डलं प्रकृतिप्रभास्वरं तद्वज्ज्ञानम् । यथा क्रमाच्चन्द्रमण्डलं सम्पूर्णं भवति, तद्वत् प्रकृतिप्रभास्वरं चित्तरत्नमपि परिपूर्णं भवति । यथा चन्द्र-मण्डलमागन्तुककलाभिः सूर्यमण्डलरश्म्यपगमात् क्रमात् पूर्णं दृश्यते, तद्वत् प्रकृतिपरिशुद्धं चित्तरत्नमपि सर्वक्लेशमलकलङ्कापगमक्रमात् परिपूर्णबुद्धगुण दृश्यत इति ।

तथावादो

(1)

[1]केचित् तस्याभासमात्रा सुमनसि जनितादर्शबिम्बोपमा वै
योगीन्द्रैः सेवनीया परमजिनसुतैः सेविता या च बुद्धैः ।
सा ज्ञानार्चिः प्रवृद्धा दहति सविषयं मारवृन्दं समस्तं
रागादिं चापि काये दहति समसुखं योगिनां वर्षयोगात् ॥

त्रिसमयमहातन्त्रराज

(1)

[2]बोधिचित्तं दृढं यस्य निःशङ्का च मतिर्भवेत् ।
विचिकित्सा न कर्तव्या तस्येदं सिद्ध्यति ध्रुवम् ॥

---

1. दोहाकोशव्याख्या, पृ० 163
2. साधनमाला, पृ० 13

(2)

[1]असमाचलाः समतसारधर्मिणः
करुणात्मका जगति दुःखहारिणः ।
असमन्तसर्वगुणसिद्धिदायिनो
अमलाचलाः समवराग्रधर्मिणः ॥
गगनसमोपमकता न विद्यते
गुणलेशरेणुकणिकेऽप्यसौमिके ।
सदसत्त्वधातुवरसिद्धिदायिषु
विगतोपमेषु असमन्तसिद्धिषु ॥
सततामला करुणवेगतोत्थिता
प्रणिधानसिद्धिरविरोधधर्मता ।
जगतोऽर्थसाधनपरा समन्तिनी
सततं विरोचति महाकृपात्मनाम् ॥
न निरोधतां करुणचारिकाकुला
व्रजते त्रिलोकिवरसिद्धिदायिका ।
अमितामितेष् सुसमाप्तितां गता
गतिं गतेष्वपि अहो सुधर्मता ॥
त्रिसमयेऽग्रसिद्धि वरदा ददन्तु मे
वरदानताग्रगतितां गताः सदा ।
सकलास्त्रिलोकवरदाग्रसाधका
नाथास्त्रियध्वगतिका अनावृताः ॥

दउड़ीपाद

(1)

[2]प्राणी वज्रधरः कपालवनितातुल्यो जगत्स्त्रीजनः
सोऽहं हेरुकमूर्तिरेष भगवान् यो न प्रभिन्नोऽपि च ।
श्रीपद्मं मदनं च गोकुदहनं कुर्वन् यथा गौरवाद्
एतत् सर्वमतीन्द्रियैकमनसा योगीश्वरः सिद्ध्यति ॥

---

1. साधनमाला, पृ० 15-16; यहाँ पृ० 16 पर साधनमाला में बताया गया है कि ये श्लोक त्रिसमय-राजकल्पोक्त वज्रधरसंगीत स्तुति के हैं ।
2. चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 40

(2)

[1]रागान्ते विरमप्रवेशसमये चित्ते स्वभावस्थिते
या चित्तिर्मनसः प्रवृत्तिरपरा वायोर्निरुद्धा गतिः।
तत्काले यदनन्यसंभवसुखं साक्षात् परं तत्पदं
तत्र स्वानुभवो हि यस्य स पुनः सिद्धो महामुद्रया ॥

(3)

[2]गवां यूथन्यायः।

(4)

[3]एते पञ्च यन्ति मोहतटिनो पारम्।

(5)

[4]अदूरे दूरे वा।

धौकड़िपाद

(1)

[5]संसारे बहु संसरन्ति सुधियो तेन प्रभावेण च
भावाभावयुगे विचार्य सकलं स्वप्रज्ञया संस्थितम्।
पक्षापक्षमवेक्ष्य वादिगदितं किञ्चिन्न पश्याम्यहं
ग्राह्यग्राहकवर्जितं हि मुदिभिर्दुःखैर्यथा [स]न्ततम् ॥

नागार्जुनपाद

(10)

[6]अकृत्रिमः स्वभावो हि निरपेक्षः परत्र च।
यदि निःस्वभावाभावः स्वभावतो न विद्यन्ते ॥

(11)

[7]चित्तमात्रमिदं सर्वमिति या देशना मुनेः।
उत्त्रासपरिहारार्थं बालानां सा न तत्त्वतः ॥

---

1. चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 43
2. ,, पृ० 91
3. ,, पृ० 126
4. ,, पृ० 133
5. ,, पृ० 114
6. योगरत्नमाला, पृ० 116
7. ,, पृ० 116

निदत्ताक

(1)

[1]केशोण्ड्रकं यथाकारो दृश्यते तैमिरकैर्जनैः ।
तथा लोकादिदोषेण भावो बालैर्विकल्प्यते ॥

[2]निर्नादतन्त्र

(1)

[3]रत्नपुरमिदं देवि किञ्जल्के ज्वलतां व्रजेत् ।
रुद्रो युग्मः शिवः श्रेष्ठः शक्तिः सैव परात्परा ॥
लक्ष्यलक्षणनिर्मुक्तं वागुदाहारवर्जितम् ।
शिवशक्तिसमायोगात् जायते चाद्भुतं सुखम् ॥
न सन्ति तत्त्वतो भावाः शक्तिरूपेण भाविताः ।
शक्तिस्तु शून्यतादृष्टिः सर्वारोपविनाशिनी ॥

[4]पञ्चक्रम

(1)

[5]नास्ति रात्रौ न सन्ध्यायां दिवापि च न विद्यते ।
भो तं सहजमानन्दं गुरुचरणेषु पृच्छ ॥

बुद्धकपाल (योगिनीतन्त्र)

(1)

[6]अशुद्धचित्तशोधनाद् भगिनी भवेच्चक्षु-
र्भागिनेया श्रोत्रमेव च जननी भण्यते घ्राणम् ।
रसना दुहिता तथा मनो भवेद् भार्या
षडेता वरा विद्या महामुद्राप्रदायिकाः ॥

1, चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 135

2. अद्वयवज्र ने शैव विशेषण के साथ इस तन्त्र को उद्धृत किया है । अब तक की किसी भी सूची में कहीं भी इसका उल्लेख नहीं मिलता ।

3. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 28

4. नागार्जुन रचित पञ्चक्रम फ्रेंच विद्वान् पूसें द्वारा सन् 1896 में प्रकाशित कराया गया था । वहाँ इस श्लोक को देखना होगा ।

5. चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 80

6. योगरत्नमाला, पृ० 156

भगवत्प्रवचन

(1)

[1]वरं जेतवने रम्ये शृगालत्वं व्रजाम्यहम् ।
न तु वैशेषिकं मोक्षं गोतमागन्तुमर्हति ॥

महामण्डलव्यूहतन्त्र

[2]नमः समन्तबुद्धानां ॐ वज्रपुष्पे स्वाहा । मृत्तिकाग्रहणमन्त्रः ।

ॐ वज्रोद्भवाय स्वाहा । बिम्बवलनमन्त्रः ।

ॐ अरजे विरजे स्वाहा । तैलम्रक्षणमन्त्रः ।

ॐ धर्मधातुगर्भे स्वाहा । मुद्राक्षेपणमन्त्रः ।

ॐ वज्रमुद्गराकोटन स्वाहा । आकोटनमन्त्रः ।

ॐ धर्मरते स्वाहा । आकर्षणमन्त्रः ।

ॐ अप्रतिष्ठितवज्र स्वाहा । स्थापनमन्त्रः ।

ॐ सर्वतथागतमणिशतदीप्ते ज्वल ज्वल धर्मधातुगर्भे स्वाहा । प्रतिष्ठामन्त्रः ।

ॐ स्वभावशुद्धे आहर आहर आगच्छ आगच्छ धर्मधातुगर्भे स्वाहा । विसर्जनमन्त्रः ।

ॐ आकाशधातुगर्भे स्वाहा । क्षमापनमन्त्रः ।

[3]मूलतन्त्र

(1)

[4]"योगिन्यः सहजसिद्धाः" इति वचनात् ता एवाह—

शिरसस्तु समुद्भूता नाड्यः शिरसिजाः स्मृताः ॥

वज्रडाक

(1)

[5]रोचते दीयते यत्तद् महावैरोचनो मुनिः ।
विरमान्ते परमश्वासौ वायूनां विश्वसंभवात् ॥

---

1. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 16
2. अद्वयवज्रसंग्रह, पृ० 7-8, यहाँ बताया गया है कि महामण्डलव्यूहतन्त्र के अनुसार सर्वकताडनविधि का वर्णन किया गया है ।
3. सेकोद्देशटीका, कालचक्रविमलप्रभाटीका आदि में मूलतन्त्र के अनेक वचन मिलते हैं । इन सब वचनों का संग्रह यथासमय किया जायगा ।
4. वसन्ततिलकटीका, पृ० 67
5. ,, पृ० 11

(2)

[1]यथा स्तम्भेन महता ध्रियते लीलया गृहम् ।
न च द्वारस्तथा कायः कङ्कालैरेव धार्यते ॥

वज्रपाणि

(2)

[2]नरा वज्रधराकारा योषितो वज्रयोषितः ।

वज्रमण्डलालङ्कारमहायोगतन्त्र

(1)

[3]इदं तत् सर्वबुद्धानामद्भुतं गुणविस्तरम् ।
सिद्धयन्ति सर्वमन्त्रा वै सकृदुच्चारितेऽपि हि ॥
अनेन स्तोत्रराज्ञा वै तोषितास्ते तथागताः ।
ददन्ति विपुलां सिद्धि कल्पस्थां कल्पचोदिताम् ॥
दर्शयन्ति च आत्मानं आसेचनकविग्रहम् ।
वैरोचनमहानाथमक्षोभ्यं रत्नसम्भवम् ॥
अमिताभं जिनं शुद्धममोघराजं च सर्वतः ।
रसं रसायनं तत्त्वं प्रवदन्ति वराणि च ॥
अशेषाः सिद्धयो रम्या विपुला अर्थसम्पदः ।
सर्वाशापरिपूरिं च ददन्ति मनसेप्सिताः ।
ज्ञानमायुर्बलं वेगं ददन्ति परमं शुभम् ॥

विरूपाक्षपाद

(1)

[4]वज्रोत्थानं सदा कुर्यात् चन्द्रार्कगतिमञ्चनात् ।
अन्यथा नावधूत्यंशे विशति प्राणमारुतः ॥

---

1. वसन्ततिलकटीका, पृ० 32
2. ,, पृ० 49
3. साधनमाला, पृ० 16; यहाँ बताया गया है कि त्रिसमयराजकल्पोक्त वज्रधर द्वारा संगीत स्तोत्र ही वज्रमण्डलालङ्कारमहायोगतन्त्र में भी फलस्तुति के साथ विद्यमान है ।
4. चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 53

शाक्यनाथ

(1)

[1]ताम्रस्य कालिमा यद्वद्रणयोगेन नश्यति।
न तस्य सत्त्वता नश्येन्निर्मलत्वेन या स्थिता॥
तद्वच्चित्तमलः शून्यतायोगेन नश्यति।
न तस्य ज्ञानता नश्येन्निर्मलत्वेन या स्थिता॥

सन्ध्याव्याकरण

(1)

[2]स्कन्धा एव हि सम्बुद्धा बोद्धयर्थं प्रत्ययोद्भवाः।
ते वै तथागताः ख्यातास्तथागताद्वययोगतः॥

(2)

[3]आकाशैकस्वभावेऽस्मिन् विजहार महामुनिः।

(3)

[4]आग्नेये चैव वायव्ये माहेन्द्रे वारुणे तथा।
चक्रे चित्तस्य संचारादूर्ध्वपार्श्वस्त्वधोगतिः॥
तासां मध्ये स्वदैवत्यं तुर्ययोगः परस्परम्।

समयवज्रपाद

(7)

[5]यस्तु वज्रनयोपायविचित्रीकृतमानसः।
स्फुटीकृतस्वसंवेद्यधर्मकायमहासुखः॥
तस्य वज्रधरस्येह सिद्धिः करतले स्थिता।

सम्पुटतन्त्र

(4)

[6]मातृजास्त्रयमात्राणि पितृजास्त्रयमेव च।
तत् षाट्कौशिकं पिण्डं षट्तथागतरूपकम्॥

---

1. तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, पृ० 21
2. वसन्ततिलकटीका, पृ० 24
3. ,, पृ० 29
4. ,, पृ० 36; यह श्लोक सम्पुटतन्त्र के नाम से भी वसन्ततिलकटीका (पृ० 36) में ही उद्धृत किया गया है।
5. योगरत्नमाला (हेवज्रतन्त्रटीका), पृ० 108
6. वसन्ततिलकटीका, पृ० 25

(5)

[1]द्वादश द्विगुणीभूय पार्श्वतस्तु द्विपक्षयोः ।
वीरयोगिनीवृन्देन समन्तात् परिवारितः ॥
कङ्कालो दण्डरूपे योऽसौ हेरुकः परमाश्रयः ।
स्कन्धधात्वादिबुद्धानां स्तूप इत्यभिधीयते ॥

(6)

[2]आग्नेये चैव वायव्ये माहेन्द्रे वारुणे तथा ।
चक्रे चित्तस्य संचाराद्रूर्ध्वं पार्श्वर्ज्वधोगतिः ॥

सम्पुटतिलक

(1)

[3]सर्वडाकिनीमयो रक्तं सर्ववज्रसमुद्भवम् ।
पद्मप्रकाशयोगतः .... ।
वज्रसूर्यः परं ख्यातः स्फुरेदूर्ध्वंप्रभास्वरम् ॥

संवरतन्त्र

(1)

[4]न योगः प्रतिबिम्बेषु निषिक्तादिषु जायते ।
बोधिचित्तमहायोगाद् योगिनस्तेन देवता ॥
बोधिचित्तमिदं वज्रं सर्वबुद्धत्वमात्मनः ।
तस्मात् सार्वात्म्ययोगेन सर्वबुद्धत्वमाप्नुते ॥
एनं पश्यन्ति संयुक्तं सर्वथा पूजयन्ति ये ।
दृष्टास्तैः पूजिताश्चैव सर्वबुद्धा भवन्ति हि ॥
दर्शनस्पर्शनाभ्यां च सर्वबुद्धस्य वाऽस्य हि ।
अमण्डलप्रविष्टाश्च दृष्टसत्या भवन्ति हि ॥

---

1. वसन्ततिलकटीका, पृ० 32
2. ,, पृ० 36; यह वचन वसन्ततिलकटीका (पृ० 36) में ही सन्ध्याव्याकरण के नाम से भी उद्धृत है ।
3. वसन्ततिलकटीका, पृ० 11
4. ज्ञानसिद्धि, पृ० 85-87

दर्शनस्पर्शनाभ्यां च श्रवणस्मरणेन च ।
सर्वपापैर्विमुच्यन्ते पूज्यन्ते सर्वसिद्धिभिः ॥
सर्वयोगसमायोगैः सर्वबुद्धस्य वाऽस्य हि ।
नार्योऽपि हि विमुच्यन्ते बुद्धबोधिं स्पृशन्ति च ॥
सर्वत्र सर्वतः सर्वं सर्वथा सर्वदा स्वयम् ।
सर्वबुद्धमयं सिद्धं स्वमात्मानं प्रपश्यति ॥
सर्वात्मसंस्थिताश्चैनं पूजयन्ति तथागताः ।
सर्वपूजामहामेघव्यूहप्रसरसञ्चयैः ॥
सर्वभोगोपभोगैश्च सेव्यमानैर्यथासुखम् ।
स्वाधिदैवतयोगेन स्वमात्मानं प्रपूजयेत् ॥
विचित्रकर्मयोगेन विचित्रविनयात्मना ।
सत्त्वानां विनयार्थाय तदन्ये विधयः स्मृताः ॥
अनादिनिधनः सत्त्वो वज्रसत्त्वः परं यतः ।
सुभगेति च विख्यातो सुस्थितो बुद्धमुद्रया ॥
विचित्रकर्मयोगेन विचित्रविधिकाङ्क्षिणाम् ।
बुद्धवज्रधराद्यास्तु कृतका विनयाः स्मृताः ॥

(2)

[1]आत्मानमपि निर्यात्य पुनर्मूल्यैस्तु मोक्षयेत् ।
नानातन्त्रेषु निर्दिष्टा दक्षिणेयं निरुत्तरा ॥

संवरनाथ

(1)

[2]अनामाङ्गुष्ठवक्त्राभ्यां लेहयेद् योगवित् सदा ।

संवरोत्तरतन्त्र

(1)

[3]ककारादिदकारान्तं ङञवर्जं निवेशयेत् ।
घकारादिहकारान्तं आलिद्वयं समालिखेत् ।
मध्यस्थेन त्वकारालिर्न्यस्तव्यः शशिमण्डले ॥

1. ज्ञानसिद्धि, पृ० 91
2. तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, पृ० 6
3. साधनमाला, पृ० 43

सहजसंवर

(1)

[1]सर्वव्यापि निराभासि करुणैकरसं मनः ।
आलिङ्गति झटित्येषा वृषस्यन्ती च शून्यता ॥

सेकोद्देश

(1)

[2]यावन्नो पतति प्रभास्वरमयः शीतांशुधाराद्रवो
देवीपद्मदलोदरे समरसीभूतो जिनानां गणः ।
स्फूर्जद्वज्रशिखाग्रतः करुणया भिन्नं जगत्काननं
गर्जद्धीकरुणाचलस्य सहजं जानीहि रूपं विभोः ॥

(2)

[3]तस्मात् सर्वप्रयत्नेन च्युतिरागं विवर्जयेत् ।
येनाक्षरसुखं याति योगी संसारबन्धनात् ॥
कामुकोऽपि विरागान्न कामशास्त्रं समीहते ।
मयोक्तं किं पुनस्तत्र योगी दुःखं समीहते ॥
शुक्लाक्षरस्वभावेन साधयेत् परमाक्षरम् ।
आधारे च्युति आपन्नं आधेयस्य विरागता ॥
आधाराधेयसंबन्धो यावदक्षरतां व्रजेत् ।
चित्तमक्षरताप्राप्तं नाधाराधेयलक्षणम् ॥



---

1. चर्यागीतिकोशव्याख्या, पृ० 21
2. ,, पृ० 11
3. तत्त्वज्ञानसंसिद्धिटीका, पृ० 17

बौद्ध पारिभाषिक शब्दों का अभिप्राय

—व्रजवल्लभ द्विवेदी—

[इस योजना के स्वरूप पर "धीः" के प्रथम अंक में संक्षिप्त प्रकाश डाला जा चुका है। वहाँ सेकोद्देशटीका में व्याख्यात कुछ परिभाषाओं और उनके विवरणों का संग्रह भी किया गया था। उसीके सातत्य में यहाँ सेकोद्देशटीका की अवशिष्ट परिभाषाओं तथा अद्वयवज्रसंग्रह में प्रसंगवश दी गई विशिष्ट पारिभाषिक शब्दों की व्याख्याओं को संकलित किया जा रहा है।]

अक्षरम्

निर्वाणेन तुच्छरूपेण रहितं बिम्बं संसारेण क्षरसुखलक्षणेनातीतमनास्रवमहासुखमक्षरम्। (से० टी०, पृ० 70)।

अक्षोभ्यम्

किञ्चिद् ग्राह्यादिशून्यं चेत् चित्तमक्षोभ्यमुच्यते।
(अ० व० सं०, पृ० 29)

अचिन्त्यम्

अनाभोगं हि यज्ज्ञानं तच्चाचिन्त्यं प्रचक्षते।
संचिन्त्य यदचिन्त्यं वै तदचिन्त्यं भवेन्नहि॥
(अ० व० सं०, पृ० 20, 30)

अचिन्त्यधातुः

कतमोऽसावचिन्त्यधातुः? यो धातुर्निश्चितो न चित्तगमनीयो न चित्तप्रमेयो न चित्तचेतनया प्रतिवेदितव्यः, असावुच्यतेऽचिन्त्यधातुः। अथ च पुनर्भगवन् चित्तमेवाचिन्त्यधातुः। तत् कस्य हेतोः? नह्यचित्ते चित्ते चित्तं संविद्यते। निश्चितो हि चित्तम्, चित्तस्य यथार्थावबोधात्। अथ च सर्वाकारो भगवतोऽचिन्त्यधातुः। अन्यत्राप्युक्तम्—

अविकल्पितसंकल्प अप्रतिष्ठितमानस।
अस्मृत्यमनसिकार निरालम्ब नमोऽस्तु ते॥

चतुःप्रदीपे—

यः प्रत्ययैर्जायति स ह्यजातो
न तस्य उत्पाद स्वभावतोऽस्ति।
यः प्रत्ययाधीन स शून्य उक्तो
यः शून्यतां जानति सोऽप्रमत्तः॥
(अ० व० सं०, पृ०25)

अनुज्ञाभिषेकः

अपरिमितसत्त्वधातोर्यथाशयवशेन संवृतिपरमार्थविभागेन परमगुह्यवज्रयानदेशनार्थमनुज्ञाभिषेको बुद्धत्वनिष्पादकः सप्तमः। (से० टी०, पृ० 21)

अप्रतिष्ठितनिर्वाणम्

विरागाद् रागविगमादुष्णीषस्थं यत् सौख्यं शुक्रं तत्प्रतिष्ठितम्। यत्तु वज्रमणेश्च्युतं तन्निर्वाणम्। अयं तु सुखराज उष्णीषवज्रमण्यन्तरालव्यापित्वादप्रतिष्ठितनिर्वाणः। अत एव महारागोऽक्षरश्च प्राधान्यात् प्रभुस्त्रैधातुकेश्वरः। (से० टी०, पृ० 55)

अप्रतिष्ठितनिर्वाणाख्यमहासुखसंज्ञकः शुद्धकायः। (से० टी०, पृ० 55-56)

अभिषेकः

लौकिकलोकोत्तरसिद्धिसौधसोपानभूतानधरसंवृतिरूपान् सप्तसेकान् व्याख्याय योगिसंवृतिभूतान् लौकिकसिद्धिसाधनान् परमार्थानुकूलांस्त्रिविधसेकान् (कुम्भ-गुह्य-प्रज्ञाज्ञानाख्यान्) कुम्भेत्यादिनोद्दिशति। (से० टी०, पृ० 21)

अमनसिकारः

अमनसिकार इत्यत्र बहवो विप्रतिपन्नाः। तत्र कश्चिदाह—अपशब्दोऽयमिति, समासे मनस्कार इति भवितुमर्हति। तत्रोच्यते—"तत्पुरुषे कृति बहुलम्" इत्यत्र बहुलवचनात्, "सप्तम्या अलुक्" इत्यलुक्समासे कृतेऽमनसिकारः, अमनस्कारः; त्वचिसारः, त्वक्सारः; युधिष्ठिर एतानि रूपाणि सम्पद्यन्ते, अतो नायमपशब्दः। न च प्रसज्यप्रतिषेधनञो विषयत्वादभावो वाच्यः। असूर्यम्पश्या राजदारा इत्यत्र हि न सूर्याभावः कृतः, किन्तु राजदाराणां यत् सूर्यदर्शनं प्रसज्यं तन्निषिद्धम्। एवमेवामनसिकारेऽपि नञो मनसिकरणं यद् ग्राह्यग्राहकादि प्रसक्तं तन्निषिद्धम्, न मनः। अतो न दोषः। पर्युदासपक्षेऽपि न दोषः, अब्राह्मणमानयेत्युक्ते ब्राह्मणसदृशस्य क्षत्रियादेरानयनं भवति, न तु विजातीयस्य कटादेः। अत्रापि निःस्वभाववेदनस्य संस्थितिः कृता। अथवा अकारप्रधानो मनसिकार इत्यत्र शाकपार्थिवादिवन्मध्यमपदलोपी समासः। एतेन यावान् मनसिकारः सर्वमनुत्पादात्मक इत्यर्थः। अकारस्यानुत्पादकारकत्वम् "अकारो मुखं सर्वधर्माणामाद्यनुत्पन्नत्वात्" इत्यादिना हेवज्रे उक्तम्। नामसंगीतौ च—

अकारः सर्ववर्णाग्र्यो महार्थः परमाक्षरः।
महाप्राणो ह्यनुत्पादो वागुदाहारवर्जितः॥ इति।

यदि वा—अकारोऽत्र नैरात्म्याबीजम्। तथा च हेवज्रे—"आलेरादि नेरादि नैरात्म्या"इति। एतेन सर्वमनसिकारोऽनात्मकोऽस्वभाव इत्युक्तं भवति। यदि वा—

आदिस्वरस्वभावा सा धीति बुद्धैः प्रकल्पिता।
सैव भगवती प्रज्ञा उत्पन्नक्रमयोगतः॥

यदि वा—अ इति प्रभास्वरपदम्, मनसिकार इति स्वाधिष्ठानपदम्। अश्चासौ मनसिकारश्चेत्यमनसिकारः। एतेन अमनसिकारपदेन अचिन्त्यप्रभास्वरस्वाधिष्ठानपदं शून्यताकरुणाभिन्नयुगनद्धाद्वयवाहिसंवेदनमापादितं भवतीति। (अ० व० सं०, पृ० 60-62)

अमृतकुण्डली

विघ्नान्तकोऽमृतकुण्डलीति तस्य दृष्टिरमृतस्थानगता ललाटगता।

(से० टी०, पृ० 36-37)

उपसाधनकाले तु बिम्बं चामृतकुण्डलीम्।

(से० टी०, पृ० 39)

ततोऽमृतकुण्डलीबिम्बसंज्ञया सन्ध्याभाषान्तरेण वायुरित्युक्तम्। स च पञ्चप्रकारः। तथा च समाजोत्तरे भगवानाह—

पञ्चरत्नमयं श्वासं पञ्चबुद्धैरधिष्ठितम्।
निश्चार्य पिण्डरूपेण नासिकाग्रे विभावयेत्॥ इति।

इह पञ्चरत्नशब्देन रसनापञ्चमण्डलधर्मिणः पृथिव्यादिपञ्चधातवस्तन्मयं श्वासं पञ्चरत्नमयमिति सव्यनासापुटे। तथा पञ्चबुद्धा ललनापञ्चमण्डलधर्मिणो विज्ञानादिपञ्चस्कन्धाः, तैरधिष्ठितं श्वासं वामनासापुट इति। निश्चार्यं पिण्डरूपेणेति। इह पिण्डं सव्यापसव्यमण्डलानात्मकत्वं मध्यमायामवधूत्यां प्राणवायोरिति। तं च प्राणवायुं निश्चार्य पिण्डरूपेण नासिकाग्रे विभावयेत्····कर्णिकातः कर्णिकामध्ये न सव्यापसव्यकमलदल इति। एवं बिन्दुस्थाने पिण्डरूपेण निरोधितः प्राणः। तेनैव तस्य धारणोच्यते। एवमङ्गद्वयेनोपसाधनममृतकुण्डलीबिम्बेनेति। (से० टी०, पृ० 41-42)

अवस्थात्रयम्

तत्रावस्थास्त्रयः। हेत्ववस्था नाम बोधिचित्तात् प्रभृति बोधिमण्डनिवेदनं यावत्। फलावस्था नाम सम्यक्संबोधिज्ञानोत्पत्तौ सर्वक्लेशगुणप्रहाणिप्राप्त्यवस्था। सत्त्वार्थक्रियावस्था नाम प्रथमधर्मचक्रप्रवर्तनात् प्रभृति आशासनान्तर्धानं यावत्।

तत्र हेत्ववस्था त्रिविधा—आशयावस्था, प्रयोगावस्था, वसितावस्था चेति। तत्र आशयावस्था सत्त्वानिर्मोक्षप्रणिधानम्। तद्धेतवश्चत्वारः। तद्यथा—

गोत्र-सन्मित्र-कारुण्य-दुःखाभीरुत्वहेतवः।
चतुर्भिः प्रत्ययैरेभिर्बोधिचित्तं प्रजायते॥ इति।

तत्र प्रयोगावस्था द्विविधा—अधिमुक्तिचित्तस्य पारमिताः सप्त, अधिमुक्तिचरितस्य पारमिता दश। भूमिप्राप्तस्य चतसृभिः सम्पद्भिः सम्पन्नं चित्तमिति तदर्थं दानं शीलं क्षान्तिर्वीर्यं ध्यानं प्रज्ञा उपाय इत्येताः सप्त पारमिताः। अधिमुक्तिचर्याचरितस्य दश पारमिताः—

दानं शीलं क्षमा वीर्यं ध्यानं प्रज्ञा उपायता।
प्रणिधानं बलं ज्ञानं मताः पारमिता दश॥ इति।

तत्र वसितावस्थाः पञ्च—क्लेश-उपपत्ति-कर्म-उपाय-सत्त्वपरिपाकावस्थाख्याः। तत्र हेत्व-वस्थास्थितेन सर्वमादिकर्म कर्तव्यम्। फलावस्था-सत्त्वार्थक्रियावस्थास्थितस्य च शाक्यमुनेरिव अनाभोगेन आदिकर्म प्रवर्तत इति। (अ० व० सं०, पृ० 11-12)

अशुभा भावना

शरीरस्य विण्मूत्रशुक्रशोणितश्लेष्मान्तान्त्रसिंहानकचिक्कणक्लमथप्लीहायकृत्प्रभृतिसमुदाय-रूपता। तदुक्तम्—

इमं चर्मपुटं तावत् स्वबुद्धौ च पृथक् कुरु।
अस्थिपञ्जरतो मांसं प्रज्ञाशस्त्रेण मोचय॥
अस्थीन्यपि पृथक् कृत्वा पश्य मज्जानमन्ततः।
किमत्र सारमस्तीति स्वयमेव विचारय॥ इति।

(अ० व० सं०, पृ० 15)

आदिकर्म

आदिकर्म यथोद्दिष्टं कर्तव्यं सर्वयोगिभिः।
शून्यताकरुणाभिन्नं यद्बोधौ ज्ञानमिष्यते॥
पञ्चपारमिताः प्रोक्ता आदिकर्मेति संज्ञया।
प्रज्ञापारमिता चासां स्वभावो नाभिरिष्यते॥
दानं शीलं क्षमां वीर्यं ध्यानं प्रज्ञां च सादरम्।
सततं सेवयन् धीमान् सुखी स्वस्थोऽपि जायते॥
संभोगनिर्मिते हेतुर्दानशीलक्षमात्रयम्।
ध्यानप्रज्ञेति धर्मस्य वीर्यं तूभययोर्मतम्॥

(अ० व० सं०, पृ० 2)

आनन्दाः

आनन्दाश्चत्वारः — आनन्दः, परमानन्दः, सहजानन्दः, विरमानन्दः। अन्यथा—"परमविरमयोर्मध्ये लक्ष्यं वीक्ष्य दृढीकुरु" इति यदुक्तम्, तत्संगतं न भवति।

(अ० व० सं०, पृ० 23)

आश्वासः

सर्वावरणविनिर्मुक्तः सर्वबुद्धबोधिसत्त्वसमयस्त्वमितः प्रभृति (इति) बोधनार्थमाश्वासः।

(अ० व० सं०, पृ० 38)

उपासकः

उ उद्युक्तो बुद्धपूजायां उपशान्तोपशायकः ।
उपकाराय सत्त्वानामुपायेनान्वितो भवेत् ॥
पा पापानावर्जयेन्नित्यं पापिष्ठैः सह सङ्गतिम् ।
पापान्निवारयन् जन्तोः पापं सर्वत्र देशयेत् ॥
स समारोपविनिर्मुक्तः समाधौ सुसमाहितः ।
सर्वदा परमानन्दी सम्बोधिं साधयेद् बुधः ॥
कः करोति सर्वदा यत्नं करुणां परिपालयेत् ।
कष्टेनापि न चानिष्टं करोत्युपकृतिं पराम् ॥
(अ० व० सं०, पृ० 10)

ऋद्धिः

ऋद्धिराकाशगमनादिकम् । (से० टी०, पृ० 47)

कर्म

कर्म कायवाक्चित्तचिन्ता (अ० व० सं०, पृ० 32)

ईर्या च कायिकं कर्म वाचिकं धर्मदेशना ।
समादानं मनःकर्म निर्विकल्पस्य धीमतः ॥
(अ० व० सं०, पृ० 54)

कर्ममुद्रा

कर्म कायवाक्चित्तचिन्ता । तत्प्रधाना मुद्रा कल्पनास्वरूपा । तस्यां कर्ममुद्रायाम्—

आनन्दास्तत्र जायन्ते क्षणभेदेन भेदिताः ।
क्षणज्ञानात् सुखज्ञानमेवंकारे प्रतिष्ठितम् ॥

तस्मात् कर्ममुद्रां प्राप्य निष्पन्दफलमुत्पद्यते । सदृशस्पन्दो निस्पन्दः ।····कर्ममुद्रया कृत्रिमया कथमकृत्रिमभूतं सहजाख्यं ज्ञानमुत्पद्यते ।····कर्माङ्गनाया आनन्दसन्दोहरत्नाकरं सरोरुहम् । तत् स्वच्छमास्थानं बोलकक्कोलरससंयोगेन अवधूत्या संवृतिबोधिचित्तमण्यन्तर्गतं यदा भवेत्, तदा क्षणिकनामापरं सहजाख्यं ज्ञानमुत्पद्यते । न तत् सहजं निस्पन्दम् । तत्स्वरूपेण प्रज्ञाज्ञानानन्दत्रयं क्षणचतुष्टयान्वितं सेके । हठयोगे च कर्ममुद्राया निष्पन्दफलमुक्तम् ।
(अ० व० सं०, पृ० 32-33)

कर्ममुद्रया क्षरसुखावस्था । (से० टी०, पृ० 62)

कलशाभिषेकः

उदक-मुकुट-वज्र-घण्टा-नाम-आचार्य-लक्षणाः षट् कलशाभिषेकाः।....एषां सर्वेषां कलश-व्यापारात् कलशाभिषेकसंज्ञा। अवैवर्तिकाभिषेकाश्चैते षट्तथागतस्वभावत्वात्। तथाहि उदकाभिषेक आदर्शज्ञानात्मकोऽक्षोभ्यस्वभावः। मुकुटाभिषेकः समताज्ञानात्मको रत्नसंभव-स्वभावः। वज्राभिषेकः प्रत्यवेक्षणाज्ञानात्मकोऽमिताभस्वभावः। अधिपत्यभिषेकः कृत्यानु-ष्ठानरूपोऽमोघसिद्धिस्वभावः। नामाभिषेकोऽविद्यानिरोधाद् विद्यानुगतविशुद्धधर्मधातु-ज्ञानात्मको वैरोचनस्वरूपः। आचार्याभिषेकस्तु वज्रज्ञानस्वभावः। अत्र च पञ्चाभिषेकाः, पञ्चसु लोचनादिविद्याया व्यापारात्। अत्र च अविद्यामलक्षालनायाक्षोभ्यरूपेण वज्राचार्येण वैरोचनरूपावलम्बिनि शिष्ये सलिलाभिषेको देयः। एवं सर्वत्राहङ्कार आगामिबुद्धभावोऽ-चित्तोष्णीषभूतो मुकुटाभिषेकः।....वज्राभिषेकस्य विधानमुत्पश्यमानाभेद्यज्ञानबीजाधानमिव विधातुम्। एवं वज्रघण्टाऽपि पूर्वाभिसन्धानेन द्वादशाङ्गुलपरिमाणाऽधोमुखाम्भोजवज्रसमा-पत्तिनिःस्वभावत्वेन सर्वधर्मस्वभावं प्रतिपादयितुमभेद्यज्ञाननिगदतां धर्मोदयस्य बोधयितुं मूर्धाधोभागे च वज्रावलीयुगलमालिनो।....अथाभिषेकमनया स्वनन्त्या वज्रघण्टया कुर्वीत। अनुत्तराशेषधर्मबोधाद् विकारकमिह प्राधान्यख्यापनाय हेतुकताप्रतिपादनाय च कारणभूतमपि वज्रघण्टाभिषेकमुल्लङ्घ्य प्रथमं वज्राभिषेकदानम्। सर्वधर्मा नामता इति प्रतिपादनार्थं भविष्यन्मुनीन्द्रपदोचितनामनिदानावदानार्थं च पूर्वनामव्यपनयेन स्वदेवताकुलगोत्रानुसारेण नामाभिषेकः। आचार्याभिषेकश्च वज्रसमय-घण्टासमय-मुद्रासमय-भव्यतानुज्ञा-व्रतव्याकरण-आश्वासलक्षणः। (अ० व० सं०, पृ० 36-38)

कायचतुष्टयम्

असंस्कृततथागतात्मकत्वाद् धर्मकायः, प्रतिभासमात्रत्वात् संभोगकायः, कल्पितनिर्माणकाय-त्वान्निर्माणकायः, कायत्रितयैकरसत्वात् स्वाभाविककायः। तदुक्तम्—

असंस्कृतमनोधर्मश्चोपसम्भोगलक्षणः ।
तदेव निर्मितं चित्रं बीजः सर्वस्वभावतः ॥

(अ० व० सं०, पृ० 40)

अत एव धर्माणामाश्रयः कायो धर्मकाय इत्याचक्षते।....तस्माद् युगनद्धकाय एव धर्मकायः साम्भोगिकस्वाभाविकाभ्यां पृथग्भूतो योगिप्रत्यात्मवेद्यः। (से० टी०, पृ० 57)

क्षणाः

चत्वारः क्षणाः—विचित्र-विपाक-विलक्षण-विमर्दाः। मध्ये विलक्षणं दत्त्वा सेके बोद्धव्यम्। हठयोगे पुनः सहजविलक्षणयोरन्ते स्थितिर्बोद्धव्या। सेकहठयोगे चेदं निर्दिष्टं भगवता।

(अ० व० सं०, पृ० 32)

क्षान्तिः

क्षान्तिश्च क्रूरतप्तकरपत्रादिघातसहनतया। (अ० व० सं०, पृ० 3)

गुह्याभिषेकः

प्रज्ञाश्रद्धाक्षेत्रीकरणार्थं समयरक्षणार्थं च समानकालोभयसम्पादितबोधिचित्तप्रदानं गुह्याभिषेकः। प्रज्ञोपायगुह्याभ्यां दीपयत इति व्युत्पत्तिः। (अ० व० सं०, पृ० 38)

घण्टासमयः

चतुरशीतिधर्मस्कन्धसहस्रपरस्त्वमिति प्रतिपादनाय घण्टासमयः।

(अ० व० सं०, पृ० 38)

चतुर्थाभिषेकः

प्रज्ञाज्ञानलक्षितसप्ताङ्गयुक्तसाध्यं चतुर्थार्थमित्येके। प्रज्ञाज्ञानमेव अभ्यस्यमानशरदमलगगनसंकाशं चतुर्थार्थमित्यपरे। प्रज्ञाज्ञानमेव प्रकृतिरूपं प्रकृतिसमुत्पादात्मकं युगनद्धाद्वयवाहिविशुद्धस्वभावं चतुर्थार्थमित्यपरे। पक्षान्तराणि च विस्तरभयान्नोच्यन्ते।

(अ० व० सं०, पृ० 39)

चतुर्ब्रह्मविहारः

सर्वसत्त्वेष्वेकपुत्रप्रेमाकारां मैत्रीम्, दुःखादुःखहेतोः संसारसागरात् समुद्धरणवाञ्छास्वभावां करुणाम्, रत्नत्रयशरणगमनात् समुल्लसन्मनःप्रभवां मुदिताम्, अध्यासङ्गपरिलक्षणामुपेक्षां च विभाव्य। (अ० व० सं०, पृ० 4-5)

जगत्

शून्यताकरुणाभिन्नं जगत्। (अ० व० सं०, पृ० २६)
हेतुफलात्मकं भवनिर्वाणैकरसतामात्रं जगत्। (अ० व० सं०, पृ० 42)

ज्ञानमुद्रा

ज्ञानमुद्रा स्वचित्तपरिकल्पिता विश्वमातादिदेवीस्वभावा, पूर्वानुभुक्तेति यावत्।

(से० टी०, पृ० 56)

ज्ञानमुद्रया स्पन्दसुखावस्था। स्पन्देति स्रावसाधर्म्यंक्षरस्यापि संग्रहः। एते (क्षरस्पन्दाख्ये) सुखावस्थे साक्षात्कृते कामरूपधात्वैश्वर्यलक्षणलौकिकसिद्धिसाधने। (से० टी०, पृ० 62)

त्रिशरणगाथा

नमो बुद्धाय गुरवे नमो धर्माय तायिने।
नम संघाय महते त्रिभ्योऽपि सततं नमः॥
रत्नत्रयं मे शरणं सर्वं प्रतिदिशाम्यघम्।
अनुमोदे जगत्पुण्यं बुद्धबोधौ दधे मनः॥
आबोधेः शरणं यामि बुद्धं धर्मं गणोत्तमम्।
बोधौ चित्तं करोम्येष स्वपरार्थप्रसिद्धये॥

उत्पादयामि वरबोधिचित्तं निमन्त्रयाम्यहं सर्वसत्त्वान् ।
इष्टां चरिष्ये वरबोधिचारिकां बुद्धो भवेयं जगतो हिताय ॥
देशना सर्वपापानां पुण्यानां चानुमोदना ।
कृतोपवासं चरिष्यामि आर्याष्टाङ्गिकपोषधम् ॥

(अ० व० सं०, पृ० 5-6)

धर्मंमुद्रा

धर्ममुद्रा धर्मधातुस्वरूपा निष्प्रपञ्चा निर्विकल्पा अकृत्रिमा उत्पादरहिता करुणास्वभावा परमानन्दैकसुन्दरोपायभूता । प्रवाहनित्यत्वेन सहजस्वभावायाः प्रज्ञायाः सहजोदयत्वेन भिन्ना या सा धर्ममुद्रेत्यभिधीयते । अन्यल्लक्षणं तस्याः संकुलाज्ञानान्धकारतरणिकिरणसदृशं गुरूपदेशतस्तृणतुषमात्राभ्रान्तिशल्यवर्जितं बोद्धव्यम् । सकलक्षितिजलपवनहुताशनैर्महाशबलितं त्रैलोक्यैकस्वभावं निस्तरङ्गशून्यताकरुणाभिन्नं च बोद्धव्यम् ।....ललना, रसना, तयोर्मध्यदेशे निवासिनी अवधूती । सैवाधिगतसकलपदार्थसहजस्वभावैकचित्तवृत्तेः सद्गुरूपदेशतो धर्ममुद्रा, महामुद्राया अभेदेन हेतुभूता । (अ० व० सं०, पृ० 33-34)

धर्मोदयः

तद्यथा भगवान् बुद्धः संबुद्धोऽकारसंभवः ॥
अकारः सर्ववर्णाग्र्यो महार्थः परमाक्षरः ।
महाप्राणो ह्यनुत्पादो वाग्व्याहारविवर्जितः ॥
सर्वैश्वर्यादिधर्माणां बुद्धानामुदयो यतः ।
स धर्मोदय आख्यातः पुण्यज्ञानमयः परः ॥

(से० टी०, पृ० 69-70)

ध्यानम्

ध्यानं च सर्वस्वभावानुगतानाभोगस्वरसवाहितया । (अ० व० सं०, पृ० 3)

नष्टचन्द्रः

सूर्यस्य षोडशी कला उष्णीषकमले गता सैव नष्टचन्द्र इत्याख्यातः । (से० टी०, पृ० 55)

नामाभिषेकः

ब्राह्मणादिवर्णानामेककल्कत्वाभिप्रायेणामुकवज्र इति नामकरणान्मैत्र्यादिचतुर्ब्रह्मविहारपरिपूर्त्या सर्वकालं रागद्वेषादिविशुद्धिनिवारणत्वेनेति नामाभिषेकः षष्ठः । (से० टी०, पृ० 21)

निमित्तम्

अपरं ज्वालादिबिन्दुपर्यन्तं षडन्यन्निमित्तं मायाजाले समाधिपटले प्रोक्तं भगवता । तद्यथा—

गगनोद्भवः स्वयम्भूः प्रज्ञाज्ञानानलो महान् ।
वैरोचनो महादीप्तिर्ज्ञानज्योतिर्विरोचनः ॥

जगत्प्रदीपो ज्ञानोल्को महातेजाः प्रभास्वरः ।
विद्याराजोग्रमन्त्रेशो मन्त्रराजो महार्थकृत् ॥

इति गाथाद्वयेन मायाजालेऽपरनिमित्तं भगवतोक्तं सन्ध्याभाषान्तरेण । पूर्वोक्तान्निरभ्रगगनाद् भवति प्रतिभासो यः स गगनोद्भवः स्वयम्भूः, सर्वविकल्परहितचित्तत्वादिति । अत्र प्रज्ञाज्ञानानल इति ज्वालाप्रतिभासः । वैरोचनो महादीप्तिरिति चन्द्रप्रतिभासः । स एव ज्ञानज्योतिर्विरोचन इति । जगत्प्रदीप इति सूर्यप्रतिभासः । ज्ञानोल्का इति राहुप्रतिभासः । महातेजाः प्रभास्वर इति विद्युत्प्रतिभासः । विद्याराजोग्रमन्त्रेश इति बिन्दुप्रतिभासो नीलवर्णचन्द्रमण्डलाकार इति । मन्त्रराजो महार्थकृदिति सर्वाकारत्रैधातुकभावप्रतिभासो मायास्वप्नप्रतिभासेन तुल्यो दृश्यते योगिना प्रत्याहारेणेति चक्षुरादीन्द्रियकरणेन । (से० टी०, पृ० 40-41)

निष्पन्दः

कर्ममुद्रां प्राप्य निष्पन्दफलमुत्पद्यते । सदृशस्पन्दो निष्पन्दः ।.....न तत् सहजं निष्पन्दम्, किन्तु सहजसदृशम् । तत्स्वरूपेण प्रज्ञाज्ञानानन्दत्रयं क्षणचतुष्टयान्वितं सेके । हठयोगे च कर्ममुद्राया निष्पन्दफलमुक्तम् । (अ० व० सं०, पृ० 32-33)

पञ्च ज्ञानानि

[1]आदर्श-समता-प्रत्यवेक्षणा-कृत्यानुष्ठान-सुविशुद्धधर्मधातुलक्षणानि । (अ० व० सं०, पृ० 37)

पञ्च तथागताः

मण्डलाधिष्ठितभूभागे चतुरस्रादिचतुर्णामन्यतममभिमतमण्डलकं कृत्वा तन्मध्ये विश्ववर्णाष्टदल-कमलवरटके सूर्यमण्डलोपरि नीलहूंकारपरिनिष्पन्नं भूस्पर्शमुद्राधरं कृष्णवर्णमक्षोभ्यम् । तदनु पूर्वदले शुक्लॐकारनिष्पन्नं शुक्लवर्णं बोध्यङ्गीमुद्राधरं वैरोचनम्, ततो दक्षिणदले पीतत्रांकारजं पीतवर्णं वरदमुद्राधरं रत्नसम्भवम्, ततः पश्चिमदले रक्तह्रींकारसम्भूतं रक्तवर्णं समाधिमुद्राधरममिताभम्, तत उत्तरदले श्यामखंकारजं श्यामवर्णमभयमुद्राधरममोघसिद्धिं च भावयित्वा.....। एते पञ्च तथागताः काषायवस्त्रप्रावृताः सोष्णीषाः शिरस्तुण्डमुण्डिताः सूर्यमण्डलस्थाः । वैरोचनः परं शशिमण्डली । ततश्चत्वारोऽक्षोभ्याभिमुखाः, अक्षोभ्यस्तु साधकाभिमुखः । (अ० व० सं०, पृ० ५)

पारमिता (दश)

दानं शीलं क्षमा वीर्यं ध्यानं प्रज्ञा उपायता ।
प्रणिधानं बलं ज्ञानं मताः पारमिता दश ॥

(अ० व० सं०, पृ० 12)

पूर्णः

क्लेशज्ञेयसमापत्त्यावरणवासनाया हरणमपगम एव पूर्णशब्देन व्यपदिश्यते । न ज्ञानच्छेदो न च तस्य पूरणम् । तदुक्तमागमे—

---

1. 'धी' प्रथम अंक, पृ० 82 की टिप्पणी देखिये ।

नित्योदितं तु बुद्धानां नाविद्यादुष्टचेतसाम् ।

(से० टी०, पृ० 62)

सरहपादैश्च—

जयति सुखराज एकः कारणरहितः सदोदितो जगताम् ।
यस्य च निगदनसमये वचनदरिद्रो बभूव सर्वज्ञः ॥

(से० टी०, पृ० 63)

बोधिचित्तस्य महासुखस्वभावो यः स पूर्णा भण्यते । इयमेव योगिभिः स्थिरीकरणीया ।····
पूर्णायामस्थिरीकृतो ह्यसौ सुखेन्दुः पुनः पुनरुत्पद्यते नश्यति च । (से० टी०, पृ० 64)

पोषधदानम्

प्रथमं तु पोषधदानम् । समन्वाहर भदन्ताचार्य ! अहमित्थंनामा अमुकनामा उपासको बुद्धं धर्मं संघं शरणं गच्छामि यावदाबोधिमण्डतः । एवं द्विरपि त्रिरपि । एवं त्रिशरणगतं मां वदन्तो धारयन्त्विति । समन्वाहर आचार्य ! अहममुकनामोपासक इमां वेलामुपादाय यावत् श्वः सूर्योदयमिहान्तरे सर्वप्राणिवधात्, परस्वहरणात्, अब्रह्मचर्यात्, वाग्भेदादनृतात्मकदोष-जननात्, पानात्, विकालाशनात्, मालावर्णकनृत्यगीतलभितात्, शयनाशनादुच्छ्रितादद्याहं विरतः करोम्यहं तावत् । तद्गुणैरष्टभिः पोषधगाथा । (अ० व० सं०, पृ० 3-4)

देशना सर्वपापानां पुण्यानां चानुमोदना ।
कृतोपवासं चरिष्यामि आर्याष्टाङ्गिकपोषधम् ॥

(अ० व० सं०, पृ० 6)

प्रज्ञा

ग्राह्यग्राहकरहिता स्वभावशून्यताधीः प्रज्ञा । (से० टी०, पृ० 47)

प्रज्ञा च सर्वधर्मानुपलब्धिलक्षणाधिगमनतया । (अ० व० सं०, पृ० 3)

तत्र ग्राह्यग्राहकाकारधारणी बुद्धिश्चतुर्धातुपञ्चस्कन्धस्वरूपषड्विषयात्मकाङ्गनास्वभावा प्रज्ञा । (अ० व० सं०, पृ० 39)

प्रज्ञा चित्रं विपाकश्च विमर्दश्च विलक्षणम् ।
अस्यास्तत्त्वमतो विद्धि येनासि जगतो विभुः ॥
प्रज्ञा भवः समश्चासौ त्रिकायं च त्रियानकम् ।
सैव चक्रं सुखोपायं योगिनां तदहं परम् ॥
मञ्जुवज्रो महामाया वज्रडाकस्तथाऽपरे ।
प्रज्ञैव भेदतो भाति युक्तिः सैव जिनात्मिका ॥

विज्ञायापगतं चित्तं निरालम्बमनुत्तरम् ।
शान्तं शुद्धं निराभासं वित्तिः प्रज्ञेति कीर्तिता ॥
(अ० व० सं०, पृ० 52)

प्रज्ञाज्ञानाभिषेकः

प्रज्ञाज्ञानमित्यत्र व्युत्पत्तिद्वयम्—प्रज्ञया ज्ञानम्, प्रज्ञैव बाह्यज्ञानम । तत्र ग्राह्यग्राहकाकार-धारणी बुद्धिश्चतुर्धातुपञ्चस्कन्धस्वरूपषड्विषयात्मकाङ्गनास्वभावा प्रज्ञा । तस्या निमित्त-भूताया बोधिचित्तज्ञानमिति पूर्वा व्युत्पत्तिः । आकारद्वयशून्या सैव विज्ञानमित्यपरा व्युत्पत्तिः । (अ० व० सं०, पृ० 38-39)

प्राणायामः

प्राणायामो नाम ललनारसनावामदक्षिणमार्गनिरोधः । अवधूतीमध्यभागे प्राणवायोः सदा प्रवृत्तिरिति । पूरककुम्भकरेचकयोगेनावधूत्यां ॐकारेण श्वासं हूंकारेण निरोधं आःकारेण निश्वासं चन्द्रसूर्यराहुस्वभावेन कुरुते योगीति प्राणायामाङ्गम् । (से० टी०, पृ० 38-39)

भव्यतानुज्ञा

मण्डलतत्त्वं मण्डलविशुद्धिलक्षणं देवतातत्त्वं देवताविशुद्धिलक्षणमाचार्यपरिकर्म च मण्डल-साधनज्ञानं पञ्चप्रदीपं चामृतभक्षणं च भव्यतातत्त्वं च नैःस्वाभाव्यम् । एषामुत्पन्नक्रमपक्षतो धर्मचक्रप्रवर्तनार्थमनुज्ञा (भव्यतानुज्ञा) । (अ० व० सं०, पृ० 38)

भावाः

भवन्ति हेतुप्रत्ययेभ्यः सकाशादिति भावाः स्कन्धधात्वायतनादिकाः स्थिरचलाः पदार्थाः । (से० टी०, पृ० 59)

भावना

ललाटे कायभावना । हृदि वाग्भावना । गुह्ये चित्तभावना । कायादिबिन्दूनां समाहार एकत्वं वज्रमणौ, तत्र ज्ञानभावना (से० टी०, पृ० 62)

मण्डलम्

मण्डलं सारमित्युक्तं बोधिचित्तं महत्सुखम् ।
आदानं तत् करोतीति मण्डलं मलनं मतम् ॥
(हे० त०, 2.3.7)

मन्त्रजापः

मन्त्रजापो नाम प्राणसंयमः । (से० टी०, पृ० 43)

महामुद्रा

महती चासौ मुद्रा चेति महामुद्रा । महामुद्रा निःस्वभावा ज्ञानज्ञेयाद्यावरणवर्जिता शरदमल-मध्याह्नगगनसंकाशा सकलसम्पदाधारभूता भवनिर्वाणैकस्वरूपा अनालम्बनकरुणाशरीरा

महासुखैकस्वरूपा।.........तया महामुद्रयाऽचिन्त्यस्वरूपया समयमुद्राख्यं फलं जायते।
(अ० व० सं०, पृ० 34-35)

महती चासौ मुद्रा च महामुद्रा। महत्त्वं पुनरस्याः सर्वाकारवरोपेतत्वं न प्रादेशिकत्वम्।.... फलमुद्रा तु महामुद्रा।........महत्त्वं चास्याः प्रहाणमहत्त्वेनाधिगममहत्त्वेन च। तत्र प्रहाण-महत्त्वं सर्वासनसर्वावरणप्रहाणलक्षणस्वाभाविकाख्यप्रभास्वरसाक्षात्करणलक्षणम्। अधिगम-महत्त्वं तु परिशुद्धसर्वबुद्धात्मकयुगनद्धाख्यकायसाक्षात्कारस्वभावम्। (से० टी०, पृ० 56-57)

महामुद्रया निष्पन्दाक्षरभावना तु सर्वज्ञत्वलक्षणलोकोत्तरसिद्धिसाधनी (से० टी०, पृ० 62)

मुद्रा

मुदं सुखविशेषं रतिं ददातीति मुद्रा।........मुदं परमाक्षरसुखज्ञानलक्षणां रतिं सर्वकालमादत्ते पूर्वावस्थाया अचलनयोगेनेति मुद्रा। (से० टी०, पृ० 56)

मुद्रासमयः

स्वेष्टदेवतास्वभावस्त्वमिति ख्यापयितुं मुद्रासमयः। (अ० व० सं०, पृ० 38)

युगनद्धकायः

संवृतिसत्यमेव च परमार्थसत्यात्मकप्रभास्वरपरिशुद्धमादर्शज्ञानादिरूपवैरोचनाद्याधेयदेवता-वृन्दं कूटागाराद्याधारमण्डलं च। तदेव लोकोत्तरमण्डलतया सर्वतन्त्रराजेषु गीयते। समस्त-बुद्धधर्मस्वभावतया चैतदेव सत्यद्वयाद्वैधीभावस्वभावं युगनद्धाख्यमुच्यते। तस्माद् युगनद्धकाय एव धर्मकायः सांभोगिकस्वाभाविकाभ्यां पृथग्भूतो योगिप्रत्यात्मवेद्यः। (से० टी०, पृ० 57)

योगाङ्गचतुष्टयम्

सेवा

सेव्यते मुमुक्षुभिरभ्यस्यत इति सेवा। धूमादिबिम्बदर्शनपर्यन्तं प्रत्याहाराङ्गं ध्यानाङ्गं च। सा खलूत्तमा सेवा ज्ञानामृतेनैव षडङ्गयोगेनैव कर्तव्या। (से० टी०, पृ० 36)

धूमादिनिमित्तभावना सेवा। (से० टी०, पृ० 36)

सेवाकाले महोष्णीषबिम्बं विभाव्य यत्नतः।
उपसाधनकाले तु बिम्बं चामृतकुण्डलीम्॥
साधने देवताबिम्बं भावयेद् योगतत्परः।
महासाधनकाले तु बिम्बं बुद्धाधिपं विभुम्॥

(से० टी०, पृ० 39)

अत्र सन्ध्याभाषान्तरेणोष्णीषबिम्बं बुद्धबिम्बं त्रैधातुकमशेषतः। आकाशे धर्मोदये चित्तवज्रं प्रतिष्ठाप्य सेवाकाले प्रथमकाले प्रत्याहारेण भावयेद् ध्यानाङ्गेन स्थिरीकुर्यादिति।
(से० टी०, पृ० 39)

एवं प्रत्याहारेण ध्यानेन सेवाङ्गमुच्यते। (से० टी०, पृ० 41)

उपसाधनम्

अमृतकुण्डलीबिम्बसंज्ञया सन्ध्याभाषान्तरेण वायुरुच्यते।........एवं बिन्दुस्थाने पिण्डरूपेण निरोधितः प्राणः। तेनैव तस्य धारणोच्यते। एवमङ्गद्वयेनोपसाधनममृतकुण्डलीबिम्बेनेति। तदेवोपसाधनं वज्रजाप इत्युच्यते।.... ...प्राणायामधारणोपसाधनमुच्यते।

(से० टी०, पृ० 41–42)

साधनम्

साधने देवताबिम्बमिति। इह धारणाबलेन नाभिस्थां चण्डालीं ज्वलितां पश्यति योगी सर्वावरणरहितां प्रतिसेनोपमां महामुद्रामनन्तबुद्धरश्मिमेघान् स्फारयन्तीं प्रभामण्डलविराजिताम्। तामनुस्मृतिं साधनमाह। (से० टी०, पृ० 42)

[1]महासाधनम्

धारणान्ते चण्डालीं योगी भावयेदिति नियमः। ततस्तस्या ज्ञानार्चिषा स्कन्धधात्वायतनादीनि दग्धान्येकलोलीभवन्ति। वामदक्षिणनाडीगतानि विज्ञानादीनि पृथिव्यादीनि च मण्डलस्वभावानि ललाटे चन्द्रमण्डले प्रविष्टानि। ततश्चण्डाल्या ज्ञानार्चिषा चन्द्रे द्रुते सति यद् बोधिचित्तं बिन्दुरूपेणाधोगतं कण्ठे हृदि नाभौ गुह्यकमले आनन्दपरमविरमस्वभावेन। ततो वज्रमणि यावत् सहजानन्दस्वभावेनेति। अथवा विचित्रविपाकविमर्दविलक्षणस्वभावेनेत्येवं षोडशकलापूर्णं मण्यन्तर्गतं यदा सुखं ददाति भावनाबलेन। (सुरत)सदृशमिति दृष्टान्तमात्रम्। स्वरूपतो द्वीन्द्रियजं (सुखं) कोटिसहस्रतमामपि कलां नार्हति परमाक्षरसुखस्येति। इहाक्षरसुखावस्था या सहजानन्दरूपिणी साऽवस्था काप्यविज्ञेया बालयोगिनाम्, (सा) बोधिसत्त्वैः शून्यतासमाधिरित्युच्यते, न पुनर्लौकिकरूढ्यैव नास्तिक्यार्थानुपातिनी। एवं षडङ्गयोगेन बुद्धत्वं योगिनां सिद्ध्यति। (से० टी०, पृ० 42)

योगी

योगः षडङ्गयोगो लब्धोत्कर्षपर्यन्तः, स योगो येषामस्ति ते योगिनो महावज्रधरपदप्राप्ताः।

(से० टी०, पृ० 60)

वज्रम्

यथा अक्षोभ्यमुद्रया ज्ञानं मौलं पृष्ठमन्यत्, तथा वज्रसत्त्वमुद्रया विज्ञानमपि पृष्ठं मौलं वज्रमिति स्यात्। उक्तं च वज्रशेखरे—

दृढं सारमसौशीर्यमच्छेद्याभेद्यलक्षणम्।
अदाहि अविनाशि च शून्यतावज्रमुच्यते॥

(अ० व० सं०, पृ० 32, 37)

---

1. सेवा, साधन, उपसाधन और महासाधन कालचक्र (4.113) में भी वर्णित हैं और सेकोद्देशव्याख्या (पृ० 43) में इनकी व्याख्या की गई है। वहीं (4.114) सेक के मृदु आदि भेदों का वर्णन है और उनकी व्याख्या से० टी० के 43-44 पृष्ठों पर देखी जा सकती है।

द्वादशाङ्गुलिपरिमाणेन द्वादशाङ्गप्रतीत्यसमुत्पादविशुद्ध्या वज्रम् । अभेद्यं वज्रमिति हेवज्रे ।
(अ० व० सं०, पृ० 37)

वज्रघण्टा

वज्रघण्टाऽपि पूर्वाभिसन्धानेन द्वादशाङ्गुलपरिमाणाऽधोमुखाम्भोजवज्रसमापत्तिनिःस्वभावत्वेन सर्वधर्मस्वभावं प्रतिपादयितुमभेद्यज्ञाननिगदतां धर्मोदयस्य बोधयितुं मूर्धाधोभागे च वज्रावली-युगलमालिनी । (अ० व० सं०, पृ० 37)

वज्रजापः

प्राणायाम इति वज्रजाप इति च मध्यमाभिन्नाङ्गत्वेन जप्तव्यः । (से० टी०, पृ० 33)
तदेवोपसाधनं[1] वज्रजाप इत्युच्यते । (से० टी०, पृ० 42)

वज्रधात्वीश्वरी

आसां (लोचना-मामकी-पाण्डरवासिनी-तारिणीनां) मध्ये आलिस्वभावा वज्रसत्त्वस्वरूपिणी वज्रधात्वीश्वरी नायिका । इयमेव भगवती तथता शून्यता प्रज्ञापारमिता भूतकोटिनैरात्म्येति व्यपदिश्यते । (अ० व० सं०, पृ० 43)

वज्रव्रताभिषेकः

रूपादिविषयचक्षुरादीन्द्रियसंशुद्धिः प्राकृतविषयनियमेन महामुद्रासिद्धिप्रापकत्वाद् वज्रव्रता-भिषेकः पञ्चमः । (से० टी०, पृ० 21)

वज्रसमयः

इतः प्रभृति असंस्कृतो भेदयुगनद्धवाहिबोधिधर्मसमयस्त्वमिति बोधयितुं वज्रसमयः ।
(अ० व० सं०, पृ० 38)

वज्रसत्त्वः

वज्रेण शून्यता प्रोक्ता सत्त्वेन ज्ञानमात्रता ।
तादात्म्यमनयोः सिद्धं वज्रसत्त्वस्वभावतः ॥
शून्यताकृपयोर्भेदः प्रदीपालोकयोरिव ।
शून्यताकृपयोरैक्यं प्रदीपालोकयोरिव ॥
भावेभ्यः शून्यता नान्या न च भावोऽस्ति तां विना ।
अविनाभावकमियत् कृतकानित्ययोरिव ॥
(अ० व० सं०, पृ० 24)

विश्वबिम्बम्

अन्तरालावलम्बितयाऽर्धोन्मीलितलोचनाभ्यां शून्य आकाशे ग्राह्यग्राहकरहिते यन्नानुकल्पितं स्वप्नवद् बिम्बं योगिप्रत्यक्षं तद्बिम्बं विश्वबिम्बम् । (से० टी०, पृ० 48)

---

1. उपसाधन शब्द का विवरण योगाङ्गचतुष्टय में देखिये ।

वीर्यम्

वीर्यं चाष्टलोकधर्माबाधोपसहनतया । (अ० व० सं०, पृ० 3)

व्रतव्याकरणम्

बाह्यव्रतनिराकरणार्थं वज्रव्रतदानम् । पृथिव्यादिस्वभावतासूचनाय व्याकरणम् । तथा हि भुवो धरादेः स्वः स्वरूपं भूर्भूया इति हि भूर्भुवःस्वरित्यस्यार्थः । (अ० व० सं०, पृ० 38)

शरीरदानम्

शरीरदानं कृत्वा चर्यां कृतवान्, "शरीरदानं दत्त्वा च पश्चात् चर्यां समारभेत्" (हे० त० 1.6.19) इति वचनात् । दानं दत्तं च शरीरावधि । (अ० व० सं०, पृ० 3)

शान्तम्

अष्टादशधातुविकाररहितम् । (से० टी० पृ० 60)

शीलम्

कायवाक्चेतसां सर्वसत्त्वार्थाय संवरणाच्छीलम् । (अ० व० सं०, पृ० 3)

शुद्धम्

क्लेशमलैरसंस्पृष्टम् । (से० टी०, पृ० 60)

शुद्धकायः

अप्रतिष्ठितनिर्वाणाख्यमहासुखसंज्ञकः शुद्धकायः ।....महासुखसंज्ञकशुद्धकायाद् विपरीतेन यः कायबिन्दुः स तुर्यावस्थाक्षयतः शुद्धकायः ।....धर्मसंभोगनिर्माणकायाः शुद्धकायात् स्फुरन्ति । (से० टी०, पृ० 55-56)

शून्यम्

प्राणिनां मरणान्ते स्कन्धपरित्यागादुत्पत्त्यंशिकस्कन्धग्रहणाद् यदन्तरालं शून्यतालक्षणमेकं त्रिभुवनदर्शनं तच्छून्यमित्युच्यते । (से० टी०, पृ० 43)

शून्यता

सर्वाकारवरोपेतशून्यतालक्षणा (अ० व० सं०, पृ० 40)

षट्पारमिता

दानं गोमयमम्बुना च सहितं शीलं च संमार्जनं
क्षान्तिः क्षुद्रपिपीलिकापनयनं वीर्यं क्रियास्थापनम् ।
ध्यानं तत्क्षणमेकचित्तकरणं प्रज्ञा सुरेखोज्ज्वला
एताः पारमिताः षडेव लभते कृत्वा मुनेर्मण्डलम् ॥

भवति कनकवर्णः सर्वरोगैर्विमुक्तः
सुरमनुजविशिष्टश्चन्द्रवद् दीप्तकान्तिः ।
धनकनकसमृद्धो जायते राजवंशे
सुगतवरगृहेऽस्मिन् कायकर्माणि कृत्वा ॥
(अ० व० सं०, पृ० 6)

समयमुद्रा

सम्भोगनिर्माणकायाकारस्वभावेन स्वच्छाकारेण च सत्त्वार्थाय वज्रधरस्य हेरुकाकारेण विस्फुरणं यत् सा समयमुद्रेत्यभिधीयते । तां च समयमुद्रां गृहीत्वा चक्राकारेण पञ्चविधं ज्ञानं पञ्चविधं परिकल्प्य आदर्श-समता-प्रत्यवेक्षणा-कृत्यानुष्ठान-सुविशुद्धधर्मधातुभिः, आदियोग-मण्डलराजाग्रि-कर्मराजाग्रि-बिन्दुयोग-सूक्ष्मयोगैः समयमुद्राचक्रं भावयन्त्याचार्याः ।
(अ० व० सं०, पृ० 35)

समाजः

समासतश्चित्तं समाजरूपीति । समासतः सर्वधर्माणामेकाकाररूपतो यदुत महासुखाकारतश्चित्त-मिति बोधिचित्तं समाजरूपीति । धर्ममुद्रामहामुद्राभिषेकरूपं वा ज्ञानं सत् समाज इत्यभि-धीयते । (अ० व० सं०, पृ० 35)

समारोपः

सकलकल्पनाकलङ्कानङ्किता महामुद्राभावना समारोपः । (से० टी०, पृ० 48/3)

सहजम्

सहजं सत् सर्वं सहजच्छायानुकारित्वात् सहजमित्यभिधीयते । सहजच्छाया सहजसदृशं ज्ञानं प्रतिपादयतीति । सहजं प्रज्ञाज्ञानम् । अत एव प्रज्ञाज्ञानात् सहजस्योत्पत्तिर्नास्ति । यस्मात् सहजं नाम स्वरूपं सर्वधर्माणामकृत्रिमम्, स्वलक्षणमिति यावत् ।........आचार्याः कुशलतया प्रज्ञाज्ञानमासाद्य सहजमनुभूतमिति कृत्वा सन्तोषमुत्पादयन्ति, सन्तुष्टाश्च सन्तो धर्ममुद्राया वार्तामपि न जानन्ति । धर्ममुद्रामजानानाः केवलया कर्ममुद्रया कृत्रिमया कथमकृत्रिमभूतं सहजाख्यं ज्ञानमुत्पद्यते । सजातीयात् कारणात् सजातीयस्यैव कार्यस्योत्पत्तिर्भवति, न तु विजातीयात् । यथा शालिबीजात् शाल्यङ्कुरोत्पत्तिर्भवति, न तु कोद्रवस्य । तथा धर्ममुद्राया अकृत्रिमायाः सकाशादकृत्रिमं सहजमुत्पद्यते ।........कर्माङ्गनाया आनन्दसन्दोहरत्नाकरं सरो-रुहम् । तत् स्वच्छमास्थानं बोलकक्कोलरससंयोगेन अवधूत्या संवृतिबोधिचित्तमण्यन्तर्गतं यदा भवेत्, क्षणिकनामापरं सहजाख्यं ज्ञानमुत्पद्यते । (अ० व सं०, पृ० 32-33)

सहजतनुः

आध्यात्मिकी विद्या प्रज्ञापारमिता प्रकृतिप्रभास्वरा महामुद्रा सहजानन्दरूपिणी धर्मधातु-निष्पन्दपूर्णावस्था सहजतनुरित्युच्यते । (से० टी०, पृ० 69)

बिन्दुः शून्यो भवति। स च बिन्दुरच्युतः सन् परमाक्षर उच्यते। परमाक्षरोऽप्यकारः। अकारसंभवः सम्यक्संबुद्धः प्रज्ञोपायात्मको वज्रसत्त्वो नपुंसकपदं सहजकाय इत्युच्यते।.... स च कालचक्रो भगवान् परमाक्षरः सुखपदम्। (से० टी०, पृ० 69)

सादृश्यम्

सादृश्यं यथा दर्पणार्पितं मुखस्य प्रतिबिम्बं मुखं न भवति। न पूर्वं सिद्धिर्नाप्यधुना सिद्धयति। तदेव मुखप्रतिबिम्बं सादृश्यमात्रमापादयति, तथापि लोकाः स्वमुखं दृष्टमिति कृत्वा भ्रान्त्या सन्तुष्टा भवन्ति। (अ० व० सं०, पृ० 32-33)

सिद्धिः

सिद्धिस्त्रैधातुकेश्वरत्वम्। (से० टी०, पृ० 47)

सुखम्

सुखं द्वीन्द्रियजं तत्त्वं देवानां रागिणां स्मृतम्।
त्रैलोक्याचारनिर्मुक्तं बुद्धानां सुखमक्षरम्॥
हसितेक्षणादिनिर्मुक्तं सर्वद्वन्द्वविवर्जितम्।
कार्यकारणनिर्मुक्तं त्रैलोक्याभासमद्वयम्॥
अप्रतिष्ठं यथाऽऽकाशं व्यापि लक्षणवर्जितम्।
उक्तं तत्परमं तत्त्वं वज्रज्ञानमनुत्तरम्॥
अप्रतिष्ठं यथाऽऽकाशं व्यापि लक्षणवर्जितम्।
अनिर्देश्यमरूपं च एतत्तत्त्वस्य लक्षणम्॥
यद्विशुद्धमिवाकाशमज्ञानतिमिराकुलैः।
चन्द्रकैरिव संछन्नं वस्तुभिर्वेद्यते जिनैः॥

(से० टी०, पृ० 58-59)

सेकः

बाह्यवारिणेव बाह्यमलस्य अविद्यामलक्षालनाय सिच्यतेऽनेनेति सेकः।

(अ० व० सं०, पृ० 36)

स्वभावः

स्वभावश्चैवा[ना]द्यनुत्पन्नं न सत्यं न मृषेति च।....पञ्चाकाराणां प्रतीत्यसमुत्पन्नानां पञ्चतथागतस्वभावत्वम्, स्वभावस्य च शून्यताकरुणाऽभिन्नत्वात् शून्यताकरुणाऽभिन्नं जगदिति स्थितम्।....

प्रतीत्यसम्भवादेव गन्धर्वपुरवत् स्फुटम्।
न स्वभावस्थितं विश्वं नाकाशाम्भोजसंनिभम्॥

उक्तं च हेवज्रे[1]—

अमी धर्मास्तु निर्वाणं मोहात् संसाररूपिणः ।

(अ० व० सं०, पृ० 26-27)

स्वाधिष्ठानम्

स्वाधिष्ठानं नाम संवृतेः सत्यदर्शनम् । (से० टी०, पृ० 40)

मायास्वप्नगन्धर्वपुरप्रतिसेनादिवदकल्पितमशेषस्कन्धधात्वायतनादिदर्शनं संवृतिसत्यदर्शनं स्वाधिष्ठानं चोच्यते । (से० टी०, पृ० 47) ।

हठयोगः

इदानीं हठयोग उच्यते । इह यदा प्रत्याहारादिभिर्बिम्बे दृष्टे सत्यप्यक्षरक्षणं नोत्पद्यतेऽयन्त्रित-प्राणतया, तदा नादाभ्यासाद् हठेन प्राणं मध्यमायां वाहयित्वा प्रज्ञाब्जगतकुलिशमणौ बोधिचित्तबिन्दुनिरोधादक्षरक्षणं साधयेन्निष्पन्देनेति हठयोगः । नादाभ्यासोऽत्रैवोक्तः ।

(से० टी०, पृ० 45)

हूंकारः

मध्यवृत्तेर्निरुत्तरधर्मतासूचको हूंकारः । तस्यार्थः—ह् इति हेतुवियुक्तः, ऊ इति ऊहापगतः, अं इति अप्रतिष्ठितसर्वधर्म इति । (अ० व० सं०, पृ० 37)



1. हे० त० 2.4.34 द्रष्टव्यम् ।

अद्वयवज्रसंग्रह के पांच परिशिष्ट

—व्रजवल्लभ द्विवेदी, महेन्द्ररत्न वज्राचार्य—

[अद्वयवज्र के छोटे-बड़े 21 ग्रन्थों का प्रकाशन गायकवाड़ ओरियण्टल सिरीज, बड़ोदा से अद्वयवज्रसंग्रह के नाम से सन् 1927 में हुआ था । इसके प्राक्कथन में महामहोपाध्याय श्रीहरप्रसाद शास्त्रीजी ने इन सभी ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय दिया है । "न्यू कैटलागस् कैटलागरम्" में इन ग्रन्थों की तथा अद्वयवज्र के अन्य ग्रन्थों की मातृकाओं का तथा प्रकाशित ग्रन्थों का विवरण मिलता है । तदनुसार इनके अमनसिकाराधार का प्रकाशन ओरियण्टल कान्फ्रेन्स की 20वीं प्रोसीडिंग के भाग 2, पृ० 93-107 में हुआ है । सरहपाद कृत दोहाकोश की इनकी व्याख्या डॉ० प्रबोधचन्द्र बागची द्वारा कलकत्ता संस्कृत सिरीज में सन् 1938 में प्रकाशित कराई गई थी । साधनमाला में इनके सिंहनादसाधन, वज्रवाराहीसाधन और गुप्ताक्षरसाधन का प्रकाशन हुआ । अद्वयवज्रसंग्रह में चतुर्मुद्रा के नाम से प्रकाशित ग्रन्थ का नाम वस्तुतः मुद्राबन्ध है और यह नागार्जुन की कृति है । अद्वयवज्र की कृति के रूप में प्रसिद्ध कुछ अन्य ग्रन्थों की भी सूक्ष्म परीक्षा अपेक्षित है ।

इन ग्रन्थों के पुष्पिका वाक्यों में अद्वयवज्र को पण्डित, महापण्डित, ब्राह्मण, अवधूत, उपाध्याय, आचार्य, महाचार्य आदि विशेषणों से अलंकृत किया गया है । तिब्बत में ये अवधूतीपाद या मैत्रीपाद के नाम से प्रसिद्ध हैं और इनकी भी गणना सिद्धों में की जाती है । "धीः" के इसी अंक में प्रकाशित हो रहे "सिद्ध एवं अपभ्रंश साहित्य का सर्वेक्षण" शीर्षक निबन्ध में मैत्रीपाद के नाम से उनका परिचय दिया जा रहा है ।

साधनमाला के उपोद्घात में डॉ० विनयतोष भट्टाचार्य ने इनका समय 978-1030 ई० निर्धारित किया है । वहीं उन्होंने यह भी बताया है कि ये ललितगुप्त के गुरु थे । तिब्बती तंजूर के आधार पर डॉ० भट्टाचार्य ने इनके 54 ग्रन्थों के नाम उद्धृत किये हैं और निश्चित रूप से इनको बंगाल का निवासी माना है ।

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन ने अपने "दोहाकोश" के छठे परिशिष्ट में पण्डित अद्वयवज्र की जीवनी दी है । संस्कृत भाषा में लिखी यह संक्षिप्त जीवनी उनको नेपाल में मिली थी । राहुल जी इनको दीपंकर श्रीज्ञान के विद्यागुरु मानते हैं, जो 11वीं सदी के मध्य में तिब्बत गये थे । राहुलजी के अनुसार ये दसवीं सदी के अन्त में मौजूद थे । सम्भव है कि 11वीं सदी के प्रथम पाद में वे जीवित रहे हों । इस तरह से डॉ० भट्टाचार्य द्वारा निर्धारित समय की इससे पुष्टि हो जाती है ।

संस्कृत भाषा में उपलब्ध उक्त जीवनी के अनुसार इनका जन्मस्थान कपिलवस्तु के पास का धोतकरणी नाम का गाँव था । ये ब्राह्मण जाति के थे और इसके पिता का नाम नानूक तथा माता का नाम सावित्री था । इनका बाल्यकाल का नाम दामोदर था । वेद और व्याकरण का अध्ययन समाप्त कर इन्होंने बौद्ध शास्त्रों का अध्ययन नारोपाद और महापण्डित रत्नाकरशान्ति से किया । विक्रमशील विद्यापीठ में इन्होंने महापण्डित ज्ञानश्रीमित्र से दो वर्ष पर्यन्त प्रमाणशास्त्र

का अध्ययन किया। इस संक्षिप्त जीवनी में उनकी बंगाल, उड़ीसा तथा आन्ध्रप्रदेश (धान्यकटक) की यात्रा भी वर्णित है। विक्रमशील में इन्होंने संमितीय निकाय की परिपाटी के अनुसार भिक्षु दीक्षा ली, नाम मिला मैत्रीगुप्त(पाद)। इससे उस तिब्बती परम्परा को समर्थन मिलता है, जिसके अनुसार ये मैत्रीपाद के नाम से प्रसिद्ध हैं।

अद्वयवज्र अपने ग्रन्थों में कश्मीर वैभाषिक मत की तथा वज्रपीठ के गगनगर्भ की चर्चा करते हैं। भास्कर मत का वे तीन बार उल्लेख करते हैं। शैव-निर्नादतन्त्र, उच्छुष्मतन्त्र तथा विज्ञानभैरव के श्लोकों को भी वे उद्धृत करते हैं। आगम, स्वसंवित्ति और सद्गुरु को वे समान रूप से प्रमाण मानते हैं। "नापनेयम्" इत्यादि आलोकमाला के वचन को उद्धृत करते हैं। स्वसंवित्ति और प्रकाश शब्द का अनेक बार प्रयोग करते हैं तथा एक स्थल (पृ० 57) पर प्रकाश को देवतात्मक कहते हैं। इससे हम यह सोचने को बाध्य हैं कि अद्वयवज्र का कश्मीर से भी किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध अवश्य रहा होगा। अद्वयवज्र के अध्ययन को परिपूर्ण करने के लिए इनके प्रकाशित और अप्रकाशित सभी ग्रन्थों का परिष्कृत संस्करण किया जाना चाहिये।

अद्वयवज्र के उक्त संस्करण के विद्वत्तापूर्ण उपोद्घात में अनेक दार्शनिक तथा तान्त्रिक साधना सम्बन्धी विषयों पर अच्छा प्रकाश डाला गया है, किन्तु परिशिष्टों के अभाव में शोधार्थियों के लिए यह संस्करण उतना उपयोगी नहीं बन पाया है। अतः विभिन्न आचार्यों, उनकी कृतियों और विशेष रूप से तत्त्वरत्नावली, पञ्चतथागतमुद्राविवरण आदि में निर्दिष्ट विभिन्न मत-मतान्तरों, उनके सिद्धान्तों तथा बौद्ध तन्त्रों में प्रयुक्त विशिष्ट शब्दों से पाठक सरलता से परिचित हो सकें, इसके लिए प्रस्तुत अंक में उक्त ग्रन्थ से संबद्ध पाँच परिशिष्ट दिये जा रहे हैं। अद्वयवज्र द्वारा उद्धृत वचनों के स्थल-निर्देश का भी प्रयत्न किया गया है। इस पूरे संग्रह में उद्धृत वचनों के अतिरिक्त विद्यमान सभी वचनों की श्लोकानुक्रमणी भी यहाँ दी जा रही है। अन्त में दी गयी विशिष्ट पद-सूची में इस ग्रन्थ की विषयानुक्रमणिका का भी समावेश कर दिया गया है।]

(क) ग्रन्थ-ग्रन्थकारानुक्रमणी

●

(ख) मत-मतान्तरानुक्रमणी

●

(ग) उद्धृतवचनानुक्रमणी

संकेतसूची

अ धा.	अविकल्पप्रवेशा धारणी
उ.त.	उच्छुष्मतन्त्रम्
च.प्र.	चतुःप्रदीपः
च.स्त.	चतुस्तवः
ज्ञा.म.	ज्ञानालोकालङ्कारमहायानसूत्रम्
डा.व.प.	डाकिनीवज्रपञ्जरम्
त्रि.गा.	त्रिशरणगाथा
द.सू	दशभूमिसूत्रम्
ना.पा.	नागार्जुनपादः
ना.सं.	नामसंगीतिः
बो.च.	बोधिचर्यावतारः
प्र.पा.	प्रज्ञापारमिता
प्र.वा.	प्रमाणवार्त्तिकम्
भ.गी.	भगवद्गीता
म.वि.	महायानविंशिका
म.शा.	मध्यमकशास्त्रम्
ल.सू.	लङ्कावतारसूत्रम्
व.शे.	वज्रशेखरः
वि.भै.	विज्ञानभैरवः
वे.वा.	वेदान्तवादिनः
शै.नि.त.	शैवनिर्नादितन्त्रम्
स.पा.	सरहपादः
स.पू.	सद्धर्मपुण्डरीकम्
से.नि.	सेकनिर्णयः
से.ह.यो.	सेकहठयोगः
हे.त.	हेवज्रतन्त्रम्

(घ) अद्वयवज्रसंग्रहश्लोकार्धानुक्रमणी

●

(ङ) विशिष्टपदसूची

दुर्लभ ग्रन्थों की

इस शीर्षक से "धी:" के प्रथम अंक में २८ ग्रन्थों की आधार सामग्री की सूचना दी गयी थी, वहीं इस योजना का संक्षिप्त परिचय भी दिया गया था। तदनुसार प्रस्तुत अंक में अन्य १४ ग्रन्थों एवं

Title	Author	Institution	Ms. No.
अध्यात्मसारशतक Adhyātma-sāra-śataka	Prabhākara- Gupta	SMTUL	340-III
अध्यात्मसार (सटीक) Adhyātma-Sāra (Saṭika)		RAK	3/716
		RAK	Reel No. B 60/6
		SMTUL	2
त्रिसमयराजतन्त्रटीका Trisamaya-rāja-Tantra-Tikā		RAK	5/20
दशतत्त्वसंग्रह Daśatattva-saṁgrha	Ksitigarbha	IASWR	MBB-II-208
		RAK	3/361
निष्पन्नयोगाम्बरतन्त्र Niṣpanna-yogāmbara Tantra		RAK	4/1029
		GOS	13175/44
		,,	13280/45
		CABATON	64
नैरात्म्ययोगिनीतन्त्र Nairātmya-yoginī Tantra		RAK	Reel No. E 593/26
		,,	3/283
		,,	5/2211
		,,	4/127

आधार सामग्री

२ टीकाओं की आधार सामग्री का परिचय दिया जा रहा है। भविष्य में सुविधा मिलने पर इन ग्रन्थों के चीनी तथा जापानी संस्करणों का परिचय देने का भी प्रयत्न किया जायगा।

Material	Script	Folio	Comp./Incomp.	Other Information
P	NC	1-16a		
PL	N.	40	Incomp.	Ph. P. S. S. Uni.
P	Dev.	39	Incomp.	
		43		
PL	Māgadhī	34	Prakīrṇa	
PL		31		M.F. CIHTS
,,	N.	31	Comp.	In Note Book
				Pro. J. Upa.
NP	N.	113	Comp.	
		61		Photo Copy
		82		,,
IP	Dev.	140		
	N.	114	Incomp.	
NP	Dev.	22	Comp.	M. Film. S. S. Uni.
,,	,,	108	,,	
,,	,,	19	,,	

Title	Author	Institution	MS. No.
		,,	5/114
		IASWR	MBB-I-19
बुद्धकपालतन्त्रटीका			
(Sri-Buddhakapālmahātantrarāja-ṭikā abhayapaddhati-nāma.)	Abhayākara Gupta	RASB	3827/97
No. 1654 (Ra-166b[1]-225b[3])		RAK	5/21
Dpal saṅs-rgyas thod-Paḥi rgyud-kyi rgyal-Po Chen-Poḥi rgya-cher-ḥgrel-pa ḥjigspa med-paḥi gshuṅ ḥgrel shes-bya ba.			
A. Abhayākara gupta.			
T. Diṅ-ri Chos-grags (?)			
R. Blo-gros brtan-pa.			
भूतडामरतन्त्र			
Bhūtaḍāmaramahātantrarāja-nāma.		GOS	13247/58
No. 747 (Dsa.238a[1]-263a[7])		,,	13692/59
Ḥbyuṅ-po ḥdul-ba shes-bya-baḥi rgyud kyi rgyal-po Chen-Po		SMTUL	273
		,,	274
T. Buddhākaravarmā, Chos-kyi Śes-rab.		JBORS	1. 3-39
Tasiho No. 1129		RAK	3/604
Nj. No. 1031		,,	5/1
		,,	3/2646
		,,	5/4
		IASWR	MBB-I-129
		CABATON	80

Material	Script	Folio	Comp./Incomp.	Other Information
NP	Rañjnā	100	Comp.	
,,		37		M.F. CIHTS
PL	N.	69	Comp.	
,,	,,	22	Demage	
		33		
		104		
IP	N.	48		
PL	,,	53		
	Vertul	23	Incomp.	
NP	Dev.	15		
,,	N.	50		
,,	Dev.	39		
,,	N.	56		
				M.F. CIHTS
IP	Dev.	130		

Title	Author	Institution	MS. No.
मञ्जुश्रीज्ञानतन्त्र	Mañjughoṣa	RAK	3/303
MañjuśrījñānaTantra		,,	Reel No. A 136/11
योगराजतन्त्र		IASWR	MBB-III-23
Yogarāja Tantra		PCHVV	
वज्रडाकमहातन्त्र		RASB	3825/72
Vajraḍāka Mahātantra			
No. 370 (Kha. 1b1-125a7)			
Rgyud-kyi rgyal-po Chen-Po		SMTUL	343
dpal rdo-rje mkhaḥ-ḥgro shes bya-ba.			
Śrī-Vajra ḍaka nāma-Mahātantrarāja			
T. Gayādhara, Hgos Lhas-btsas.			
वज्रामृततन्त्र		JBORS	x. 2.32
Vajrāmṛta Tantra			
No. 435 (Ca. 16b5-27a6)			
Rdo-rje bdud-rtsiḥi rgyud.			
T. Jo zla-baḥi ḥod-zer.			
वज्रामृततन्त्रपञ्जिका	Vimalabhadra	JBORS	x. 3.33
Vajrāmṛt Tantra Pañjikā			
No. 1649 (Ra. 1b1-15b6)			
Dpal rdo-rje bdud-rtsiḥi dkaḥ-ḥgrel.			
A. Dri-med bzaṅ-Po		,,	xxxv. 7.303
R. Ren-chen grub.			
योगाम्बरतन्त्र		GOS	13284/66
Yogāmbar Tantra		RAK	4/2159

Material	Script	Folio	Comp./Incomp.	Other Information
NP	N.	44	Comp.	
	,,	45		Photo Print S. S. Uni
NP		33		M.F. CIHTS
		33		
PL	N.	126	Incomp.	
,,	Siddhānta	108	Comp.	Good MS.
	Vertul	8	Comp.	
	Vertul	7	Comp.	
	Māgadhi	7	Comp.	
		20		
NP	N	68	Comp.	

Title	Author	Institution	MS. No
		RAK	Reel No. E. 629/3
		I SWR	MBB-II-120
		CABATON	94
		,,	67
योगिनीजालमहातन्त्र Yoginījāla Mahātantra		IASWR	MBB-I-21
		RAK	3/667
		GOS	13253/67
रक्तयमारितन्त्र Śrī Raktayamāri tantra No. 474 (Ja.186a[1]-214b[7]) Dpal gśin-rjeḥi-gśed dmar-po Shes-bya baḥi rgyud-kyi rgyal-po. T. Candrakırti, Grags-pā rgyal-mtshan.		JBORS	v 5.14

Material	Script	Folio	Comp./Incomp.	Other Information
NP	N	45	Comp.	
,,		56		M.F. CIHTS
IP	N	125		
NP		43		M F. CIHTS
,,	Dev.	58	Comp.	
		49		
	Vertul		Comp.	

बौद्ध तन्त्रों में वायु एवं चक्रों का वर्णन(२)

—ठाकुरसेन नेगी—

[योग में प्राण पर विजय प्राप्त करने वाली क्रिया को प्राणायाम कहते हैं। योग के छः बहिरंग साधनों में प्राणायाम का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राणायाम के द्वारा ही वज्रयानी साधक प्राण को नियन्त्रित करते हैं। वे जानते हैं कि चित्त और प्राण का अत्यधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्राण से चित्त जुड़ा हुआ है। अतः प्राण पर काबू पाने पर चित्त पर काबू पाना स्वतः सरल हो जाता है।

वज्रयानी साधक प्राण और अपान की साधना मन्त्रयोग की सहायता से करते हैं। उसमें पूरक, कुम्भक और रेचक तीन क्रियाएँ होती हैं। इन तीन क्रियाओं में क्रमशः 'ओं आः हूं' तीन वर्णों के मन्त्र का जाप होता है। प्राण-अपान वायु के नियन्त्रण के लिए मन्त्र का प्रयोग विहित है। इस वज्रजाप से सम्पन्न प्राण-अपान के नियन्त्रण से चित्त की अधोगति बाधित होती है तथा वह ऊर्ध्वमुख हो अन्त में उष्णीष चक्र में महासुख का पान करता है। चित्त की अधोगति के नियन्त्रण के लिए हठयोग की मुद्राओं, आसनों और प्राणायाम का भी विधान है।

प्रस्तुत निबन्ध में प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान नामक पाँच मूल वायुओं तथा नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनंजय नामक पांच अंग वायुओं की उत्पत्ति के सिद्धान्त का विवेचन कर उनके स्वरूप और कृत्यों का विवरण देते हुए उनके बीजाक्षरों का उल्लेख किया गया है।

पाँच मूल वायुओं तथा पाँच अंग वायुओं का वर्णन करने के बाद यहाँ हृदय, ललाट, कण्ठ तथा नाभि नामक चार चक्रों में इन वायुओं की संचार की प्रणाली का भी विवरण दिया गया है।

वज्रमाला तन्त्र में कहा गया है कि वायु की प्रयोग या अनुयोग विधि का ज्ञान होने से योगी संसार से पार होकर बुद्धत्व प्राप्त करता है, परन्तु वायु और कल्पना स्वभाव से मुक्त न होने तथा उसी का अनुसरण करने पर संसार में चक्कर काटते हुए सत्त्व को दुःखानुभूति होती है। इसलिए ज्ञान के मर्मबद्ध होने पर, कर्म वायु के द्वारा ज्ञान वायु के विशुद्ध होने पर, संसार के समुच्छेद का प्रतिपक्ष भी वायु द्वारा ही सिद्ध होता है।]

सर्वविदित है कि योगाभ्यास में प्राण पर विजय प्राप्त करने वाली क्रिया को प्राणायाम कहते हैं। योग के छः बहिरंग साधनों में प्राण का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राणायाम के द्वारा ही वज्र-यानी साधक प्राण को नियन्त्रित करते हैं, क्योंकि वे यह जानते हैं कि चित्त और प्राण का अत्यधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्राण से चित्त जुड़ा हुआ है। अतः प्राण पर नियन्त्रण (काबू) पाने पर चित्त पर काबू पाना स्वतः सरल हो जाता है। शरीर और विश्व में प्राण ही शक्ति है। इस शरीर की शक्ति को, जो हमारे भीतर निरन्तर स्पन्दित होती रहती है, हम अपने फेफड़ों की गति के द्वारा नियन्त्रित कर सकते हैं। प्राण का नियन्त्रण चित्त के नियन्त्रण के लिए तथा चित्त का नियन्त्रण आध्यात्मिक विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक है, लेकिन चित्त को वश में करना सरल नहीं है। उसके लिए

दीर्घ काल तक प्राण पर नियन्त्रण का अभ्यास अपेक्षित है। अन्यथा चित्त पर काबू पाना असम्भव है। प्राणायाम के लिए आसन का सिद्ध होना आवश्यक होता है। बिना आसन के सिद्ध हुए मन की चंचलता बनी रहती है, जिसके कारण प्राण भी स्थिर नहीं हो पाते। अतः प्राणायाम का अधिकारी वही है, जिसको आसन सिद्ध हो गया हो। चित्त को स्थिर करने के लिए शरीर की स्थिरता बहुत ही आवश्यक है, जो आसन के द्वारा होती है। आसन के सिद्ध होने के पश्चात् श्वास-प्रश्वास की स्वाभाविक गति को रोकना ही प्राणायाम कहलाता है। बाहर से वायु का भीतर प्रवेश, जिसे श्वास कहते हैं, तथा शरीर के भीतर की वायु का बाहर निकालना, जिसे प्रश्वास कहते हैं, दोनों ही निरन्तर स्वाभाविक रूप से जारी रहते हैं। इनकी स्वाभाविक गति के निरोध को ही प्राणायाम कहते हैं। श्वास-प्रश्वास के गतिविच्छेद के साथ-साथ चित्त की गति का विच्छेद होना ही यथार्थ प्राणायाम है[1]। गुह्यसमाज में कहा भी है—

प्रत्याहारस्तथा ध्यानं प्राणायामोऽथ धारणा।
अनुस्मृतिः समाधिश्च षडङ्गो योग उच्यते॥

वज्रयानी साधक प्राण और अपान की साधना मन्त्रयोग की सहायता से करते हैं। उसमें पूरक, कुम्भक और रेचक तीन क्रियाएँ होती हैं। इन तीन क्रियाओं में क्रमशः 'ओं आः हूं' तीन वर्णों के मन्त्र का जाप होता है। इस वज्रजाप से सम्पन्न प्राण-अपान के नियन्त्रण के लिए मन्त्र का प्रयोग विहित है। इस वज्रजाप से सम्पन्न प्राण-अपान के नियन्त्रण से चित्त की अधोगति बाधित होती है तथा वह ऊर्ध्वमुख होकर ऊर्ध्वगत होता हुआ अन्त में उष्णीषकमल (उष्णीषचक्र) में महासुख का पान करता है। इस साधनात्मक और आध्यात्मिक यात्रा को महायान में बोधिसत्त्व की दशभूमियों की यात्रा के रूप में कल्पित किया गया है। चित्त की अधोगति के नियन्त्रण के लिए हठयोग की मुद्राओं, आसनों और प्राणायाम का भी विधान है।[2]

प्राण वायु तथा उसका विकासक्रम

संसार और निर्वाण के सभी धर्मों का आश्रय (आधार) महा अनाहत वायु है। यह वायु अभिहित (अभिलाप) करने पर प्राण है और यह ह्रस्व 'अ' के स्वभाव में स्थित है। यही प्राण कहा जाता है। स्वर तथा व्यंजन आदि सभी अक्षर इससे उत्पन्न होते हैं, अतः यह अनभिलाप्य (अवाच्य) है तथा अनभिलाप्य होते हुए ही यह सभी अभिलाप का आश्रय है।[3] आर्यमंजुश्रीनामसंगीति में कहा भी है—

---

1. द्रष्टव्य—एन इंट्रोडक्शन टू तान्त्रिक बुद्धिज्म, दासगुप्त, पृ० 185-186
2. सेकोद्देशटीका, नरोपा कृत।
   गुह्यसमाजतन्त्र, विनयतोष भट्टाचार्य सम्पादित।
3. (क) अमृतकणिका श्रीनामसंगीतिटिप्पणी, चतुर्दश गाथा हस्तलेख, ल० सं० च० 21 राष्ट्रीय अभिलेखालय, काठमाण्डू।
   (ख) अमृतकणिकोद्योतनिबन्ध चतुर्दश गाथा। हस्तलेख ल० सं० तृ० 655 राष्ट्रीय अभिलेखालय, काठमाण्डू।
   (ग) नाममन्त्रार्थावलोकिनी नामसंगीतिटीका, वज्रधातुमहामण्डलगाथा चतुर्दश। हस्तलेख संख्या एम० बी० बी० 1-117, इन्स्टीटयूट फार एडवांस स्टडीज आफ वर्ल्ड रिलीजन।

तद्यथा भगवान् बुद्धः सम्बुद्धोऽकारसम्भवः।
अकारः सर्ववर्णाग्र्यो महार्थः परमाक्षरः॥
महाप्राणो ह्यनुत्पादो वागुदाहारवर्जितः।
सर्वाभिलापहेत्वग्र्यः सर्ववाक् सुप्रभास्वरः॥

अक्षरों पर वशीकृत्य से यह सभी स्वर तथा व्यञ्जन का मूल 'अ' अक्षर है।

वायुओं पर वशीकृत्य से यह सभी 10 वायुओं का मूल प्राण वायु है, जो 'अ' की आकृति वाला है। ज्ञान पर वशीकृत्य से परमाक्षर महासुख को ही 'अ' कहकर अभिहित किया गया है। सभी धर्मों का मूल या आधार होने के कारण इस वायु को प्राणवायु कहा गया है। अतः इसी से संसार-निर्वाण के सभी धर्मों का अवभास या प्रतिभास होता है।

पाँच मूल वायु

1. प्राण वायु का स्वरूप और प्राधान्य

वज्रदेह के उत्पन्न होते समय प्रारम्भ में शुक्रशोणित (श्वेत-रक्त) के मध्य स्थित होने के कारण तथा आलयविज्ञान के आसेवित होते समय अभिसंस्कार चित्त की चंचलता का आधार होने के कारण यह प्राण वायु कहा जाता है। सत्त्व या प्राणियों के देहाश्रय काल तथा विज्ञान और ऊष्म के आधार काल में यह महा प्राणवायु होता है। पाँच अक्षरों में यह ह्रस्व 'अ' की आकृति वाला है तथा पाँच धातुओं में यह आकाशधातु के स्वभाव (स्वरूप) वाला है।

अपान वायु

पांच धातुओं में यह पृथिवीधातु स्वभाव है तथा पाँच अक्षरों में 'ऌ' अक्षर के आकार वाला है।

उदान वायु

पाँच धातुओं में यह अग्निधातु स्वभाव वाला तथा पाँच अक्षरों में 'ऋ' अक्षर के आकार वाला है।

समान वायु

पाँच धातुओं में यह वायुधातु स्वभाव वाला तथा पाँच अक्षरों में 'इ' अक्षर के आकार वाला है।

व्यान वायु

पाँच धातुओं में यह अप्धातु स्वभाव वाला तथा पाँच अक्षरों में 'उ' अक्षर के आकार वाला है।

इस प्रकार महा प्राणवायु सभी मूल वायुओं का आधार होने के कारण यह महाशून्य के पाँच अक्षरों के स्वभाव में स्थित होता है तथा अन्य चार मूल वायु भी इसी के गुण से निःसृत होकर

उत्पन्न होते हैं। इन पाँच मूल वायुओं का विस्तार से वर्णन निम्न तन्त्र ग्रन्थों में मिलता है—

1. वज्रमालाभिधानमहायोगतन्त्र (तिब्बती संस्करण)।
2. गूढार्थदीपिका(प्रकाशिका)टीका।
3. चण्डमहारोषणतन्त्र।
4. संवरोदयतन्त्र।
5. हेवज्रतन्त्रराज एवं इसकी टीकाएँ।

यद्यपि देह की जीवितावस्था में इस वायु का कृत्य अहं-मम-ग्रह (आत्मपरिग्रह) तथा विकल्पनात्मक सभी स्मृतियों का उत्पाद करना है, अतः इस वायु को आगमों में क्लिष्टमनस् भी कहा गया है, तथापि इस वायु के मध्य से अन्य स्थानों में प्रवृत्त होने पर इससे मूर्च्छा, उन्माद एवं मृत्यु आदि का उत्पाद होता है।

अन्तिम काल में यह विलीनक्रम में आधार हृदय में परिनिवृत्त होने के कारण मृत्यु को प्राप्त कराता है। कर्मवायु और ज्ञानवायु के अपकर्षण (अप्रभास्वर) होने पर यह निर्विकल्प एवं संसृष्ट रूप में स्थित होता है।

इस वायु का रंग बिना रंग वाले आकाश के सदृश है।

इस प्रकार का वर्णन तन्त्र टीकाओं में बहुलतया दृष्टिगत होता है[1]।

2. अपान वायु का स्वरूप

यह वायु नाभि के अधःभाग में तीन नाड़ी समूह द्वारा पिण्डीकृत रूप से स्थित है। इसलिए यह अधःभाग में गमन करता है, अर्थात् प्रवृत्त होता है[2]।

इस वायु का कृत्य मल, मूत्र, शुक्र, शोणित आदि कषाय रस धातु का निःसारण (निकास) करना तथा संकलन करना है[3]।

मुख्य रूप से यह शंखिनी (नाड़ी) के आभ्यन्तर भाग में स्थित होता है। इसका स्वरूप (स्वभाव) महासुख ज्ञानधातु है। अन्य स्थान में प्रवृत्त होने पर मूत्र आदि का निरोध होने के

---

1. प्राण वायु का विस्तार निम्नलिखित तन्त्र ग्रन्थों में है—
   1. कालचक्रतन्त्रटीका, विमलप्रभा, द्वितीय पटल।
   2. गूढार्थप्रकाशिकाटीका, तिब्बती संस्करण, चतुर्थ पटल।
   3. चण्डमहारोषणतन्त्र, वायुयोग द्वाविंशति पटल।
   4. श्रीडाकार्णवमहायोगिनीतन्त्रराज, हस्तलेख पं 198 रा० अ० का०।
   5. श्रीसंवरोदयमहातन्त्रराजस्य पद्मिनी नाम पञ्जिका।
2. अपानो नाभ्यधो वहति।
   (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लोक सं० 42)
3. अन्नपानं समस्तं यद् रसं भक्षितमुदकादिकं पीतम्, तत्सकलमपानवायुरधो नयतीत्यागमः।

कारण यह प्रायः अधोभाग की व्याधियों का उत्पाद करता है[1]।

3. समान वायु का स्वरूप

यह वायु हृदय के संमुख भाग की रोहिणी नाड़ी द्वारा उत्पन्न होता है[2]। इसलिए इस नाड़ी का एक शिखर फुफ्फुस में धंसा होता है। इस वायु का कृत्य अन्नपान को पचाना, कषाय रसों को अलग करना तथा इन रसों को सभी नाड़ी स्थानों में ले जाकर देह का पोषण करना है। देह में बल का उत्पाद होता है, जो कषाय रसों का परित्याग (क्षेपण) करता है[3]।

इस वायु के अन्य स्थानों में प्रवृत्त होने से आभ्यन्तर भाग में सूजन तथा अतिसार आदि व्याधियाँ पैदा होती हैं।

4. उदान वायु का स्वरूप

यह वायु हृदय की अग्निसीमा दक्षिणस्तन के नाड़ीदल हस्तिजिह्वा से होते हुए कण्ठ स्थान में स्थित है। यह अन्नपान का अभ्यवहार आदि सभी कृत्य करता है।

इस वायु के मुख्य कृत्य देह के हस्तपाद द्वारा विभिन्न चेष्टा करना, गमन करना तथा वाक् द्वारा संगीत करना है। इस प्रकार इस वायु द्वारा नाटक आदि कृत्य होते हैं। यदि यह वायु अन्य स्थानों में प्रवृत्त हो तो सिर का चकराना, अर्थात् मिर्गी जैसी प्रायः ऊर्ध्वगति की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं[4]।

---

1. अपान वायु का विस्तार से वर्णन निम्नलिखित तन्त्र-ग्रन्थों में है—
   I. गूढार्थप्रकाशिकाटीका, तिब्बती संस्करण।
   II. श्रीडाकार्णवमहायोगिनीतन्त्रराज।
   III. श्रीनीलतन्त्रकल्लवीराख्ये श्रीचण्डमहारोषणे वायुयोगद्वाविंशतिः पटलः।
   IV. वज्रमालातन्त्र, तिब्बती संस्करण।
   V. श्रीसंवरोदयमहातन्त्रराजस्य पद्मिनी नाम पञ्जिका।
2. समानः पूर्वदलेऽधिदेवो रोहिणीनाड्याम्। (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो० 42)
   जयति सकलं समरसं तुल्यरसं यावत् कायं समानो नाम वायुः।
   (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लोक 43)
   अमोघसिद्धात्मकः समानो नाभिस्थः।
   (श्रीसंवरोदयमहातन्त्रराजस्य पद्मिनी नाम पञ्जिका)
3. समानो नाभिदेशके। (श्रीनीलतन्त्रकल्लवीराख्ये चण्डमहारोषणे वायुयोगद्वाविंशतिः पटलः)।
   विस्तृत जानकारी के लिए डाकार्णवमहायोगिनीतन्त्रराज को देखें।
4. उदान आग्नेयदले हस्तिजिह्वानाड्याम्। सप्तधातुषु समरसं करोतीत्यर्थः। काये स्पन्दत्युदानो नाम-वायुर्मुखकरचरणैर्गीतनाट्यं करोति। अत्र शरीरे स एवोदानो मुखेन गीतादिकं हास्यालापादिकं करोति, करचरणैर्नाट्यं करोति गमनादिकं चेति। (कालचक्रतन्त्रटीका, विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो० 42-43)। उदानः कण्ठदेशे तु (श्रीनीलतन्त्रकल्लवीराख्ये श्रीचण्डमहारोषणे वायुयोगद्वाविंशतिपटलः)। तदामिताभो वायुरुदानः कण्ठदेशस्थः (श्रीसंवरोदयमहातन्त्रराजस्य पद्मिनी नाम पञ्जिका)।

5. व्यान वायु का स्वरूप

यह वायु हृदय के दक्षिण भाग के नाड़ीदल रसना नाड़ी से संबद्ध होकर पिंगला नाड़ी के आभ्यन्तर से संचार करता है तथा देह के सभी पर्वों (ग्रन्थियों) में व्याप्त होकर स्थित होता है।

इस वायु के मुख्य कृत्य देह में बल (शक्ति) का प्रसार करना या संकोच करना तथा उत्क्षेपण करना या प्रक्षेपण (अवक्षेपण) करना इत्यादि होते हैं[1]।

यदि यह वायु अन्य स्थानों में प्रवृत्त हो, तो अंगलय, हर्ष तथा मृत्यु आदि व्याधियाँ पैदा होती हैं।

पांच अंग वायु

1. नाग वायु का स्वरूप

यह वायु दक्षिण बाहुमूल के नाड़ीदल से होकर संचरित होता है। इस नाड़ी का एक शिखर चक्षु में धंसा होता है। इस वायु के मुख्य कृत्य रूप ग्रहण करना तथा देह को लावण्य आदि प्रदान करना है[2]।

2. कूर्म वायु का स्वरूप

यह वायु हृदय के पृष्ठभाग के जया नाड़ी दल में संचरित होता है। इसका एक शिखर कर्ण में धंसा होता है। इस वायु का मुख्य कृत्य शब्द ग्रहण करना तथा हाथ-पैर आदि का प्रस्फुरण आदि कृत्य करना है[3]।

3. कृकर वायु का स्वरूप

यह वायु वाम बाहुमूल (कन्धा) के नाड़ी दल अलम्बुषा से संचरित होता है। इसका एक शिखर नासिका में धंसा होता है। इस वायु का मुख्य कृत्य गन्ध ग्रहण (धारण) करना, क्रुद्ध होना तथा क्षुब्ध होना आदि है[4]।

---

1. व्यानो दक्षिणदले पिङ्गलानाड्याम्। व्यानो व्याधिं करोति प्रकृतिगुणवशादिति उदकप्रकृतिवशाद् गात्रभङ्गं तथैव करोति यथा व्याधिम्। (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो० 42-43)।

   व्यानः सर्वशरीरगः। एषु मध्यप्रधानोऽयं प्राणवायुरिति स्थितिः। श्वासप्रश्वासभेदेन जीवनं सर्वजन्तुषु।
   (श्रीनीलतन्त्रकल्लवीराख्ये श्रीचण्डमहारोषणे वायुयोगद्वाविंशतिः पटलः)।

   वैरोचनात्मको व्यानस्तस्य समानमुक्तं वायुधातुस्वभावम्।
   (श्रीसंवरोदयमहातन्त्रराजस्य पद्मिनी नाम पञ्जिका)।

2. नागो नैर्ऋत्यदले पूषानाड्यां नागोऽप्युद्गारं करोत्येव। (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो०42-44)।

3. कूर्मो वारुण्यदले जयानाड्याम्। स्फुटकरचरणात् संकुचनं कूर्मवायुः। (विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो० 42-44)।

4. कृकरो वायव्यदले अलम्बुषानाड्याम्। क्रोधं क्षोभं समस्तं स कृकरो वायुः करोति। (वि० प्र०, द्वितीय पटल, श्लो० 42-44)।

4. देवदत्त वायु का स्वरूप

यह वायु हृदय की वाम दिशा की इड़ा नाड़ी तथा मेष लग्न (नाड़ी) से संचरित होता है। इसका एक शिखर जिह्वा में धंसा होता है। इस वायु के मुख्य कृत्य रस ग्रहण (धारण) करना तथा जंभाई लेना (उवासी लेना) इत्यादि होते हैं[1]।

5. धनंजय वायु का स्वरूप

यह वायु वाम स्तन की कुहू नाड़ी में संचरित होता है। इस नाड़ी का शिखर उपजिह्वा के मध्य तथा रोम के सभी छिद्रों में धंसा होता है। इस वायु के मुख्य कृत्य एक देश से श्वेत अंश धातु को ऊर्ध्व में खींचना, एक देश से स्पर्श द्वारा मृदु, तीक्ष्ण इत्यादि का ग्रहण करना तथा एक देश से देह च्युति (मृत्यु) से लेकर जीवित अवस्था के मध्य में लिप्त होकर देह धातु का अनुत्सर्ग करना है[2]।

वायुओं का अन्तः संचार

1. हृदय चक्र में संचार की गति

महा प्राणवायु वायुधातु के स्वभाव में स्थित है। यही वायु प्रथम गर्भ में स्थित होने के कारण मृत्युपर्यन्त मध्य नाड़ी में राजा के सदृश स्थित होता है। उससे विकसित हुए मूलवायु एवं अन्य अंगवायुओं द्वारा देह के ऊर्ध्व, अधः तथा अन्तर्बहिः सर्वत्र मन्त्री के सदृश सभी कृत्य सम्पन्न करते हैं। हृदय चक्र में मूलवायु तथा अंगवायु प्रत्येक के चार महाभूत में विभेद होने के कारण 8 प्रकार होते हैं। इस प्रकार 8 विभेद होने के कारण हृदयचक्र की चार दिशा तथा चार विदिशा की नाड़ियों में 8 वायुओं का संचार होता है।

2. ललाट (महासुख) चक्र में वायु संचार की गति

हेरुक, चक्रसंवर एवं हेवज्र आदि तन्त्र-ग्रन्थों में ललाट चक्र में 32 नाड़ी दल वर्णित हैं। प्रज्ञोपाय युगनद्ध में योग होने पर या देह में स्थित होते समय बाहर के 16 नाड़ी दलों में मुख्य रूप से रक्त संचार होता है, अन्तः के 16 नाड़ी दलों में चन्द्रकलाओं की वृद्धि तथा अपचय के अनुसार वायुसंचार होता है तथा पांच गुणों से अन्वित बोधिचित्त इत्यादि का संचार होता है, किन्तु कालचक्रतन्त्रराज में ललाट चक्र में 16 नाड़ी दल वर्णित हैं।

---

1. देवदत्त उत्तरदले इडानाड्याम्। जृम्भिकां देवदत्तः करोति।

(विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो॰ 42-44)

2. धनञ्जय ईशदले कुहूनाड्याम्। कुहूनाड्यां सुषुम्नायां प्राणे दिक्संख्या शङ्खिनी या स्रवति बोधिचित्त-समयानधिदेवता। इत्येवं नाडिचक्रे दशविधपवनाः संस्थिताः कर्मभेदैः। एषां प्राणादीनां सर्वेषां द्वासप्ततिप्रतिनाडीसहस्रेषु व्याप्तिः। किन्त्वष्टस्थानेषु जन्मनामष्टानामिति। शङ्खिन्यन्तं त्विडाद्यं स्वहृदयकमलं नाभिचक्रं समस्तम्। जन्मस्थानं समानादीनामिति हृच्चक्रनियमः।

(विमलप्रभा, द्वितीय पटल, श्लो॰ 42-45)।

3. कण्ठचक्र में वायु संचार की गति

कण्ठचक्र के नाड़ी दलों की संख्या चक्रसंवर, हेरुक, हेवज्र, गुह्यसमाज आदि तन्त्र-ग्रन्थों के अनुसार 16 है। इन 16 नाड़ी दलों को उपाय एवं प्रज्ञा में विभक्त करने से कालचक्र के मतानुसार 32 नाड़ीदल होते हैं, जो अन्य तन्त्रों के वर्णन के अनुकूल हैं। इन 32 नाड़ी दलों में सन्धि के चार नाड़ी दलों द्वारा शून्य ज्ञानवायु के अंश का संचार होता है।

4. नाभिचक्र में वायु संचार की गति

नाभिचक्र में 64 नाड़ी दल हैं। यह मध्य नाड़ी से विश्लिष्ट होकर चार मूल नाड़ी दलों में लीन होते हैं या 12 लग्नों के भेद से तीन में भेद हो जाने पर (4 × 3 = 12) कुल 12 में प्रादुर्भूत होते हैं, जो 12 महासंक्रान्ति कहलाते हैं। ये 12 महासंक्रान्तियाँ भी प्रत्येक में अल्पसंक्रान्ति के पांच मण्डल में विभक्त होने पर (12 × 5 = 60) कुल 60 नाड़ी दल के शिखर होते हैं। इनमें चार मूल नाड़ियों का योग करने पर कुल 64 नाड़ी दल होते हैं। इन नाड़ियों में वायुसंचार की गति का वर्णन 64 नाड़ी दलों के परिचय के समय किया गया है। इस प्रकार उपर्युक्त चार चक्रों (नाभिचक्र, हृदयचक्र, कण्ठचक्र, ललाटचक्र) के नाड़ीदल में वायुसंचार की गति का विस्तार से वर्णन निम्न तन्त्र-ग्रन्थों में है—

1. अभिधानोत्तरतन्त्र
2. ज्ञानोदयतन्त्र, चतुश्चक्रभावनायोगपटल
3. वज्रवाराहीपरमरहस्यतन्त्र, प्रथम निर्देश
4. वज्रमालाभिधानमहायोगतन्त्र, तिब्बती संस्करण
5. हेरुकतन्त्र
6. हेवज्रतन्त्रराज, प्रथम पटल
7. संवरोदयतन्त्रराज
8. चक्रसंवरतन्त्र

5. 72,000 नाड़ियों में वायुसंचार की गति

चित्तवज्र की 24,000 नाड़ियों में मध्यनाड़ी (अवधूती) के स्वभाव वाले राहु वायु का संचार होता है। शुक्र अंश (श्वेत अंश) का विभेद होने पर ललना नाड़ी के स्वभाव वाले कायचक्र की 24,000 नाड़ियों में चन्द्र धातु के वायु का संचार होता है।

शोणितांश (रक्तांश) का विभेद होने पर रसना नाड़ी के स्वभाव वाले वाक्वज्र की 24,000 नाड़ियों में सूर्य धातु के वायु का संचार होता है, या प्रत्येक नाड़ी में 21600 वायुओं का संचार होता है। इस प्रकार वायुओं के अन्तःसंचार में वायु श्वास-प्रश्वास क्रिया द्वारा रोम के अन्तिम छोर तक गमन कर संचार करता है।[1]

---

1. विस्तृत जानकारी के लिए वज्रमालाभिधानमहायोगतन्त्र, तिब्बती संस्करण देखें।

6. वायुओं की बाहरी संचार गति

इस प्रकार उक्त वायुओं के अन्तःसंचार के पश्चात् अब बाहर संचरित होने वाली वायु की गति का संक्षिप्त वर्णन किया जा रहा है। यहाँ बाहर संचरित होने वाली वायु का संचार-मार्ग सूक्ष्म रोम के द्वारा तथा सभी इन्द्रिय द्वारों से होता है। विशेष रूप से लग्न वायु में अन्तर्भूत सभी वायुओं के गमन होने का महाद्वार नाभिमण्डल से ललना-रसना इन दो महानाड़ियों से संबद्ध है, इस कारण नासिका के दोनों छिद्रों से वायु का निःसरण होता है।

7. वायुओं के कृत्य

स्कन्ध, धातु एवं आयतन आदि बाह्याभ्यन्तर सभी धर्मों के अनुकूल कृत्य होने पर अपने-अपने अचिन्त्य बल के अनुसार उपर्युक्त 10 वायुओं एवं ग्रहों के बल द्वारा प्रतीत्यसमुत्पाद के वश से जिस प्रकार चुम्बक दूरस्थ लौह धातु को समीप में आकर्षित करता है, उसी प्रकार सभी कृत्य सम्पन्न होते हैं। आकाशवायु तथा उसके ग्रह द्वारा मारण एवं अभिचार कृत्य होते हैं तथा उसी के द्वारा पुनःस्थापन के सभी कृत्य भी सिद्ध होते हैं। वायु-वायु के तथा उसके ग्रह द्वारा साध्य-सिद्धि के क्रम में उच्चाटन तथा मारण आदि कृत्य सिद्ध होते हैं। वशीकरण तथा आकर्षण कृत्य अग्निवायु एवं उसके ग्रह द्वारा सिद्ध होते हैं। अप्वायु एवं उसके ग्रह द्वारा व्याधिहरण आदि शान्ति कृत्य होने के कारण आयु तथा पुण्य की वृद्धि होती है। स्तम्भन तथा संमोहन कृत्य पृथिवीवायु तथा उसके ग्रह द्वारा सम्पन्न होते हैं। ज्ञानवायु द्वारा मारण के सभी कृत्य सम्पन्न होते हैं, ऐसा आगमों में उक्त है। इन वायुओं के कृत्य का विस्तार से वर्णन निम्नलिखित तन्त्र-ग्रन्थों में है—

1. ज्ञानोदयतन्त्र
2. सम्पुटोद्भवतन्त्र एवं उसकी टीका
3. संवरोदयतन्त्र एवं उसकी टीका (पद्मिनी)
4. वज्रवाराहीपरमरहस्यतन्त्र
5. वज्रमालाभिधानमहायोगतन्त्र (तिब्बती संस्करण)
6. चतुष्पीठमहातन्त्र एवं चतुष्पीठमहातन्त्रटीका
7. गुह्यसमाजतन्त्र, विनयतोष भट्टाचार्य द्वारा सम्पादित

उपसंहार

इस प्रकार त्रिधातु (काम, रूप, अरूप) में प्रतिभासित होने वाले सभी धर्म वायु द्वारा अभिसंस्कृत होते हैं। राग-द्वेष तथा ग्रहण-धारण इत्यादि के दोष तथा उसके प्रतिपक्ष ज्ञान सभी को आगमों में वायु कहा गया है। निर्वाण की प्राप्ति के काल में सभी गुण जिस प्रकार वायु पर आश्रित होते हैं, ठीक उसी प्रकार अवबोध होने से सम्यक् मार्गक्रम मर्मबद्ध होते हैं। वज्रमालाभिधानमहायोगतन्त्र में कहा भी है—वायु प्रयोग या अनुयोग विधि का ज्ञान होने से योगी (साधक) संसार से पार होकर बुद्धत्व प्राप्त करता है, परन्तु वायु और कल्पना (वितर्क) स्वभाव से मुक्त न होने तथा उसी का अनुसरण करने पर संसार में चक्कर काटने से उस सत्त्व को दुःखानुभूति होती है। ज्ञान के मर्मबद्ध

होने पर, कर्मवायु के ज्ञानवायु में विशुद्ध होने पर इस संसार के समुच्छेद का प्रतिपक्ष भी वायु द्वारा सिद्ध होता है। इस प्रकार बाह्याभ्यन्तर संचार होने वाले सभी वायुओं के नाम, स्वभाव (स्वरूप), स्थान एवं उनके कृत्य इत्यादि का जिन वज्रधर द्वारा सभी सूत्र तथा तन्त्र-पिटकों में विस्तृत वर्णन किया गया है। श्रीमहासंवरोदयतन्त्रराज में कहा है—

वायुयोगं न जानाति यो ज्ञात्वापि करोति न।
स संसारस्य कीटः स्यान्नानादुःखैरुपद्रुतः॥
गतागतं च यो वायुं लक्षयेत् स हि बुद्धिमान्।
वायुनाऽधिष्ठितं सर्वं वायुः सर्वगतो भवेत्॥
वायुतत्त्वं न जानाति कर्माकर्म न सिद्ध्यति।
तार्किका न प्रजानन्ति वायुः सर्वगतो भवेत्॥
वायुतत्त्वानुपूर्वेण मन्त्रतत्त्वं तु साधयेत्।
प्राणभूतश्च सत्त्वानां वाय्वाख्यः सर्वकर्मकृत्॥
विज्ञानवाहनं चैव बुद्धत्वपदमाप्नुयात्।
रहस्यं सर्वतन्त्रस्य उपायो बोधिकारणात्॥



सिद्ध एवं अपभ्रंश साहित्य का सर्वेक्षण (२)

—श्री वङ्छुग् दोर्जे—

[अभयदत्त द्वारा रचित 84 सिद्धों की जीवनी के अतिरिक्त वज्रासनपाद, भिक्षु श्रीसेन, बुस्तोन एवं फदमपा आदि ने जिन आचार्यों एवं साधकों को सिद्ध पुरुषों में गिना था, ऐसे 357 सिद्धों की नामावली "धीः" पत्रिका के प्रथम अंक में दी गयी थी। प्रस्तुत अंक में प्रधानतः [1]भोट साहित्य के आधार पर कुछ उन सिद्धों का परिचय दिया जा रहा है, जिनकी चर्चा अब तक नहीं के बराबर हुई है। साथ ही तोहकू कैटलाग के आधार पर भोट भाषा में उपलब्ध उनकी कृतियों की भी नामावली यहाँ दी जा रही है।]

अमोघवज्र (वज्रासनपाद)

वज्रासनपाद कनिष्ठ, मध्यम और ज्येष्ठ तीन थे, उनमें अमोघवज्र वज्रासनपाद ज्येष्ठ का नाम था। कनिष्ठ वज्रासनपाद तिब्बत में भी आये थे। सिद्ध अमोघवज्र का जन्म पूर्वी भारत में हुआ था। ये ब्राह्मण जाति के थे। इनको उपासक एवं भिक्षु की दीक्षा देने वाले जितारि थे। तन्त्र में प्रवेश कर यमान्तक धर्मों का अध्ययन इन्होंने ललितवज्र से किया था। ये वज्रासन में जाकर बिहार के उपाध्याय नियुक्त हुए और वहीं से इनका एक नाम वज्रासन भी पड़ा। इनके शिष्यों में ज्ञानोदयगुप्त प्रमुख थे (शीन० जे० शे०, पृ० 70)। तारानाथ के अनुसार ज्येष्ठ वज्रासनपाद का जन्म मालवा में ब्राह्मण जाति में हुआ था। ये नालन्दा में दीक्षित हुए थे। ये अतिश के समकालीन एवं तन्त्र के मर्मज्ञ थे। ये वज्रासन और बाद में विक्रमशील में उपाध्याय नियुक्त हुए। मध्यम वज्रासन एवं रत्नाकरगुप्त पूर्वी भारत के थे। कनिष्ठ वज्रासन दिवाकर के शिष्य कनिष्ठ पण्डित के समकालीन थे। इन्होंने बहुत से ग्रन्थों का तिब्बती भाषा में अनुवाद किया। वज्रासनपाद के नाम से तन्युर में निम्न चार ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 2489 वज्रसत्त्वसाधनानाम
(2) 3110 आर्यतथागतोष्णीषसितातपत्रा-पराजितनामोपदेश
(3) 3828 वज्रयानमूलापत्तिकर्मविधि
(4) 3758 चतुरशीतिसिद्धाभ्यर्थना

---

1. निम्न सात ग्रन्थों के आधार पर यह सामग्री संकलित की गयी है—
   I. देव थर ङोनपो
   II. तारानाथ का भारतीय इतिहास, स्म्रोल मही ह्जुङ्व, ब्कह् ह्बब् ब्दुन ल्दन।
   III. ह्जम गोन अमस् श्बस् का हेवज्र, गुह्यसमाज और यामन्तक का इतिहास।
   IV. पद्मकरपो का इतिहास
   V. बुस्तोन का इतिहास
   VI. ब्कह् ग्तेर ब्लामा ब्रग्युद् पही नम थर
   VII. म्खस ब्चुन ब्ज़ङ्पो का फ्योगस् ब्स्म्रीगस् रग्यागर पन ग्रुब की नम पर

आनन्दगर्भ

तारानाथ के भारतीय इतिहास के अनुसार इनका समय देवपाल के पश्चात् महीपाल के 50वें वर्ष के आसपास, अर्थात् तिब्बत के सम्राट् ख्री रल का समय माना जाता है। ये बंगाल के रहनेवाले भिक्षु थे। इनके गुरुओं में ज्ञानवज्र, प्रज्ञासिद्ध, राजकुमार, राहुल और सुभूतिपाल ये चार प्रमुख थे। इन चारों के गुरु राजा प्रसेनचन्द्रपतिकीर्ति थे। आनन्दगर्भ ने कई स्वतन्त्र ग्रन्थों की रचना की है। बाद में उनकी विद्वत्ता को सुनकर तिब्बत के सम्राट् ज्ञानप्रभ ने रत्नवज्र, प्रज्ञामति आदि को भारत में भेजकर अनुवाद करवाया। इनके नाम से (Kun dGaḥ sÑiṅpo) 22 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं।

(1) 1662 सर्वकल्पसमयोगडाकिनीमात्रा-संवरोत्तरोत्तमटीका
(2) 1917 श्रीगुह्यसमाजपञ्जिका
(3) 2509 आर्यत्रैलोक्यविजयनामवृत्ति
(4) 2511 श्रीपरमादिविवरण
(5) 2512 श्रीपरमादिटीका
(6) 2513 मायाजालमहातन्त्रराजटीका-व्याख्या
(7) 2516 वज्रधातुमहामण्डलविधिसर्व-वज्रोदयनाम
(8) 2517 वज्रसत्त्वोदयनामसाधना
(9) 2518 वज्रसत्त्वसाधना
(10) 2519 श्रीत्रैलोक्यविजयमण्डलविधि-आर्यतत्त्वसंग्रहतन्त्रोद्धृता
(11) 2551 प्रतिष्ठाविधि
(12) 2523 प्रतिष्ठाविधि
(13) 2626 भगवत्सर्वदुर्गतिपरिशोधन-तेजोराजतथागतार्हतसम्यक्-संबुद्धमहातन्त्रराजव्याख्या-सुन्दरालङ्कारनाम
(14) 2628 सर्वदुर्गतिपरिशोधनतेजोराज-तथागतार्हतसम्यक्संबुद्धनाम-कल्पटीका
(15) 2630 श्रीसर्वदुर्गतिपरिशोधनमहा-मण्डलसाधना
(16) 2631 श्रीसर्वदुर्गतिपरिशोधनमहाम-ण्डलविधिकृपावलीनाम
(17) 2632 श्रीसर्वदुर्गतिपरिशोधनप्रेतहोम-विधि
(18) 2633 सर्वदुर्गतिपरिशोधनमरहोम-विधि
(19) 2635 सर्वदुर्गतिपरिशोधनमण्डल-विधिर्नाम
(20) 2638 सर्वदुर्गतिपरिशोधनमण्डल-साधनावृत्ति
(21) 2645 प्रज्ञापारमितामण्डलविधि
(22) 3661 मारीचीदेवीसाधना

आर्यदेव (ḥPhags pa Lha)

बुस्तोन इतिहास के अनुसार नागार्जुन के प्रमुख शिष्य आर्यदेव का जन्म सिंहलद्वीप में हुआ और वहीं के राजा ने इन्हें गोद लेकर शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था करके आचार्य नागार्जुन के पास भेजा। वहीं व्याकरण आदि अन्य महाविद्याओं का गहन रूप से अध्ययन करके बाह्याभ्यन्तर उभय सिद्धान्तों में पारंगत बने। उसी समय तीर्थकों का प्रकाण्ड पण्डित पितृचेट महेश की सिद्धि प्राप्त कर नालन्दा विश्वविद्यालय पहुँचा। नालन्दा के वयोवृद्ध भिक्षुओं ने दक्षिण श्रीपर्वत पर निवास कर रहे

नागार्जुन को आमन्त्रित करना चाहा तो उनके शिष्य आर्यदेव ने पितृचेट को पराजित करना स्वीकार किया। श्रीपर्वत से नालन्दा के लिए निकल पड़े। रास्ते में वनदेवी ने उनसे आँख माँगी और उन्होंने आँख दक्षिणा में दे दी तथा एक आँख वाले बन गये। पितृचेट शास्त्रार्थ में पराजित हो गया। आर्यदेव अष्टमभूमिलब्ध आर्य थे और मंजुश्रीमूलकल्प में इनकी भविष्यवाणी प्राप्त होती है।

का० ते० ल० न० के अनुसार आर्यदेव तीन थे। एक राजघराने के, एक मन्त्री आर्यदेव और एक नागार्जुन के शिष्य आचार्य आर्यदेव। तान्त्रिक आर्यदेव नवीं-दसवीं शती के थे। तथा ये फादमपा के मामा थे। ये चतुर्थ तन्त्र के पारंगत विद्वान् थे और इन्होंने वायु, नाड़ी एवं तिलक पर सम्पूर्ण दक्षता प्राप्त की थी। ये दक्षिण भारत के थे। यही सिद्ध आर्यदेव हैं। आर्यदेव के नाम से तन्ग्यूर में निम्न 23 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 1610 श्रीचतुर्थपरियोगतन्त्रसाधना
(2) 1613 श्रीचतुर्थपीठतन्त्रराजमण्डल-विधिसारसमुच्चयनाम
(3) 1794 प्रदीपोद्योतननामटीका
(4) 1803 चर्यामेलापकप्रदीपक
(5) 1804 चित्तावरणविशोधननामप्रकरण
(6) 1808 श्रीगुह्यसमाजनिष्पन्नक्रमपर्यन्त
(7) 2279 निर्विकल्पप्रकरण
(8) 2334 प्रतिपत्तिसारशतक
(9) 3830 मध्यमभ्रम-इतरनाम
(10) 1612 ज्ञानेश्वरीसाधना
(11) 1614 चतुर्थपीठस्य गम्भीरार्थनिर्देशिका-एकद्रुमपञ्जिका
(12) 1615 वज्रघण्टापूजासाधनाक्रम
(13) 1805 स्वाधिष्ठानप्रभेद
(14) 1806 अभिबोधिक्रमोपदेश
(15) 1807 श्मशानविधि
(16) 2457 पञ्चविषरहस्यमार्गोत्तम-गुह्याचिन्त्यनाम
(17) 3844 हस्तबलनामप्रकरण
(18) 3845 हस्तबलनामप्रकरणवृत्ति
(19) 3846 चतुःशतकशास्त्रकारिकानाम
(20) 3847 स्खलितप्रमर्दनयुक्तिहेतुसिद्धि-र्नाम
(21) 3848 हस्तबलप्रकरणकारिका
(22) 3849 हस्तवलवृत्ति
(23) 3851 ज्ञानसारसमुच्चयनाम

चन्द्रकीर्ति

मार्ग क्रम की गुरु-परम्परा की जीवनी के अनुसार चन्द्रकीर्ति दक्षिणी भारत के समन नामक ग्राम के निवासी थे। बालक के विचित्र लक्षणों को देखकर ज्योतिषियों ने इनके अद्भुत विद्वान् होने की भविष्यवाणी की थी। उन्हें नालन्दा में लाकर उपाध्याय चन्द्रनाथ से उपासक का संवर दिलाया गया और उपाध्याय ने इनका चन्द्रकीर्ति नाम रखा। क्रमशः भिक्षु बने और त्रिपिटकाचार्य के रूप में विख्यात हुए। ये निरन्तर परमार्थ बोधिचित्त की भावना करते रहते थे। अध्ययन-अध्यापन भी नहीं करते थे और संघ के कामों में भी मन नहीं लगाते थे। इसी बीच अन्य भिक्षुओं ने उपाध्याय से इनकी शिकायत की। उपाध्याय चन्द्रनाथ को इनकी विद्वत्ता एवं परमार्थ ज्ञान पर पूर्ण विश्वास होते हुए भी जनसामान्य के विचारों के अनुकूल सूर्यकीर्ति को सहायक के रूप में देकर उन्हें नालन्दा में भण्डारी (ञेरपा) नियुक्त कर दिया। वहाँ ये गाय चराने जाया करते थे। एक दिन इन्होंने सभी गायों को जंगल में छोड़ दिया और स्वयं एक जगह बैठकर जमीन में गाय का चित्र बनाने लगे। जब शाम को

दूध दुहने का समय आया, तो गायें वापस नहीं लौटी थी। इन्होंने मिट्टी पर बने चित्र की गाय से दूध दुह दिया। इनके इस चमत्कार से प्रभावित होकर कई भिक्षुओं ने इनसे शून्यता का साक्षात्कार किया और तब से यह चित्र से दूध दुहने वाले के नाम से विख्यात हुए। ऐसे ही तुर्कों के युद्ध को चामत्कारिक बल से रोकना और चन्द्रगोमिन् से शास्त्रार्थ करना आदि इनके कई चमत्कार प्रसिद्ध हैं। चन्द्रकीर्ति (ZlabaGrags pa) के नाम से तन्ग्यूर में 9 ग्रन्थ उपलब्ध हैं—

(1) 3860 मूलमाध्यमिकवृत्तिप्रसन्नपदा-नाम
(2) 3861 माध्यमिकावतार
(3) 3862 माध्यमिकावतारभाष्य
(4) 3863 माध्यमिकप्रज्ञावतारनाम
(5) 3864 युक्तिषष्टिकावृत्ति
(6) 3865 बोधिसत्त्वयोगाचारचतुश्शतक-टीका
(7) 3866 पञ्चस्कन्धप्रकरण
(8) 3867 शून्यतासप्ततिवृत्ति
(9) 3971 शून्यतासप्ततिविवृति

ज्ञानगर्भ

तारानाथ के अनुसार ज्ञानगर्भ का जन्म ओडिविश में हुआ था। ये बंगाल के आचार्य श्रीगुप्त से, जो भावविवेक के परम्परावादी थे, अध्ययन कर माध्यमिक के नाम से विख्यात हुए और बाद में अवलोकितेश्वर का साक्षात्कार कर सिद्धि को प्राप्त हुए। ज्ञानगर्भ ने तिब्बत में भिक्षुदीक्षा का सूत्रपात करने वाले शान्तरक्षित को भिक्षु की दीक्षा दी थी। इनके नाम से (ye-ses & ñiṅ-po) 9 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 1282 श्मशानविधि
(2) 1916 चतुर्थदेवतापरिपृच्छाटीका
(3) 2695 आर्य-अनन्तमुखनिर्हारधारिणी-व्याख्यानकारिका
(4) 2696 आर्य-अनन्तमुखनिर्हारार्थ-धारिणीटीका
(5) 3881 सत्यद्वयविभङ्गकारिका
(6) 3882 सत्यद्वयविभङ्गवृत्ति
(7) 3909 योगभावनामार्ग
(8) 4033 आर्यसमाधिनिर्मोचनसूत्र-आर्य-मैत्रयकेवलपरिवर्तभाष्य
(9) 4538 योगभावनापथ

ज्ञानाकरगुप्त

इनका जन्म दक्षिण मगध में एक वैश्य के घर में हुआ। इनके पिता का नाम पतवारक वीरम वर्मा और माता का नाम (ḥBum sGrolma) लक्षतारा था। पैदा होते ही इन्होंने "धीः" और अ, आ का उच्चारण किया। दम्पति ने प्रसन्न होकर यह बालक अब व्यापार करने वाला न होगा, अतः इसे दीक्षित किया जाय, ऐसा सोचा। उन्होंने वज्रासन में जाकर वज्रपाद से वज्रभैरव के मण्डल में प्रवेश कर अभिषेक प्राप्त किया। हाहा नामक श्मशान में जाकर साधना द्वारा वज्रभैरव का साक्षात्कार कर सिद्ध बने। इनके शिष्यों में पद्मवज्र प्रमुख थे। तारानाथ के अनुसार ज्ञानाकरगुप्त नेपल के नजदीक बमरहाटी में रहते थे। इनके शिष्यों में योगिनी दिनकर प्रसिद्ध थी। इनके नाम से तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 2008 श्रीवज्रमहाभैरवसाधना
(2) 3718 मन्त्रावतार
(3) 3719 मन्त्रावतारवृत्ति

पद्मवज्र

पद्मवज्र आचार्य पद्मसम्भव का अवतार महापद्म और माता ज्ञानज्योति के पुत्र के रूप में राजगीर पुष्पव्यूह नामक ग्राम में हुआ था। बाल्यावस्था में ही आचार्य वीनक से अध्ययन कर अक्षरिपा के नाम से जाने जाते थे। आगे चलकर ये भिक्षु बने और नाम श्रीरक्षित रखा। इन्होंने तन्त्र में प्रवेश कर चक्रसंवर की भावना की। लेकिन इससे इन्हें ज्ञान प्राप्त नहीं हो सका, तो दुःखी होकर एकान्तवास करने लगे। डाकिनी ने इन्हें आदेश दिया कि तुम्हारे इष्टदेव यमान्तक हैं। उसके लिए मध्यभारत के वज्रासन नामक स्थान में जाकर ललितवज्र के शिष्य अमोघवज्र और उनके ज्ञानोदय नामक शिष्य के पास जाकर अभिषेक एवं उपदेश प्राप्त करो। तदनुसार वे वज्रासन के श्मशान में रहकर गुह्याचरण करने वाले सिद्ध ज्ञानोदय से अभिषेकादि प्राप्त कर सिद्ध बने। अभिषेक के समय इन्हें गुह्य नाम पद्मवज्र दिया गया और गुरु के आदेशानुसार भावना कर यमान्तक द्वारा सिद्धि को प्राप्त किया इनके शिष्यों में नेपाल के भरो छग दुम प्रमुख हैं।

तारानाथ के अनुसार पद्मवज्र उत्तर भारत के मरु नामक ग्राम के ब्राह्मण जाति के थे। इन्होंने ओड़ियान की योगिनी सुखलीला से चतुर्थ मुद्रा का उपदेश और गुह्यसमाज का अभिषेक प्राप्त किया था। इन्होंने चतुर्थ तन्त्रों के अभिप्राय का बोध किया और गुह्यसिद्धि आदि पाँच ग्रन्थों की रचना की। इनके शिष्यों में प्रमुख अनंगवज्र, शुक्र आदि हैं। इनके ग्रन्थों के नाम ये हैं—

(1) 1218 श्रीहेवज्रसाधना
(2) 1219 हेवज्रमण्डलकर्मक्रमविधि
(3) 2217 (गुह्यसिद्धि) सकलतन्त्रसम्भव-संचोदिनीश्रीगुह्यसिद्धिनाम
(4) 2502 तन्त्रार्थावतारव्याख्यान
(5) 2943 अभिषेक

बुद्धज्ञान

पूर्वी भारत के सिन्धु नामक प्रान्त में घपरो प्रभाव नामक राजा राज्य करते थे। बुद्धज्ञान उनके पुत्र थे। बाल्यकाल में ही व्याकरण, छन्द और नीतिशास्त्र में पारंगत हुए तथा राज्य को मिट्टी के ढेले के समान त्यागकर नालन्दा के समीप दोजोग (ग्राम) में धर्मपाल द्वारा निर्मित टीका नामक विहार में उपाध्याय वैरोचन के प्रमुख शिष्य प्रज्ञापारमिता के रहस्य को प्रकट करने वाले आचार्य हरिभद्र से पारमिता शास्त्रों का अध्ययन एवं अध्यापन कार्य किया। तत्पश्चात् दक्षिण ओड़ियान में जाकर आचार्य मणिद्वीप, विरूपकाय, वीणावज्र आदि के चरणों में बैठकर चतुर्थ तन्त्रों का तथा गुनिरु और लक्ष्मीसेन से भी अनुत्तरतन्त्र का अध्ययन किया। वहाँ से चलकर जालन्धर में आचार्य बमो पाते (ByiPahiśabas) और कोंकण में बलिङ्पा अर्थात् रक्षपाद से भी तन्त्रों का गहन अध्ययन कर भावना द्वारा सिद्धि को प्राप्त किया। सिद्ध बुद्धज्ञान ने मञ्जुश्री से साक्षात् यमान्तक तन्त्र का अभिषेक एवं उपदेश प्राप्त कर दीपंकर श्रीज्ञान को अधिष्ठित किया। इनकी शिष्य परम्परा का क्रम बुद्धज्ञान–दीपंकर–श्रीधर–नाड़पाद–अस्थिवज्र–प्रज्ञारक्षित–नेपालाचार्य–महाकारुणिक आदि है। तारानाथ ने भी ये आचार्य हरिभद्र के शिष्य, भिक्षु एवं गुह्यसमाज के द्वारा सिद्धि प्राप्त थे, ऐसा लिखा है। इनके नाम से (Sańs rGyas Yeśes) 13 ग्रन्थ प्राप्त हैं—

(1) 1855 समन्तभद्रनामसाधना
(2) 1856 चतुर्नागसाधनासमन्तभद्रीनाम
(3) 1857 श्रीहेरुकसाधना
(4) 1860 आत्मसाधनावतारनाम
(5) 1861 भट्टारकार्यजम्भलजलेन्द्र-साधना
(6) 1862 गुह्यजम्भलसाधना
(7) 1863 विस्तरजम्भलसाधना
(8) 1864 sTaṅ sTabs kyi bKod Pa
(9) 2084 श्रीरक्तयमारिसाधनानाम
(10) 2085 कायवाक्चित्तत्रयाधिष्ठानोप-देशनाम
(11) 2086 त्रिसत्त्वसमाधिसमापत्तिनाम
(12) 3124 आर्यप्रतिसरारक्षा
(13) 3905 महायानभक्षणसमुच्चयनाम

बुद्धश्रीज्ञान

यह नेपाल के खोखोम में पिता काश्मीरी मुस्लिम और माता भारतीय के यहाँ सन् 1135 के आसपास में पैदा हुए थे। नेपाल से भारत में आकर नालन्दा विश्वविद्यालय में अध्ययन कर दार्शनिक और महासांघिक निकाय में भिक्षु बने। वज्रासनपाद को गुरु स्वीकार कर वज्रयान के स्वामी बने। नेपाल के खोखोम राजा द्वारा वज्रासनपाद को नेपाल आमन्त्रित करने पर इन्होंने अपने शिष्यों में सर्वश्रेष्ठ एवं भद्र बुद्धश्रीज्ञान को भेज दिया। तिब्बत के ठो पु लो चावा ने भी इन्हें तिब्बत आमन्त्रित किया और 5 वर्ष तक इनसे शास्त्रों का अध्ययन किया। उस समय यह 65 साल के थे। तिब्बत से यह नेपाल वापस लौट आये थे। बुद्धश्रीज्ञान (Saṅs rGyas-Pal Ye-ṡes) के नाम से निम्न 7 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 2465 चित्तरत्नविशोधनमार्गफल
(2) 3798 सम्यग्गाथापञ्जिका
(3) 3800 अभिसमयालंकारभगवतीप्रज्ञा-पारमितोपदेशशास्त्रवृत्तिप्रज्ञा-प्रदीपावलीनाम
(4) 3964 जिनमार्गावतार
(5) 1853 द्वैक्रमतत्त्वभावनानाममुखागम
(6) 1859 मुक्तितिलकनाम
(7) 4391 जिनमार्गावतारोद्भवप्रणिधान

मञ्जुश्रीमित्र

पश्चिम भारत के द्वेक्रम नाक ग्राम में सारुपास्ती एवं माता प्रकाश ज्वाला (ḥJamdpal bŚesgÑen) के यहाँ इनका जन्म हुआ। बचपन में इन्होंने वेद का प्रौढ़ अध्ययन किया। उसके बाद लीलावज्र से भैरव आदि तन्त्रों का अध्ययन और अभिषेक प्राप्त किया और वज्रासन के दक्षिण दिशा में शीतवन (सीलवा छल) नामक श्मशान में जाकर साधना करके सिद्धि को प्राप्त किया। इनके शिष्यों में ज्ञानवज्र आदि प्रमुख हैं। मलय पर्वत से इन्होंने चतुर्थ क्रम परिपूर्ण ग्रन्थ का आमन्त्रण और उसके रहस्यों का बोध किया, तीर्थकों का दमन किया और पुनः वज्रासन के पश्चिम में निधि में बन्द कर दिया। बाद में ब्राह्मण सिद्ध, अर्थात् जैतरि के पिता ब्राह्मण गर्भपाद नामक सिद्ध ने इन्हें निकाला। मञ्जुश्री विद्यामन्त्र द्वारा सिद्धि प्राप्त की। यह राजा धर्मपाल के समकालीन थे। इन्होंने मञ्जुश्रीमित्र द्वारा निधि में रखे तन्त्र का आमन्त्रण कर ब्राह्मण ज्ञानवज्र और बोधिवज्र

को शिक्षित एवं दीक्षित किया, ऐसा दु० जो० नीड्मा इतिहास में कहा गया है। इनके नाम से 34 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 2532 नामसंगीतिवृत्ति
(2) 2533 नामसंगीतिमण्डलविधि-आकाश-विमलनाम
(3) 2544 आर्यमञ्जुश्रीनामसाधना
(4) 2545 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिमण्डल-विधि
(5) 2546 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिमण्डल-विधिनाम
(6) 2547 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिविधि-मण्डलनाम
(7) 2548 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिस्नान-विधि
(8) 2549 नामसंगीतिजलदान
(9) 2550 नामसंगीतिखाद्ययोग
(10) 2551 नामसंगीतिभूतबलि
(11) 2553 नामसंगीतिपरिक्रमोपाय
(12) 2554 मञ्जुश्रीनामसंगीतिसप्ताङ्ग-पुण्यसञ्चयोपाय
(13) 2555 मञ्जुश्रीनामसंगीति-आवृत्ति-उपदेश
(14) 2556 मञ्जुश्रीनामसंगीतिकुशलमूल-परिणामना
(15) 2557 नामसंगीति-अनित्यभावना
(16) 2558 नामसंगीति-अनित्यभवनिः-सरण
(17) 2559 नामसंगीतियोगीनामत्रिविष-व्यावृत्ति-उपदेश
(18) 2560 चित्तोत्पादविधि
(19) 2562 चित्तोत्पादभावनोपदेश
(20) 6565 नामसंगीतिषष्ठ-अनुस्मृतिभाव-नोपदेश
(21) 2566 नामसंगीतिद्वादशाङ्गप्रतीत्य-समुत्पादभावनोपदेश
(22) 2567 तीव्रेन्द्रतत्त्वभावना
(23) 2568 मञ्जुश्रीनामसंगीतिमहाबोधि-स्तूपविधिनाम
(24) 2570 समाहितक्रमोपदेश
(25) 2571 मञ्जुश्री-एकवीरसाधनोपाय
(26) 2572 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिविधि-सूत्रपिण्डित
(27) 2573 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिचक्षु-र्विधिनाम
(28) 2574 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिमार-मन्त्रमारचक्र
(29) 2575 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिसर्व-पापविशोधनमण्डलविधिनाम
(30) 2576 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिसर्व-पापविशोधनहोमविधिनाम
(31) 2577 दुर्गतिपरिशोधनषड्गतिविधि
(32) 2578 बोधिचित्तभावनाद्वन्द्वशाप-निर्देश
(33) 2591 बोधिचित्तभावना
(34) 2592 आर्यमञ्जुश्रीनामसंगीतिविधि-सूत्रपिण्डित

मैत्रीपाद

मैत्रीपाद, अवधूतीपाद, अद्वयवज्र[1] आदि इनके पर्यायवाची नाम हैं। देब थेर ङोन पो के अनुसार बुद्धशासन में महामुद्रा का सूत्रपात करने वाले आदिसिद्ध सरह थे। उन्हीं की परम्परा में

1. तिब्बती तंजूर में संगृहीत अद्वयवज्र के ५४ ग्रन्थों की नामावली साधनमाला के उपोद्घात (PXCII-XCIII) में देखी जा सकती है।

शबरिपा आदि आते हैं। इसी परम्परा में मैत्रीपाद ने पहले बौद्धाबौद्ध दोनों दर्शन शास्त्रों का अध्ययन किया, लेकिन उससे वह सन्तुष्ट नहीं हुए और शबरिपा की खोज में निकल पड़े। उनके अधिष्ठान के बल से चित्त की गुह्य गम्भीरार्थ एवं प्रत्यक्ष अवस्था का बोध कर कुछ भी मन में न करने, निरालम्बन का उपदेश देने व सहज ज्ञान पर जोर देने से शान्तिपाद आदि ने उनका विरोध किया और इन दोनों में शास्त्रार्थ हुआ। मैत्रीपाद जीत गये और तब से यह जिनमैत्रीपाद के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनके शिष्यों में नतेकर (यह उनका प्रारम्भिक एवं तैथिक नाम था, बाद में सहजवज्र नाम पड़ा), दिवाकरचन्द्र, रामपाल, वज्रपाणि आदि प्रमुख हैं। इनका समय 11वीं सदी माना जाता है। मैत्रीपाद के नाम से निम्न 9 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 1363 श्रीकालचक्रसाधनायोगप्रदीप - नाम
(2) 1520 श्रीचक्रसंवरस्तोत्रनाम
(3) 2230 मध्यमाष्टक
(4) 1484 श्रीचक्रसंवरसाधनारत्नप्रदीप
(5) 2232 सहजाष्टक
(6) 2435 चित्तमात्रदृष्टिनाम
(7) 2454 महामुद्राकनककमलनाम
(8) 3050 क्रोधराजवज्रासनिज्वालानाम साधनोपायनाग-दमन-कूपाय
(9) 3051 क्रोधराजवज्राशनिज्वालानाम मण्डलविधि

रत्नवज्र

रत्नवज्र काश्मीर के निवासी थे। इनके पिता हरिभद्र बौद्धों के साथ शास्त्रार्थ करके उसमें हार कर बौद्ध बने थे। उपासक के रूप में ये तीस वर्ष की अवस्था तक संस्कृत का अध्ययन करते रहे। उसके बाद मध्यभारत में आकर नालन्दा में अध्ययन किया और वज्रासन में चक्रसंवर की साधना कर सिद्ध बने एवं ओड़ियान में मायागत हुए। यह नालन्दा के मध्यम स्तम्भ के रूप में माने जाते हैं। इनका समय नाड़पाद आदि के साथ है। रत्नवज्र (RinChen rDorje) के नाम से निम्न 13 ग्रन्थ मिलते हैं—

(1) 1299 बलिकर्मक्रमनाम
(2) 1304 होमकर्मक्रम
(3) 1335 सर्वपापविशुद्ध-अग्निपूज्यनाम-समाधि
(4) 1532 श्रीचक्रसंवरस्तोत्र
(5) 1634 महामायासाधना
(6) 1884 श्रीअक्षोभ्यवज्रसाधना
(7) 1478 श्रीहेरुकसाधनानाम
(8) 1479 श्रीचक्रसंवरमण्डलमङ्गलगाथा
(9) 1431 श्रीचक्रसंवरसेकप्रक्रियोपदेश-नाम
(10) 1679 श्रीसर्वबुद्धसमयोगडाकिनी-संवरमहातन्त्रराजनाममण्डल-विधिसर्वसत्त्वसुखोदयनाम
(11) 4265 युक्तिप्रयोगनाम
(12) 2475 चतुर्थसद्भावदेशनाम
(13) 3740 मेघालोकगणपतिसाधनानाम

ललितवज्र

ललितवज्र का जन्म दक्षिण भारत में नौर जीन ड्रगस और माता ब्राह्मणी ताराब्धि के यहाँ हुआ। यह अपने पांच भाई-बहनों में मध्यम थे। इन्होंने वज्रासनपाद से दीक्षा ली और श्रीकुशल

नाम पड़ा । तारा ने ओड़ियान से वज्रभैरव को आमन्त्रित करने के लिए भविष्यवाणी की और उसके अनुसार ओड़ियान में जाकर ज्ञानडाकिनी वैताली से अभिषेक प्राप्त किया तथा वज्रासन के दक्षिण दिशा में कपाल नामक श्मशान में जाकर साधना से सिद्धि प्राप्त की । अभिषिक्त होने पर गुह्य नाम ललितवज्र रखा । इन्होंने ही ओड़ियान से वज्रभैरव को आमन्त्रित कर प्रचार-प्रसार किया । इनके शिष्यों में अमोघवज्र प्रमुख हैं ।

खसचुन् ज़ङ्पो के (पृ० 268) के अनुसार ललितवज्र नालन्दा के पण्डित थे । वैरोचन मायाजाल की 20 वर्ष कठिन साधना कर मञ्जुश्री का साक्षात्कार किया और सिद्धि प्राप्त कर ओड़ियान के धर्मगंज से यमान्तक तन्त्र को आमन्त्रित किया एवं यमान्तक का सूत्रपात किया । तैर्थिक नरवर्मा को ऋद्धि बल से परास्त कर हस्तिनापुर के हिन्दू तान्त्रिक विहार को यमान्तक विहार में परिवर्तित कर दिया । नालन्दा पर हुए नाग विक्रीड की बाधा को भी हवन द्वारा नष्ट किया । इनके शिष्यों में लावापाद, ललितवज्र, मध्यम इन्द्रभूति आदि थे ।

तारानाथ रचित तारास्रोत परम्परा के अनुसार ये क्षत्रिय थे । एक बार किसी कार्य से मगध गये । वहाँ एक वृक्ष के नीचे ऋषि को देखकर श्रद्धा से द्रवीभूत हुए और उनको अपना गुरु स्वीकारा । वे ऋषि तिल्लीपा थे । उन्होंने अभिषेकोपदेश दिया और तत्पश्चात् साधना द्वारा सिद्ध बने ।

कोङ्टुल के अनुसार ललितवज्र डाकिनी-वेताली का प्रत्यक्ष दर्शन कर अभिषेक प्राप्त कर सिद्ध बने और ओड़ियान से यमान्तक, कृष्णतन्त्र, त्रिसंवर, सप्त विकल्प आदि का आर्य देश में खूब प्रचार-प्रसार किया । ललितवज्र के नाम से 9 ग्र थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 1926 यमारिमण्डलविधियमान्तकोदयनाम
(2) 1927 चैत्यसिद्धिविधिपिण्डीकृत
(3) 1962 कृष्णत्रिमुखषट्भुजसाधनोपाय
(4) 1965 लोकविधि
(5) 1986 श्रीवज्रभैरवसमयावतारमण्डलविधि
(6) 1998 श्रीवज्रभैरवसाधना
(7) 1999 श्रीवज्रभैरवसाधना
(8) 2000 श्रीवज्रभैरवबलिविधि
(9) 1362 श्रीकालचक्रक्षणिकसहजसाधनोपायनाम

वागीश्वरकीर्ति

वागीश्वर का जन्म बनारस के राजघराने में हुआ । महासांघिक निकाय में दीक्षा लेकर भिक्षु बने और शीलकीर्ति नाम रखा । तन्त्र में प्रवेश कर कद्यनत के राजा भद्र के अनुयायी हंसवज्र से चक्रसंवर की दीक्षा ली । मगध के एक भाग में कठोर साधना कर वागीश्वर की सिद्धि प्राप्त की तथा एक दिन में एक हजार श्लोक याद कर सकने वाले बने । इस प्रकार नाम वागीश्वर पड़ा । इन्हें किसी भी प्रकार का शास्त्रीय सन्देह उत्पन्न होने पर तारा प्रकट होकर उसका निराकरण करती थी । इनकी विद्वत्ता से प्रभावित होकर राजा ने इन्हें नालन्दा और विक्रमशील का उत्तर द्वारपाल नियुक्त किया । एक बार इन्होंने अवधूति-पा नामक भिक्षु के साथ शास्त्रार्थ करते समय वसुबन्धु के ग्रन्थों

को उद्धृत करने पर उसका मजाक उड़ाया तो रात में अस्वस्थ हो गये, तब तारा की स्तुति की। तारा ने प्रकट होकर वसुबन्धु के प्रति उपेक्षा भावना से यह पीड़ा हुई, अत: प्रायश्चित्त करने को कहा और ठीक हो गये। उसके बाद ये वहाँ से चलकर नेपाल गये। उन्होंने वहाँ तन्त्रों की व्याख्या की अपेक्षा साधना में ज्यादा जोर दिया। इनका समय 11वीं सदी माना जाता है। तारानाथ के अनुसार गुणाकरभट्ट के शिष्य वागीश्वरकीर्ति का जन्म बंगाल जगदल में हुआ था। यह रधई राजा के धर्मगुरु थे। तारा और अवलोकितेश्वर का इन्होंने साक्षात्कार किया था। यह यमान्तक परम्परा के साधक रूप में भी प्रसिद्ध थे। आचार्य वागीश्वर (Ṅag Gi dBaṅ Phyug GragsPa) के नाम से निम्न 8 ग्रन्थ प्राप्त होते हैं—

(1) 1748 मृत्युवचनोपदेश
(2) 1887 संक्षिप्ताभिषेकसामासिक
(3) 1888 सप्ताङ्ग
(4) 1889 तत्त्वार्थालोक
(5) 1890 तत्त्वार्थलोकव्याख्यान
(6) 2887 वज्रपाणिसाधना
(7) 3131 प्रतिष्ठाविधि
(8) 3682 श्रीसिततारासाधना

विलासवज्र

कुक्कुराज के शिष्य विलासवज्र का जन्म षंषर में हुआ था। ओड़ियान में भिक्षु की दीक्षा से दीक्षित हुए और त्रिपिटक का गहन अध्ययन किया। विशेष कर असंग और वसुबन्धु के सिद्धान्तों का अध्ययन कर पारंगत हुए। सामान्य विद्या में निपुण हो जाने पर ओड़ियान के मधीमा नामक द्वीप में जाकर मञ्जुश्रीनामसंगीति की साधना की और साधना सिद्ध होने पर मञ्जुश्री लिखित रूपकाय से प्रकाश प्रस्फुटित हुआ और कुछ क्षण तक द्वीप को प्रकाशित करता रहा। इससे इनका नाम सूर्यरूपी पड़ा। कुछ समय बाद तीर्थकों द्वारा इनके मारने का प्रयास करने पर इन्होंने शेर, चीता, हाथी, आदि विभिन्न कार्यों का निर्माण कर तीर्थकों का दमन किया। इनसे इनका नाम विरुपा पड़ा। यह माया-जाल के विशेष विज्ञ एवं सिद्धिलब्ध थे। इन्होंने नालन्दा में भी 12 साल तक रहकर तन्त्र का प्रचार-प्रसार किया। इन्होंने नामसंगीति की अनुत्तर तन्त्र के अनुसार व्याख्या और हेवज्रतन्त्र के निष्पन्न क्रम पर कई स्वतन्त्र ग्रन्थों की रचना की। इनका भिक्षु नाम श्रीबोधिश्रेष्ठभागी, गुह्य नाम विलासवज्र और विरूपकाय है।

दु० जो० इ० के अनुसार इनके गुरु ज्ञानपाद ने इन्हें मायाजाल, सम्पुटतन्त्र, गुह्यसमाज, चन्द्रगुह्यतिलक आदि अष्टादश तन्त्रों का अभिषेक और उपदेश दिया। विलासवज्र के नाम से (sGegPaḥi rDor rJe) तन्ग्यूर में 6 ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं—

(1) 1290 महातिलकक्रमनाम
(2) 1910 श्रीगुह्यसमाजतन्त्रनिदानगुरूपदेशव्याख्यान
(3) 2533 आर्यनामसंगीतिटीकानाम-मन्त्रार्थावलोकिनीनाम
(4) 2014 श्रीयमान्तकवज्रप्रभेदनाम-मूलमन्त्रार्थ
(5) 3723 सामान्यसमयसंग्रह
(6) 3724 शीलसंवरसमयाविरोधनाम

श्रीधर

राजा धर्मपाल के समय में मगध के ब्राह्मण गोत्र में इनका जन्म हुआ। बाल्यावस्था में ये व्याकरण के पण्डित हो गये थे और ओदन्तपुरी विहार में जाकर भिक्षु बने। दीपंकरभद्र से आगम प्राप्त कर श्रीसेन, ज्ञानपाद आदि की परम्परा के कुछ शिष्यों से गुह्यसमाज और यमान्तक की साधना कर सिद्धि को प्राप्त किया। धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए इनके दक्षिण (विदर्भ) में पहुँचने पर हंसदेव नामक अधर्मी राजा द्वारा भिक्षु का सिर काटते देख राजा से प्राणदान के लिये याचना की; इस पर राजा ने भिक्षु से कहा—तुम अपना सिर दो या सोना दो। तब श्रीधर ने अपना सिर काटकर राजा को दे दिया और सिर की जगह वहाँ प्राप्त भैंस का सिर धारण किया। इस प्रकार वहाँ पर रह रहे सभी लोग श्रद्धा से बौद्धधर्मानुयायी बन गये और ये पुनः पूर्ववत् हो गये। इनके चमत्कार को सुनकर मध्यदेश के राजा ने इन्हें विक्रमशील का उपाध्याय नियुक्त किया। ये दीपंकर के समकालीन थे, क्योंकि दीपंकर श्रीज्ञान के 6 प्रमुख गुरुओं में दीपंकरभद्र एक थे, जिनसे श्रीधर ने आगम पढ़ा था।

तारानाथ ने इन्हें ज्ञानपाद के शिष्य, विक्रमशील विहार के रहने वाले एवं यमारितन्त्र के टीकाकार के रूप में माना है। कुछ लोग इन्हें कृष्णपाद का शिष्य मानते हैं। एक श्रीधर गयाधर के समय में भी हुए थे। इनके नाम से (dPal ḥdsin) निम्न 27 ग्रन्थ प्राप्त होते हैं—

(1) 1540 आलोकचतुष्टयटीकानाम
(2) 1918 श्रीयमारितन्त्रपञ्जिकासहजालोकनाम
(3) 1923 कृष्णयमारिसाधनानाम
(4) 1924 कृष्णयमारिमण्डलसाधना
(5) 1975 महिषाननसाधना
(6) 1988 वज्रचर्चिकाक्रमसाधना
(7) 1990 श्रीवज्रवाराहीसाधना
(8) 1925 वज्रसरस्वतीस्तोत्र
(9) 2043 अग्निदेवपूजा
(10) 2045 रक्षाचक्राधिष्ठानपृष्ठ्योपदेशनाम
(11) 2046 रक्तयमारिमन्त्रसंग्रहनाम
(12) 1991 श्रीवज्रसरस्वतीसाधनानाम
(13) 2023 श्रीरक्तयमारिसाधना
(14) 2024 श्रीयमारिरक्तमण्डलविधि
(15) 2025 स्वाधिष्ठानचतुर्थयोगतत्त्वोपदेशनाम
(16) 2026 रक्तयमारिसाधनानाम
(17) 2027 कृष्णयमारिरक्तयमारिपूजाविधि
(18) 2028 रक्तयमारिमण्डलपूजाविधिनाम
(19) 2029 रक्तयमारिसाधनाविधि
(20) 2030 रक्तयमारिबलिविधि
(21) 2038 रक्तयमारि-अधिष्ठानदेशना
(22) 2039 देवीप्रभाधराधिष्ठान
(23) 2040 प्रभाधरासाधना
(24) 2041 Raṅ Gi Sems Goṅ Du ḥPho Baḥi Man Ṅag ByinbrLab Daṅ bCas Pa
(25) 2042 अधिष्ठानक्रम
(26) 3362 आर्यवज्रसरस्वतीसाधना
(27) 3552 महासरस्वतीसाधना

हूंकार

हूंकार का जन्म नेपाल में ब्राह्मण जाति में हुआ। बचपन में ये तीर्थंकों के सभी दर्शनों का अध्ययन कर प्रकाण्ड पण्डित बने। बाद में बौद्ध धर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होकर बौद्धाध्ययन हेतु नालन्दा आये और बुद्धज्ञान, पण्डित राहुलभद्र से दीक्षा प्राप्त कर पारमिता से लेकर तन्त्र तक सभी शास्त्रों का गहन अध्ययन किया। हेवज्र के अभिषेक के समय पुष्प हूंकारदेव पर गिरा, जिससे उन्होंने 6 महीने तक हूंकार की साधना की और मुद्रा के रूप में शूद्र लड़की का सेवन किया। ये हूंकार का साक्षात्कार कर सिद्ध बने। इनके शिष्य अवधूतीपाद, ओड़ियान के आचार्य गुप्त श्रीशान्त, ज्येष्ठ वज्रासनपाद, अभयदत्त आदि थे। हूंकार (Huṁ) के नाम से केवल एक ग्रन्थ उपलब्ध होता है—

(1) 1675 श्रीहेरुकसाधना



स्व० प्रो० जगन्नाथ उपाध्याय : बहु आयामी व्यक्तित्व

दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोधयोजना के निदेशक, इस शोधपत्रिका के सम्पादक, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय में बौद्ध दर्शन एवं पालि विभाग तथा श्रमणविद्या संकाय के पूर्वाध्यक्ष, नेहरू फ़ेलोशिप से पुरस्कृत प्रोफेसर जगन्नाथ उपाध्याय अब हमारे बीच नहीं रहे, इस मर्मान्तिक दुःखद सूचना को देने के लिए कराल काल ने हमें बाध्य किया है। 15 सितम्बर, सन् 1986 की सान्ध्य वेला में वे निर्वाणभाव में प्रविष्ट हो गये। 1 नवम्बर, सन् 1985 के दिन इस योजना का शुभारम्भ हुआ था। श्री उपाध्याय जी के सुयोग्य निर्देशन में जिस तीव्र गति से कार्य प्रारम्भ हुआ, किसको मालूम था कि यह तीव्रता महाप्रयाण की ओर अज्ञात रूप से बढ़ रहे उन चरणों की थी, जहाँ सारी उत्पाद परम्परा समाप्त हो जाती है और मात्र उनके दिये संस्कार बचे रह जाते हैं। सृष्टि के प्रारम्भ से ही अद्भुत प्रतिभाओं के भी उत्पाद और विनाश का यह चक्र निरन्तर चला आ रहा है। अपने ज्ञान की गरिमा से पूरी मानवजाति को आप्यायित करनेवाले ऐसे महानुभाव भले ही शारीरिक रूप से हमारे सामने उपस्थित न रह सकें, किन्तु उनके दिये हुए संस्कार हमें उस पथ की ओर आगे बढ़ने की निरन्तर प्रेरणा देते रहते हैं, जिस ओर उनकी संकल्पशक्ति सतत क्रियाशील थी। तब भी मनुष्य यह सोचने के लिए बाध्य हो ही जाता है कि उत्कृष्ट मानवीय प्रतिभाओं के साथ काल का यह खिलवाड़ क्या कभी बन्द नहीं हो सकता ?

अभी फिलहाल इस प्रश्न का उत्तर हमें नहीं में मिलेगा। किन्तु मानवजाति ने देवलोक की कल्पना कर रखी है। योगी अरविन्द जैसे आधुनिक चिन्तकों की भी कल्पना है कि एक न एक दिन मानव मन का विकास उस स्तर तक अवश्य पहुँच जायगा, निश्चित रूप से वह उस अमरता को प्राप्त कर सकेगा, जो प्राणिमात्र के दुःख को दूर करने के लिए नित्य तत्पर रहे। सर्वप्रथम भगवान् बुद्ध को इस तथ्य का साक्षात्कार हुआ था और उनके अनुयायियों की भाँति श्री उपाध्याय जी ने भी इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक लम्बी यात्रा पूरी की थी। दार्शनिक विद्वत्ता से बढ़कर उनकी यह करुणामयी मूर्ति समाज के कमजोर वर्ग को ऊपर उठाने के लिए सदा सचेष्ट रही है। भगवान् बुद्ध के प्रज्ञा और करुणामय देह को क्या काल कवलित कर सका ? प्रो० उपाध्याय जी के व्यक्तित्व का भी कभी लोप नहीं हो सकता।

भारतीय संस्कृति की ही तरह प्रो० उपाध्याय जी के जीवन में भी अनेक विविधताओं का सम्मिश्रण था। आधुनिक शिक्षा-दीक्षा के हामी तथा राजकीय सेवा में अनुरक्त परिवार में इनका जन्म हुआ था, किन्तु प्रारम्भ से ही ये प्राचीनतम भाषा संस्कृत के छात्र रहे तथा पारिवारिक और शैक्षणिक परिवेश के विपरीत इन्होंने राष्ट्रीय आन्दोलनों में सक्रिय रूप से भाग लिया। प्रारम्भ में ये शाङ्करवेदान्त के विद्यार्थी और अध्यापक भी रहे, किन्तु मनीषिप्रवर म० म० गोपीनाथ कविराज, आचार्य नरेन्द्रदेव और महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के सम्पर्क में आने पर इनमें बौद्ध दर्शन और संस्कृति के अध्ययन की रुचि जागी और इन्होंने अपने वेदान्तशास्त्र के गुरु पण्डित

रघुनाथ शर्मा की सहायता से तथा स्वयं अपने अथक परिश्रम से राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी से बौद्धदर्शन की आचार्य परीक्षा सर्वप्रथम उत्तीर्ण की। स्वातन्त्र्य आन्दोलन का संचालन इन्होंने गाँधीवादी पद्धति से किया, किन्तु बाद में आचार्य नरेन्द्रदेव, जयप्रकाश नारायण, अच्युत पटवर्धन, प्रो० मुकुटबिहारी लाल तथा प्रो० राजाराम शास्त्री जैसे समाजवादी चिन्तकों के सम्पर्क में आकर इन्होंने समाजवादी दृष्टिकोण अपनाया। बौद्धदर्शन और मार्क्सवाद (साम्यवाद) के तुलनात्मक अध्ययन में इनकी गहरी रुचि थी। जीवन के अन्तिम भाग में वे विश्वप्रसिद्ध चिन्तक स्व० जे० कृष्णमूर्ति के निकट सम्पर्क में आए और उनके विचारों का प्रो० उपाध्याय के जीवन पर पर्याप्त प्रभाव रहा है। इसीलिये इनके बौद्धिक चिन्तक स्वरूप पर राजनीति कभी हावी नहीं होने पाई। बौद्ध धर्म में दृढ़ आस्था रहने पर भी इन्होंने मैत्री-यात्रा जैसे आयोजनों के माध्यम से सभी धर्मों में सहिष्णुता का भाव भरने का प्रयास किया।

प्रज्ञा और करुणा का इनमें अद्भुत सामञ्जस्य था। बिना उपाय के प्रज्ञा और करुणा दोनों निष्क्रिय सी रहती हैं। उपायकौशल्य के कारण ही प्रज्ञा के क्षेत्र में अखिल भारतीय दर्शन गोष्ठियों, सम्मेलनों, सेमिनारों और कार्यशालाओं के माध्यम से इन्होंने भारतीय संस्कृति के उस गम्भीर पक्ष को उजागर किया, जो अब तक मनोरंजक, सांस्कृतिक गतिविधियों के आगे दब सा गया था। इस क्षेत्र में संस्कृत और हिन्दी भाषा की प्रतिष्ठा प्रो० उपाध्याय की महनीय देन थी।

भारत में बौद्ध दर्शन के अध्ययन को पुनरुज्जीवित करने के लिये इन्होंने संस्कृत विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा के साथ ही एक नूतन विभाग की स्थापना के लिये महनीय प्रयास किया था। इनके प्रयास के कारण ही आज इस विश्वविद्यालय में श्रमणविद्या संकाय की स्थापना हो सकी है और विदेशी छात्रों को संस्कृत भाषा का प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त कराने के लिये एक प्रमाणपत्रीय पाठ्यक्रम चल रहा है। चीन के आक्रमण के बाद छिन्न-भिन्न हो रही सीमाप्रान्तीय संस्कृति की रक्षा के लिये भारत सरकार ने इनके निर्देशन में भारत के उत्तर-पूर्वी सीमान्त प्रदेशों का व्यापक सर्वेक्षण कराया था और उसकी चरम परिणति सारनाथ में केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, लेह (जम्मू-कश्मीर) में केन्द्रीय बौद्ध विद्या संस्थान, दिल्ली में लद्दाख उच्च शिक्षा संस्थान आदि की स्थापना के रूप में हुई। इनके ही अथक प्रयास से उत्तरप्रदेश सरकार ने अभी हाल में आचार्य नरेन्द्रदेव पालि शोध-संस्थान की स्थापना की है और अपने समृद्ध पुस्तकालय को समर्पित करने की घोषणा के साथ वाराणसी में बौद्ध स्वाध्याय केन्द्र की स्थापना इन्होंने स्वयं की है। केन्द्रीय सरकार ने भी इनके सुझाव के अनुसार राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान के सहयोग से जवाहरलाल नेहरू अन्तर्राष्ट्रीय बौद्ध शोध-संस्थान की स्थापना का संकल्प पारित किया है। यह संस्थान बुद्धगया अथवा कुशीनगर में स्थापित होगा। इसके लिये अब तत्काल प्रशासन को कार्यवाही प्रारम्भ कर देनी चाहिये।

प्रज्ञापक्ष के समान इनका करुणापक्ष भी अत्यन्त प्रखर था। बाबा साहब अम्बेडकर ने अपने जीवन के अन्तिम दिनों में यह निष्कर्ष निकाला था कि भारत में दलितों की समस्या का एकमात्र समाधान है उनको बौद्ध धर्म में दीक्षित कर देना। उनके इस निष्कर्ष से प्रो० उपाध्याय जी पूरी तरह से सहमत थे और इसीलिये उन्होंने पूरे जोर-शोर से बड़े पैमाने पर इस तरह के दीक्षा-यज्ञों का

आयोजन किया था। करुणा के इस सामूहिक स्रोत के अतिरिक्त व्यक्तिगत रूप से भी किसी अभाव-ग्रस्त, रुग्ण तथा पीड़ित व्यक्ति को सहायता पहुँचाना उनके जीवन का सहज तथा स्वाभाविक कार्यक्रम बन गया था। भगवान् बुद्ध की यह सहज करुणा ही दुःखी मानवता का उद्धार कर उसको सहज सुख से आप्यायित कर सकती है।

धर्म, संभोग और निर्माणकाय के अतिरिक्त सहजकाय के स्वरूप को समझाने के लिये भगवान् बुद्ध ने तन्त्रशास्त्र की देशना की थी। आचार्य नरेन्द्रदेव के ग्रन्थ 'बौद्ध धर्म-दर्शन' के सम्पादन के प्रसंग में इस विषय पर महामहोपाध्याय पद्मविभूषण गोपीनाथ कविराज से भूमिका लिखवाते समय इस तथ्य से श्री उपाध्याय सन् 1955 में ही परिचित हो चुके थे। इस विशाल वाङ्मय पर कार्य करने का अवसर इन्हें नेहरू फ़ेलोशिप के लिये अपना कार्यक्षेत्र निर्धारित करने के बाद मिला। उन्होंने एकाधिक बार नेपाल ी यात्रा की तथा एक बार पूरे विश्व का भ्रमण किया। बौद्ध वाङ्मय के दुर्लभ होते जा रहे संस्कृ. ग्रन्थों के व्यक्तिगत संग्रह के अतिरिक्त सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व-विद्यालय के विश्वप्रसिद्ध पुस्तकालय सरस्वती भवन में तथा केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान के पुस्तकालय में अनेक ग्रन्थों की फोटो प्रतियों, माईक्रोफिल्म और माईक्रोफिश प्रतियों का संग्रह कराया तथा अनेक ग्रन्थों की देवनागरी प्रतियाँ भी तैयार कराई।

इस सामग्री ने उनके मन में इस संकल्प को जगाया कि सारनाथ के तिब्बती संस्थान में कार्यरत तिब्बती विद्वानों और वाराणसी के संस्कृत विद्वानों के सहयोग से दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थों के प्रकाशन के लिये कोई शोध योजना चलायी जाय। प्रस्तुत योजना उनके इसी संकल्प की परिणति है। उनको यह मालूम था कि आज किसी एक ग्रन्थ का अनेक प्रतियों के मिल जाने पर भी उनके मूल स्वरूप का उद्धार कर पाना बहुत ही कठिन कार्य है। ग्रन्थों के मूल स्वरूप की इस दुर्लभता को व्यक्त करने के लिये ही उन्होंने "दुर्लभ बौद्ध ग्रन्थ शोधयोजना" यह नाम दिया था और सर्वप्रथम आठ सिद्धियों के उद्धार का कार्य अपने हाथ में लिया था। एक ग्रन्थ के रूप में ये सिद्धियाँ शीघ्र ही प्रकाशित होने वाली हैं तथा तन्त्रशास्त्र के अन्य 10-15 मूल और टीका ग्रन्थों पर भी कार्य बहुत आगे बढ़ चुका है। यह सब प्रो० उपाध्याय के उपायकौशल्य की ही परिणति है।

तन्त्रशास्त्र के नाम से नाक-भौंह सिकोड़ने वालों की आज कमी नहीं है, किन्तु हमें स्मरण रखना होगा कि आज पूरे विश्व के भारतीय विद्या पर कार्यरत विश्वविद्यालयों तथा शोधसंस्थानों में प्रधानतः आगम और तन्त्रशास्त्र की ही विविध शाखाओं पर कार्य हो रहा है। भारत में विभिन्न वर्गों में विभक्त समूहों को एकताबद्ध करने का महनीय कार्य इस शास्त्र ने किया था। इष्ट देवता के भेद और दार्शनिक पद्धति के भेद के रहते हुए भी उपासना, भक्ति और योगकी समरूपता इस शास्त्र की अपनी विशेषता है। तन्त्रशास्त्र ने वर्ण और लिंग के भेद को अस्वीकार कर श्रेष्ठता और कनिष्ठता का आधार शुभ और अशुभ कर्म को माना था। दक्षिण भारत के वैष्णव और शैव भक्तों, उत्तर भारत के सिद्धों, नाथों, गुरुओं और सन्तों की परम्परा में इस तथ्य का साक्षात्कार हम कर सकते हैं। भारत की इस भूली-बिसरी उत्कृष्ट परम्परा को उजागर करने के लिये ही प्रो० उपाध्याय ने इस योजना में तन्त्रशास्त्र और अपभ्रंश साहित्य को वरीयता दी थी। हम समझते हैं कि उनके इस संकल्प को तत्परतापूर्वक पूरा करना ही उनके प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी॥ ●

प्रो० जगन्नाथ उपाध्याय की साहित्यिक साधना

—बनारसी लाल—

काशी विद्यापीठ की छात्र परिषद् की हस्तलिखित पत्रिका में इनका पहला दार्शनिक निबन्ध प्रकाशित हुआ था। इसमें इन्होंने अपना नाम नहीं दिया। राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी के दीक्षान्त समारोह के अवसर पर प्रति वर्ष समायोजित होने वाले सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिये "महाभिनिष्क्रमण" नामक एकांकी नाटक की रचना इन्होंने की थी, किन्तु बाद में इन्होंने साहित्य की अपेक्षा दर्शन को वरीयता दी। आगे दी गई निबन्ध सूची में इस प्रवृत्ति को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। सन् 1949 से 1951 तक इन्होंने राजकीय संस्कृत महाविद्यालय, वाराणसी की त्रैमासिक शोधपत्रिका "सारस्वती सुषमा" का सम्पादन किया। अपने जीवन के अन्तिम दस-बारह वर्षों में ये मृतप्राय संस्कृत साप्ताहिक पत्र 'गाण्डीवम्' को जीवन दान देकर उसका निरन्तर सम्पादन और प्रकाशन करते रहे हैं। इस अवधि में इनके अथक परिश्रम से इस पत्र के अनेक महत्त्वपूर्ण विशेषांक प्रकाशित हुए। आचार्य नरेन्द्रदेव के ग्रन्थ बौद्ध धर्म-दर्शन, गोपीनाथ कविराज अभिनन्दन ग्रन्थ तथा सम्पूर्णानन्द अभिनन्दन ग्रन्थ के संस्कृत खण्ड के सम्पादन में इनका पूर्ण सहयोग रहा है। इनका अन्तिम महनीय कार्य है "कालचक्रतन्त्र" की सम्पूर्ण "विमलप्रभा टीका" का उद्धार। इस ग्रन्थ के प्रथम खण्ड का प्रकाशनोद्घाटन महामहिम दलाई लामा जी के पवित्र करकमलों द्वारा हो चुका है और आशा की जा सकती है कि शेष ग्रन्थ भी शीघ्र प्रकाशित हो सकेगा। प्रस्तुत पत्रिका "धीः" के इनके द्वारा सम्पादित दो अंक बौद्ध विद्या के क्षेत्र में अपना क्या स्थान बनाते हैं, इसका मूल्यांकन होना अभी बाकी है।

हम यहाँ उनके संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा में लिखे गये प्रकाशित एवं अप्रकाशित अब तक परिज्ञात निबन्धों की सूची दे रहे हैं। एक अथवा दो खण्डों में इन सभी निबन्धों को प्रकाशित करने की योजना है। दर्शन, धर्म, संस्कृति और समाज के क्षेत्र में उनके दिये गये अवदान की सही झलक उसी से मिल सकेगी।

प्रकाशित निबन्ध

(1) **संस्कृत**

1. क्षणभङ्गवादः—सारस्वती सुषमा, वर्ष 10, पृ० 109-119
2. गान्धिनः प्रयोगदर्शनम्—सा० सु०, वर्ष 4, अंक० 4, पृ० 94-102
3. बौद्धशाङ्करयोरद्वयवादः—सा० सु०, वर्ष 5, अंक 3, पृ० 87-93
4. भारतीयसंस्कृतिः—सा० सु०, वर्ष 6, अंक 27, पृ० 45-51
5. लोकसंस्कृतिविकासाय दर्शनभूमिः—सा० सु०, वर्ष 6, अंक 3-4, पृ० 327-332
6. शून्यनिःस्वभावनिरालम्बशब्दार्थविचारः—सा० सु०, वर्ष 8, अंक 2-3, पृ० 214-218

7. ज्ञानस्य निराकारत्वेऽद्वैतवादिबाह्यार्थसत्त्ववादिनोर्विशेषः—सा० सु०, वर्ष 11, अंक 3-4, पृ० 205-211
8. दर्शनपरिषदो विवरणम्—सा० सु०, वर्ष 15, अंक 3-4, पृ० 375-378
9. दर्शनपरिषदो विवरणम्—सा० सु०, वर्ष 17, अंक 3-4, पृ० 431-436
10. प्राचीनन्यायेषु व्याप्तिविस्तारः—सा० सु०, वर्ष 15, अंक 1-4, पृ० 325-341
11. बाह्यसद्वस्तुवादिदर्शनेषु सत्यद्वयविमर्शः—सा० सु०, वर्ष 17, अंक 3-4, पृ० 367-377
12. भारतीयदर्शनेषु निर्विकल्पतज्ज्ञेययोः स्वरूपविकासः—सा० सु०, वर्ष 14, अंक 3, पृ० 91-100
13. मानाधीना मेयसिद्धिर्मेयाधीना मानसिद्धिर्वा—सा० सु०, वर्ष 11, अंक 3-4, पृ० 200-204
14. विज्ञाननादे मनोनिरूपणम्—सा० सु०, वर्ष 16, अंक 1-2, पृ० 169-173
15. दर्शनपरिषदो लक्ष्यं स्वरूपं च—सा० सु०, वर्ष 11, अंक 3-4, पृ० 252-256
16. कालरहस्यम्—सा० सु०, वर्ष 5, अंक 4, पृ० 57-70
17. गांधीवादः—महीधरप्रभा, गांधी विशेषांक, 2 अक्तूबर 1966, पृ० 17-19, शिवसंकट-हरण आदर्श संस्कृत महाविद्यालय, सकाहा।
18. भारतीयदर्शनेषु बौद्धानां प्रकर्षः—सूर्योदय, हीरक जयन्ती विशेषांक, पृ० 193-202
19. बौद्धेषु प्रमाणमीमांसा—भास्वती, सन् 1976, पृ० 7-16
20. ब्रह्माद्वैतविज्ञानवादयोः साम्यवैषम्ये—सागरिका, पृ० 307-318
21. बौद्धवैष्णवयोर्भक्तिसाम्यम्—सागरिका, वर्ष 12, अंक 2, पृ० 113-119—वर्ष 12 अंक 3, पृ० 225-232
(परिसंवाद—1, सं० सं० वि० वि० 1981, पृ० 84-90 में भी प्रकाशित)
22. बौद्धदर्शने किञ्चित्—सरल निबन्धावलिः, भाग 3 की भूमिका, कम्बुज संस्कृत सीरीज–3, सं० सं० वि० वि०, सन् 1969
23. सम्पादकीयम्—सारस्वती सुषमा, पृ० 96-102, 4 वर्ष, तृतीयाङ्क, सन् 1949
24. सम्पादकीयम्—सारस्वती सु०, पृ० 165-173, विशिष्टांक, आश्विन-पौष संवत् 2006
25. सम्पादकीयम्—सा० सु०, पृ० 106 112, 5 वर्ष, 2 अङ्क, चैत्र 2007
26. सम्पादकीयम्—सा० सु०, पृ० 105-108, 5 वर्ष, 3 अङ्क, आषाढ 2007
27. सम्पादकीयम्—सा० सु०, पृ० 147-176, 5 वर्ष, 4 अङ्क
28. मोक्षविषये किञ्चित्—स्वामी रामलक्ष्मणाचार्यकृत मोक्षमीमांसा की भूमिका, सम्पादक—डा० नवीकान्त झा, सन् 1970
29. भूमिका—तत्त्वसंग्रह, सम्पादक—स्वामी द्वारिकादास।
30. भूमिका—रामानन्ददर्शनम्, रामानन्दाचार्य कृत।

(२) हिन्दी

1. भारतीय संस्कृति का विकास—सा० सु०, वर्ष 12, अंक 1, पृ० 96-99
2. भारतीय संस्कृति का स्रोत : हिमालय—'आज' गणतन्त्र विशेषांक, 26 जनवरी 1963, पृ० 13

3. भारतीय संस्कृति में बौद्धधारा—श्रीकृष्णसन्देश, वर्ष 5, अंक 11, जून 1970, पृ०50-55, श्रीकृष्ण जन्मस्थान सेवासंघ, मथुरा।
4. कविराजजी का जीवन दर्शन—परिषत् पत्रिका, वर्ष 18, अंक 2, जुलाई 1978, पृ० 12-16, बिहार राष्ट्रभाषा परिषत्, पटना—4
5. भारतीय दर्शन में मानव दृष्टि का विकास—समाज, धर्म एवं दर्शन, वर्ष 2, अंक 1, संवत् 2041, पृ० 19-28, श्रीभुवनेश्वरी विद्या प्रतिष्ठान का त्रैमासिक।
6. बौद्ध दृष्टि में अस्तित्व की अवधारणा और उसका सामाजिक सन्दर्भ—दर्शन त्रैमासिक, वर्ष 23, अंक 3, जुलाई 1977, पृ० 163-167, अखिल भारतीय दर्शन परिषद्।
7. दुःख की समस्या और परिवर्तनवादी बौद्ध दर्शन—परामर्श हिन्दी, वर्ष 6, अंक 4, सितम्बर 1985, पृ० 361-377
8. अहिंसा : अध्ययन की एक दिशा—संकाय पत्रिका 1, श्रमणविद्या भाग 1, 1983, पृ० 1-24, सं० सं० वि० वि०, वाराणसी।
9. भारतीय चिन्तन परम्परा में नये जीवन दर्शन की अपेक्षा—चिन्तामणि, वर्ष 10, अंक 3, पृ० 3 5-372
10. बौद्ध दृष्टि में व्यक्ति, लोक तथा सम्बन्ध—परिसंवाद 2, पृ० 5-14, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।
11. सामाजिक समता का प्रश्न : प्राचीन एवं नवीन—परिसंवाद 2, पृ० 215-221, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी।
12. बौद्ध दृष्टि में व्यक्तित्व का विकास—चिन्तामणि, वर्ष 2, अंक 2, फरवरी 1968, पृ० 210-223
13. समाजपरिवर्तन और भगवान् बुद्ध का परिवर्तनवाद—तथागत वाणी, भाग 1, नं० 2, जुलाई-सितम्बर 1974, पृ० 9-13
14. श्रद्धा का केन्द्र और परिवर्तनवाद—आनन्दपुष्पाञ्जलि, पृ० 8, जुलाई 1977, अन्नपूर्णा मन्दिर, विश्वनाथगली, वाराणसी।
15. संस्कृत शिक्षा का वर्तमान और भविष्य 1—आज, 1 अगस्त 1973
   ,, ,, 2—आज, 22 अगस्त 1973
   ,, ,, 3—आज, 27 अगस्त 1973
16. समाज परिवर्तन के कुछ बुनियादी प्रश्न—स्मरणिका, पृ० 47-49 पाचवाँ अंग्रेजी हटाओ सम्मेलन, 28 फरवरी से 1 मार्च 1970, अहमदाबाद।
17. जाति तोड़ो की दिशा : बुद्ध और गांधी—स्मरणिका, पृ० 69-70, अखिल भारतीय अनुसूचित जाति-जनजाति छात्र सम्मेलन, 18 दिसम्बर 1983, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।
18. खसमानामटीका (सम्पादित लघु पुस्तक)—संकाय पत्रिका 1, श्रमणविद्या भाग 1, सन् 1983, पृ०227-257
19. महायान साधना का विकास—परिसंवाद 2, पृ० 22-35, सं० सं० वि० वि०, सन् 1981
20. बौद्धदर्शन—आज, पृ० 27 वैशाखपूर्णिमा, संवत् 2013, परिनिर्वाण महोत्सव विशेषांक।

21. बहुजनकल्याण और महात्मा बुद्ध की देन—साप्ताहिक हिन्दुस्तान, पृ० 14, 28; मई 1972
22. लद्दाख की सांस्कृतिक समस्या : व्यापक सन्दर्भ में—विद्याभारती, प्रथमांक, मई 1986, पृ० 27-32, छोस् खोर लिङ् बौद्ध सेवा संघ, किन्नौर, हिमाचल प्रदेश।
23. बौद्धदर्शन और मार्क्सवाद : विरोध एवं सम्भावनाएँ—"बौद्धदर्शन और मार्क्सवाद" रजत जयन्ती ग्रन्थमाला—3, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी, सन् 1985
24. बौद्ध न्याय की भूमिका—बौद्ध तर्कभाषा, सम्पा० प्रो० रघुनाथ गिरि।
25. बौद्ध धर्म में परिवर्तनवाद—समता सम्भावना, वर्ष 2, अंक 3, पृ० 6-9, सन् 1983
26. सिद्ध एवं अपभ्रंश साहित्य का सर्वेक्षण—1, 'धी:' प्रथम अंक, पृ० 257-298, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी।
27. भगवान् बुद्ध और आज का भारत—बुद्ध जयन्ती, 23 मई 1986, मैत्री यात्रा के अवसर पर प्रकाशित, बौद्ध स्वाध्याय केन्द्र, वाराणसी।
28. नागार्जुन की नीतिमीमांसा—सम्यग् वाक् 2, पृ० 30-39, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी।
29. प्रतीत्यसमुत्पाद : अस्तित्व, सम्बन्ध एवं परिवर्तन—सम्यग् वाक् 1, पृ० 11-28, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी।
30. कविराजजी के प्रति श्रद्धा : अखण्ड भारतीय संस्कृति का जागरण—स्मारिका, सन् 1986, महामहोपाध्याय पं० गोपीनाथ कविराज आविर्भाव शताब्दी महोत्सव, अखण्ड महायोग संस्थान, लखनऊ।
31. भारतीय ज्ञानमीमांसा पर बौद्ध विज्ञानवाद का प्रभाव—"बौद्ध विज्ञानवाद : चिन्तन एवं योगदान", पृ० 67-73, सम्पादक—राधेश्यामधर द्विवेदी, केन्द्रीय उच्च तिब्बती शिक्षा संस्थान, सारनाथ, वाराणसी।
32. महात्मा गांधी का प्रयोग दर्शन—परिसंवाद 3, पृ० 31-36, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी—221002
33. भूमिका—जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन—डा० सागरमल जैन, प्राकृत भारतीय संस्थान, जयपुर।
34. आचार्य जी और बौद्धदर्शन—आचार्य नरेन्द्रदेव कृत बौद्ध धर्म-दर्शन, पृ० 52-56
35. बौद्ध तन्त्रदर्शन और प्रत्यभिज्ञा दर्शन—काशी विद्यापीठ, हीरक जयन्ती अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० 45-51, सन् 1983
36. जाति तोड़ो : एक दिशा समस्या से समाधान की ओर।
CHALLENGE, Oct-Nov, 1977, P. 8–15.
Published by Pammi Lal
P. 1/8 Ravindrapuri. Varanasi–221005.
37. भूमिका—आप्तमीमांसा, सम्पा० उदयभान जैन।
38. सीमान्त बौद्धों की वर्तमान समस्या, विद्या भारती, अंक 2, किन्नौर, हि० प्र०।

39. क्या बौद्ध-वैष्णव मतों में भक्तिभाव की समता है ?—चिन्तामणि, वर्ष 8, अंक 1
40. पश्चिमोत्तर सीमान्त प्रदेश की बौद्ध संस्कृति : समस्या और समाधान—सीमान्त प्रदेशीय बौद्ध सम्मेलन स्मारिका, पृ० 1-6, सितम्बर, सन् 1978
41. कृष्णमूर्ति : एक शब्द चित्र—परिसंवाद, पृ० 2-3, अक्तूबर, सन् 1986, जे० कृष्णमूर्ति प्रज्ञा परिषत्, राजघाट, वाराणसी ।

(3) ENGLISH

1. Modern Relevance of Buddhist Philosophy
   Bharat Manisha, Quarterly
   Vol. II, No.I, P. 13–18, April 1976.
2. Irrelavanc of God : A Buddhist View.
   Bodhi-Raśmi, P.99-101, Published on Ist International Conference on Buddhism and National Cultures, New Delhi, 10-15 Oct. 1984.
3. Thc Cultural Controversies between the Buddhist and Vedas in the Literature of Kalidas. Published in Analytical Studies in Buddhist Philosophy, Ed.by G.C. Nāyak, Utkal University, Bhuvaneśwar, 1984.

अप्रकाशित निबन्ध

1. जे० कृष्णमूर्ति ।
2. आचार्य नागार्जुन का दर्शन : निषेध और निर्माण ।
3. ईश्वर की अप्रासंगिकता बौद्ध दृष्टि में ।
4. आधुनिक सन्दर्भ में बौद्ध परिवर्तनवाद ।
5. काशी की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि ।
6. काशी की धार्मिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि ।
7. अस्पृश्यता ।
8. भारतीय प्रश्नों के महान् उत्तर ।
9. जातिवाद पर भगवान् बुद्ध का चतुर्दिक् प्रहार ।
10. बौद्ध दृष्टि में जीवन और उसका उद्देश्य ।
11. भारत के सामाजिक-सांस्कृतिक विकास में श्रमण-परम्परा का अवदान ।
12. व्यक्ति और समाज : बौद्ध चिन्तन ।
13. सांस्कृतिक संकट के बीच प्राकृतों की समस्या ।
14. बुद्धिगत मिथ्यात्व का निषेध ।
15. समाज परिवर्तन और बौद्ध पुनर्जागरण ।
16. धर्म की अवधारणा (बैंकाक लेक्चर) ।
17. बुद्ध की अनिवार्यता : आधुनिक भारतीय सन्दर्भ में ।
18. बौद्ध दर्शन का अन्य भारतीय दर्शनों पर प्रभाव ।

19. कविराजजी के जीवन-दर्शन की दिशा : मानव स्वातन्त्र्य और संस्कृति ।
20. उपेक्षित जातियों की समस्या की व्यापकता ।
21. बौद्ध संस्कृति बनाम ब्राह्मणवाद ।
22. प्रेम ।
23. दोषों के निषेध में ही निर्माण की अनन्त सम्भावनाएँ ।
24. स्वभाववाद ।
25. मूल्य परिवर्तन के लिए अस्तित्व की नवीन व्याख्या आवश्यक ।
26. बौद्ध योग का लक्ष्य :आदर्श व्यक्तित्व का निर्माण ।
27. बौद्ध दर्शन एवं वेदान्त : सामाजिक जीवनदृष्टि ।
28. संस्कृत एवं भारतीय संस्कृति की विश्वयात्रा ।
29. भारतीय संस्कृति को बौद्ध देन ।
30. वर्तमान सन्दर्भ में बौद्धदर्शन के जीवन्त तत्त्व ।
31. बौद्ध न्याय का विकास एवं योगदान ।
32. जातिवाद : समस्या से समाधान की ओर ।
33. सीमान्त प्रदेश का सांस्कृतिक पुनर्जागरण ।
34. बौद्ध आन्दोलन की क्रान्तिकारी सम्भावनायें ।
35. डॉ० अम्बेडकर के बौद्ध आन्दोलन की भावी दिशा ।
36. अनस्तित्वाधारित अस्तित्व : उत्क्रान्ति एवं सम्बन्ध ।
37. बौद्ध दर्शन की नवीन सम्भावनाएँ ।
38. अपोहवाद ।
39. बौद्ध और वेदान्त दृष्टि में जीवन और दर्शन में अविद्या ।
40, विद्रोह का दर्शन ।
41. बौद्ध एवं वैदिकों का सांस्कृतिक वाद-प्रतिवाद : कालिदास के काव्यों में ।
42 वेदान्त और बौद्धदर्शन की समन्वित जीवनदृष्टि की बाधाएँ ।
43. विक्रमशिला विश्वविद्यालय ।
44. देश की समस्याएँ ।
45 सांस्कृतिक क्रांति : दिशा और कार्यक्रम ।
46. धर्म-परिवर्तन के पीछे ।
47. ब्राह्मण नहीं, ब्राह्मणवाद का विरोध ।
48. परिवर्तन की समस्या : ब्राह्मणवाद बनाम बौद्धवाद ।
49. ब्राह्मण वर्ग भी उपेक्षित ।
50. बौद्ध दृष्टि में अहिंसा ।
51. बोधिचित्त का विकास और आधुनिक सन्दर्भ ।
52. भगवान् बुद्ध, बौद्ध धर्म और उनके दर्शन की रूपरेखा (8 भाग में नेपाल के भाषण)
53. संस्कृत शिक्षा का विस्तार क्षेत्र ।
54. संस्कृत शिक्षा की विशेषता क्या है ?

55. नेपाल में बौद्ध शिक्षा का प्रारूप।
56 गांधीजी का नीतिधर्म।
57. भारतीय दर्शनों के नये वर्गीकरण की दिशा।
58. पुण्यश्लोक आचार्य नरेन्द्रदेव।
59. आचार्य दीपंकर की दृष्टि में वज्रयान।
60. भगवान् बुद्ध की अनिवार्यता : आधुनिक भारतीय सन्दर्भ में (कोलम्बो रेडियो प्रसारण)
61. बौद्ध धर्म की धर्मनिरपेक्षता।
62. दुःख की समस्या और परिवर्तनवादी बौद्ध दर्शन।
63. वज्रयान : धर्म, साधना और जीवन दर्शन।
64. शान्ति और अहिंसा : बौद्ध दृष्टि में।
65. भारतीय बौद्ध समाज का अन्तर्ग्रन्थन : विविधता और समानता।
66. कालचक्रतन्त्रस्य वैशिष्ट्यम्।
67. Some Aspects of Kālacakra Tantra.
68. Vajrayāna : System Perceptivity and Practice.
69. God and Tradition.

དཔལ་བཅོམ་ལྡན་འདས་མ་འཕགས་མ་སྒྲོལ་མ་ལ་ཕྱག་འཚལ་

ཉེར་གཅིག་མའི་བསྟོད་པ། (1-3)

བསྟོད་པ་འདི་ཞྲིཛགནཉནབྲོབཏླཡཡའི་སྐུ་སྐྱེར་གྱི་དཔེ་མཛོད་ནང་བཞུགས་དཔར་འདེབས་མ་ཟིན་པའི་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྡུས་ཀྱི་(ཤོག་གྲངས་༢༢–༢༨)བསྟོད་པའི་····· ཨང་རིམ་ ༦༠ ནས་བྱུར་བཀོལ་ཞུས།།

སྐུ་གསུམ་རྡོ་རྗེ་རྣལ་འབྱོར་མའི་ཚོགས་བཅད་བཅུ་དྲུག་མའི་

བདག་ཉིད་ཅན་གྱི་བསྟོད་པ་དོན་བསྡུས་མ། (4-5)

བསྟོད་པ་འདི་ཞྲིཛགནཉནབྲོབཏླཡཡའི་སྐུ་སྐྱེར་དཔེ་མཛོད་ནང་བཞུགས་ཡོད་པའི་གསང་བའི་དམ་ཚིག་སྒྲུབ་ཐབས་ཕྱོགས་བསྡུས་ (ཤོག་གྲངས་༡༨༡–༡༨༢, ཨང་རིམ་ ༣༨) ནས་བྱུར་སྟོན་ཞུས།།

ཆེས་དཀོན་པའི་དཔེ་དེབ་ཁག་གི་ངོ་སྤྲོད། (6-49)

འགོ་བརྗོད་འདིའི་འོག"ནྡྲི"དེབ་ཨང་དང་པོའི་ནང་ (ཀ) པར་གསང་དའི་ དམ་ཚིག་སྒྲུབ་པ་ཕྱོགས་བསྡུས་དང་། (ཁ) པར་ནང་པའི་བསྟོད་ཚོགས་ཕྱོགས་བསྡུས་ གསལ་བཤད་བྱས་ཡོད་པ་ལྟར། སྐབས་འདིར་འགོ་བརྗོད་ཨང་གྲངས་དང་པོར་

གཟུངས་སྔགས་ཕྱོགས་བསྡུས་ཀྱི་ངོ་སྤྲོད་བཀོད་ཡོད། འདི་ནི་གཞུང་གྲངས་༢༥༡ གི་ཕྱོགས་བསྡུས་ཞིག་རེད། འདིའི་ནང་གཟུངས་སྔགས་དང་སྙིང་སྔགས་༢༦༣ ཡོད་ཅིང་། བསྟོད་པ་༩༨ དང་དེ་བཞིན་གཞུང་ཐོར་བུ་བ་༤༦ ཙམ་བཞུགས་ཡོད། སྤྱིར་གཞུང་རྣམས་ཀྱི་ཕྱོགས་སྡུ་གོ་རིམ་ལ་ངེས་གཏན་མེད་ནའང་། ཨང་གྲངས་གཞུང་རང་རང་གི་མཐར་བཞག་ཡོད། འདིར་སྐབས་བདེའི་ཆེད་གཟུངས་སྔགས་དང་སྙིང་སྔགས་རྣམས་ཨ་ལ་སོགས་པའི་ཡི་གེའི་གོ་རིམ་ལྟར་བཀོད་ནས་གཞུང་ནང་འཁོད་པའི···ཨང་གྲངས་དེ་དཔེ་དེབ་ཀྱི་མིང་ཐོག་བཞག་ཡོད། སྔགས་ཀྱི་བདག་ཉིད་ཅན་གྱི་གཞུང་འདི་རྣམས་ལ་རང་ངོས་ནས་མཚན་གང་ཡང་བཀྱབ་མེད། གཞུང་ཐོར་བུ་བ་རྣམས་ཀྱི་སྐོར་གསལ་བཤད་བྱས་ཡོད། བསྟོད་པ་རྣམས་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྡུས་སྐབས་འོག་ཏུ་བཀོད་ཡོད།

མཁྱེན་གསལ་ལྷར་མཁས་དཔང་ཧརཔྲསཱདཤཱསྟྲཱི་མཆོག་ནས་བལ་ཡུལ་རྒྱལ་པོའི་ཕོ་བྲང་གི་དཔེ་མཛོད་མིནྟ་ཀེཊ་ལོག་སྐྱེ་ཚན་ ༢ པའི་ནང་གསལ་ཡོད་པའི་གཟུངས་བསྡུས་རྒྱས་པའི་ངོ་སྤྲོད་གནང་བ་དེ་དང་ཕྱོགས་བསྡུས་འདི་གཉིས་ཐ་དད་རེད།

འགོ་བརྗོད་འདི་རང་གི་ཨང་གྲངས་གཉིས་པར་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྡུས་གསུམ་གྱི་ངོ་སྤྲོད་བཀོད་ཡོད། (༡) ནང་པའི་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྡུས།——འདིའི་ནང་བསྟོད་པ་༢༥ དང་། (༢) མཚན་བརྗོད་བསྟོད་པ་ཕྱོགས་བསྡུས།——འདིའི་ནང་བསྟོད་པ་ ༤༤ དང་། (༣) གཟུངས་བསྡུས་ནང་འཁོད་ཡོད་པའི་བསྟོད་པ་༩༨ དང་། དེ་བཞིན་ཁྲོན་བསྡོམས་བསྟོད་པ་༡༩༩ ངོ་སྤྲོད་བྱས་ཡོད། བསྟོད་པ་སོ་སོའི་ཚིག་འགོའི་ལུང་འདྲེན་ཡང་བཀོད་ཡོད་པ་འདི་ལ་བརྟེན་ནས་མིང་མཚུངས་པའི་བསྟོད་པ་རྣམས་ཐ་དད་ཡིན་པ···གསལ་བར་ཤེས་རྟོགས་ཐུབ།།

ནང་པའི་གསུང་རབ་ཁག་ཉམས་པ་ཕྱོགས་བསྡུས། (50–63)

འགོ་བརྗོད་འདིའི་ནང་ཚན་"དྷཱི"ཨང་དང་པོར་དབང་མདོར་བསྟན། སྤྱོད་པའི་གླུ་དབྱངས་ཀྱི་མཛོད་འགྲེལ། གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བསྡུས། ཡེ་ཤེས་གྲུབ་པ་དང་ཡོངས་སུ་གྲུབ་པའི་རྣལ་འབྱོར་གྱི་སྙིང་བ་རྣམས་སུ་ལུང་དྲངས་པ་ཕལ་ཆེར་གཞུང་……དང་རྩོམ་པ་པོའི་ལུང་ ༢༠ ཙམ་ཕྱོགས་བསྡུས་དང་། གལ་ཆེའི་གསལ་བཤད་དང་ཆབས་ཅིག་བཀོད་ཡོད་པ་ལྟར་འདིར་གོང་སློས་ཀྱི་གསུང་རབ་ལས་གཞན་པའི་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་ཡེ……ཤེས་ཡང་དག་གྲུབ་པའི་འགྲེལ་བ། དབྱིད་ཀྱི་ཐིག་ལེའི་འགྲེལ་བ། སྒྲུབ་ཐབས་སྙིང་བ། གསང་བའི་དམ་ཚིག་སྒྲུབ་པ་ཕྱོགས་བསྡུས། ཀྱེ་རྡོར་རྒྱུད་ཀྱི་འགྲེལ་བ་ (རྣལ་འབྱོར་རིན་ཆེན་སྙིང་བ་) རྣམས་སུ་བསྡུས་པའི་གསུང་རབ་དང་གསུང་པ་པོ་རྣམས་ཀྱི……ལུང་ཕྱོགས་བསྡུས་བྱས་ཏེ་ཕལ་ཆེར་དུས་རིམ་དང་པོར་བཀོད་ཡོད་པ་ཙམ་འདིར་ཡང……བཀོད་ཡོད།།

ནང་པའི་ཐུན་མིན་ཆོས་ཚིག་ཁག་གི་དགོངས་པ། (64–81)

འཆར་གཞི་འདིའི་ངོ་བོ་སོགས་ "དྷཱི" དེབ་དང་པོར་ངོ་སྤྲོད་མདོར་བསྡུས་བྱས་ཟིན་པ་དང་། དེར་དབང་མདོར་བསྟན་གྱི་འགྲེལ་བར་བཤད་ཡོད་པའི་ཐུན་མོང་མིན་པའི་ཆོས་ཚིག་རྣམས་ཀྱི་གསལ་བཤད་དང་འབྲེལ་བའི་སྒོ་ནས་ཕྱོགས་བསྡུས་བྱས་ཡོད……པ་དང་། འདིར་དེ་མཚུངས་དབང་མདོར་བསྟན་གྱི་འགྲེལ་བའི་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་ཆོས་ཚིག་ལྷག་མ་རྣམས་དང་། གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བསྡུས་སུ་སྐབས་ཐོབ་ཀྱིས་བསྟན་པའི་ཆོས་ཚིག་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་འགྲེལ་བ་རྣམས་ཀྱི་ཕྱོགས་སྡུ་བྱེད་བཞིན་ཡོད།།

གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བདུས་ཀྱི་ཁ་སྐོན་ལྡེ། (82–107)

གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་དེབ་གྲངས་ཆེ་ཆུང་༣༡ གཱཡཀཱལྤཱ་ཨོཪིཡནྡཱལ་སཱ་རིཇ་ བཏོནྡཱ་ནས་གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བསྡུས་ཀྱི་མིང་ཐོག་ནས་ཕྱི་ལོ་༡༩༣༥ ལ་དཔར་སྐྲུན་བྱས་འདུག དེའི་སྙིང་གཞིར་མཧཱམཧོཔཱདྷྱཱཡ་ཤྲཱིཧརཔྲསཱདཤཱསྟྲཱི་མཆོག་གིས་དེབ་ཚང་མའི་ངོ་སྤྲོད་མདོར་བསྡུས་བཀོད་འདུག ནྱཱུ་ཀཊལགསཀཊལགར་ནང་དེབ་འདི་རྣམས་དང་གཉིས་མེད་རྡེ་རྗེའི་དེབ་གཞན་དཔར་སྐྲུན་བྱས་ཡོད་པ་དེ་ཚོ་འི་མ་དཔེ་ཡོད་པ་རྣམས་ཀྱི་སྐོར་གསལ་བཤད་བྱས་འདུག །

དེ་མཚུངས་ "ཡིད་ལ་མི་བྱེད་པའི་གཞི་" དེ་ཡང་ཨོཪིཡནྟཱལ་ཀནསྒྲནྡྷསི་ཀྱི་གྲོསེཊརྣྲ་༣༠སྤྱི་ཚན་༣པའི་ཤོག་གྲངས་༥༣–༡༠༥དཔར་སྐྲུན་བྱས་འདུག སརྟཔཱཎྜས་མཛད་པའི་དོ་ཧ་མཛོད་ཀྱི་འགྲེལ་པ་ཊཱིཀཱཔྲསནྣཔདཱཙན་ཏྲབགཅི་མཆོག་ནས་ ཀལཀཏྟ་སཾསྐྲཏ་སཱི་རཱིཛ་ནང་ཕྱི་ལོ་༡༩༣༨ ལ་དཔར་སྐྲུན་བྱས་འདུག སྒྲུབ་ཐབས་ཕྲེང་བར་ཁོང་གི་སེཏྲ་སྒྲའི་སྒྲུབ་ཐབས་དང་། རྡོ་རྗེ་ཕག་མོའི་སྒྲུབ་ཐབས་དང་། གསང་བ་ཡི་གེ་དྲུག་གི་སྒྲུབ་ཐབས་ཀྱང་དཔར་སྐྲུན་བྱས་འདུག གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བདུས་སུ་ཕྱག་རྒྱ་བཞིའི་མིང་ཐོག་དཔར་སྐྲུན་བྱས་པའི་དེབ་ཀྱི་མིང་དངོས་གནས་ཕྱག་རྒྱ་འཆིང་བ་ཡིན་ཞིང་ མཛད་པ་པོ་ཀླུ་སྒྲུབ་ཡིན། གཞན་ཡང་གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཡིན་པར་གྲགས་པའི་གསུང་རྣམས་ཞིབ་མོར་བརྟག་འོས་སོ།།

དབང་མདོར་བསྟན་གྱི་འགྲེལ་བ་ལྟར་གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེའི་ཕྱོགས་བསྡུས་ལ་ཡང་ཁ་སྐོན་གང་ཡང་མི་འདུག དེས་ན་སློབ་དཔོན་སྣ་ཚོགས་དང་དེ་དག་གིས་མཛད་པའི་གཞུང་སྣ་ཚོགས་དང་ཁྱད་པར་དུ་དེ་ཁོ་ན་ཉིད་རིན་ཆེན་འཕྲེང་བ་དང་། དེ་བཞིན་ག་ཤེགས་

པ་ལྷའི་ཕྲུག་གུའི་བཤད་པ་སོགས་སུ་བསྟན་པའི་འདོད་པ་མཐུན་མི་མཐུན་སྣ་ཚོགས་དང་། གྲུབ་མཐའ་སྣ་ཚོགས་དང་། དེ་བཞིན་ནང་པའི་རྒྱུད་རྣམས་སུ་བེད་སྤྱོད་ཡོད་པའི་ཁྱད་པར་ཅན་གྱི་ཚིག་རྣམས། དང་གཉེར་བ་རྣམས་ཀྱིས་གོ་སླ་བའི་ཆེད་དུ་ངོ་སྤྲོད་ཀྱི་ཚུལ་དུ་སྐབས་འདིར་གོང་སློས་ཀྱི་གཞུང་ཁག་དང་འབྲེལ་བའི་ཁ་སྐོན་ལྷ་འགོད་རྒྱུ་ཡིན། གཉིས་མེད་རྡོ་རྗེས་དྲངས་པའི་ལུང་རྣམས་ཀྱི་འབྱུང་ཁུངས་འཚོལ་ཐབས་ལའང་འབད་རྩོན་བྱས་''ཡོད། ཕྱོགས་བསྡུས་འདིའི་ནང་དྲངས་པའི་ལུང་ལས་གཞན་པའི་གསུང་རྩོམ་གྱི་ཚིགས་བཅད་ཕྱེད་ཕྱེད་ཀྱི་གོ་རིམ་རྣམས་ཀྱང་འདིར་འགོད་རྒྱུ་ཡིན།།

ཆེས་དཀོན་པའི་གསུང་རབ་རྣམས་ཀྱི་རྩ་བའི་མ་དཔེ། (108–115)

འགོ་བརྗོད་འདིའི་ཐོག "ཧྐ" ཨང་དང་པོར་གཞུང་གྲངས་༢༧–༣༨ ཀྱི་རྩ་བའི་མ་དཔེའི་སྐོར་དང་། དེ་བཞིན་འཆར་གཞིའི་ངོ་སྤྲོད་མདོར་བསྡུས་སུ་བཀོད་ཡོད་པ་ལྟར། འདིར་དེ་མཚུངས་གཞུང་གཞན་གྲངས་༡༦ གི་མ་དཔེའི་སྐོར་ངོ་སྤྲོད་བྱེད་རྒྱུ་དང་། མ་འོང་པར་མཐུན་ཀྱི་ན་བུང་ཚེ་གཞུང་འདི་རྣམས་ཀྱི་རྒྱ་ནག་དང་། ཉི་ཧོང་གི་མ་དཔེ་རྣམས་ཀྱི་ངོ་སྤྲོད་ཀྱང་ཞུ་རྩིས་ཡིན།།

ནང་པའི་རྒྱུད་གཞུང་རྣམས་སུ་གསལ་བའི་ལྷུང་དང་ འཁོར་ལོའི་སྙིང་དོན་མདོར་བསྡུས། (116–125)

རྣལ་འབྱོར་སྐབས་སྲོག་ལ་དབང་ཐོབ་པར་བྱེད་པའི་བྱ་རྩོལ་ལ་སྲོག་རྩོལ་ཅེས་བརྗོད། ཕྱིའི་རྣལ་འབྱོར་དྲག་གི་སྒྲུབ་ཐབས་ནང་སྲོག་རྩོལ་ཤིན་ཏུ་གལ་ཆེན་པོ་ཞིག་

རེད། སྲོག་རྩོལ་རང་ལ་བརྟེན་ནས་རྡོ་རྗེ་ཐེག་པའི་གང་ཟག་གིས་སྲོག་ལ་དབང་ཐོབ་པར་བྱེད་ཅིང་དེ་རྣམས་ཀྱིས་རླུང་དང་སེམས་གཉིས་ཤིན་ཏུ་ནས་འབྲེལ་བ་ཉེ་པོ་ཡོད་པ····ཤེས་ཀྱི་ཡོད་པ་རེད། སེམས་ནི་སྲོག་དང་འབྲེལ་ཡོད་པས་སྲོག་ལ་དབང་ཐོབ་ན་སེམས་རང་བཞིན་གྱིས་དབང་དུ་འགྱུར་བར་སླ། རྡོ་རྗེ་ཐེག་པའི་གང་ཟག་སྲོག་དང་ཐུར་སེལ་གྱི་བསྒྲུབ་པ་(ཉམས་ལེན་)སྔགས་ཀྱི་རྣལ་འབྱོར་ལ་བརྟེན་ནས་བྱེད། དེ་ལ་དབུགས་དབྱུང་རྔུབ་དང་གནས་པའི་བྱ་རྩོལ་གསུམ་འབྱུང་གི་ཡོད། བྱ་རྩོལ་གསུམ་པོ་རྣམས་གོ་རིམ་བཞིན་ "ཨོཾ" རྔུབ་པ་དང་། "ཨ" གནས་པ་དང་། "ཧཱུྃ" དབྱུང་བ་རྣམས་ཡི་གེ་གསུམ་གྱི་ངོ་བོར་སྔགས་བཟླས་པའི་སྒོ་ནས་བྱེད། སྲོག་དང་ཐུར་སེལ་གྱི་རླུང་ལ་དབང་ཐོབ་ཆེད་སྔགས་ཀྱི་རྣལ་འབྱོར་མེད་ན་མི་འབྱུང་བ་ཞིག་རེད། རྡོ་རྗེ་བཟླས་པས་རྒྱས་གདབ་པའི་སྲོག་དང་ཐུར་སེལ་དབང་བ་ན་སེམས་འོག་འགྲོ་བཅིངས་ཏེ་གྱེན་ཕྱོགས་སུ་ཁ་ལྡུས་ཏེ་མཐར་སྤྱི་བོ་བདེ་ཆེན་གྱི་འཁོར་ལོར་གནས་པར་བྱེད། སེམས་ཀྱི་འོག་འགྲོ་བཅིང་ཆེད་རྟུལ་ཞུགས་ཀྱི་རྣལ་འབྱོར་གྱི་ཕྱག་རྒྱ་དང་སྲོག་རྩོལ་སོགས་ཀྱི····རྣམ་བཞག་ཡོད།

སྐབས་ངབས་ཀྱི་རྩོམ་བྲིས་འདིར་སྲོག ཐུར་སེལ། གྱེན་རྒྱུ། མཉམ་གནས། ཁྱབ་བྱེད་ཀྱི་མིང་ཅན་གྱི་རྩ་བའི་རླུང་ལྔ་དང་། ཀླུ་དང་། རུས་སྦལ། རྩངས་པ། ལྷས་བྱིན་དང་ནོར་ལས་རྒྱལ་དེ་ཡན་ལག་གི་རླུང་ལྔ་པོའི་སྐྱེ་གནས་ཀྱི་རྣམ་བཞག་དང་དེ་དག་གི་ངོ་བོ་དང་བྱེད་ལས་སོགས་ཀྱི་ངོ་སྤྲོད་དང་ལྷན་དུ་དེ་དག་གི་ས་བོན····གྱི་ཡི་གེའི་སྐོར་རྣམས་བྲིས་ཡོད། རྩ་བ་དང་ཡན་ལག་གི་རླུང་ལྔ་ལྔའི་ངོ་སྤྲོད་ཀྱི་རྗེས་སུ་འདིར་སྙིང་ག་དང་དཔྲལ་བ། མགྲིན་པ། དེ་བཞིན་ལྟེ་བའི་མིང་ཅན་གྱི་འཁོར་ལོ་བཞི་དང་དེར་རྒྱུ་བའི་རླུང་གི་རྣམ་བཞག་ཀྱང་བཀོད་ཡོད། རྒྱུད་རྡོ་རྗེའི་འཕྲེང་

བར་སྣང་གི་སྒྲོར་བའམ་རྗེས་སྒྲོར་གྱི་ཚུལ་རྣམས་ཤེས་ན་རྣལ་འབྱོར་པ་དེ་འཁོར་བ་ལས···ཐར་ཏེ་དེ་བཞིན་གཤེགས་པའི་གོ་འཕང་ཐོབ་པར་བྱེད། འོན་ཀྱང་སྣང་དང་རྣམ་རྟོག་གཉིས་ཀྱི་རང་བཞིན་ལས་མ་འདས་པ་དང་། དེ་བཞིན་དེའི་རྗེས་སུ་འཇུག་པ་ལ་བརྟེན་ནས་འཁོར་བར་འཁོར་ཏེ་སེམས་ཅན་རྣམས་སྡུག་བསྔལ་མྱོང་བར་བྱེད་དོ།། དེས་ན་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་གནད་ཡང་དག་པར་བཅིངས་པ་ན་ལས་རླུང་ཡེ་ཤེས་ཀྱི་རླུང་གི་ངོ་བོར་དག་པའི་ཚོ་འཁར་བ་འདི་ཡང་དག་པར་གཅོད་བྱེད་ཀྱི་གཉེན་པོ་ཡང་རླུང་འདིས་སྒྲུབ་ནུས་ཞེས····ལུང་རྣམས་སུ་བཤད་ཡོད།།

གྲུབ་ཐོབ་དང་འབྲེལ་བའི་ངོ་སྤྲོད་མདོར་བསྡུས། (126–137)

འཇིག་མེད་སྦྱིན་གྱིས་བརྩམས་པའི་གྲུབ་ཐོབ་བརྒྱད་ཅུ་རྩ་བཞིའི་རྣམ་ཐར་ལས་གཞན་པའི་རྡོ་རྗེ་གདན་པ་དང་། དགེ་སློང་དཔལ་གྱི་སྡེ། བུ་སྟོན་རིན་པོ་ཆེ། པ་དམ་པ་སོགས་ཀྱིས་མཁས་གྲུབ་གང་ལ་གྲུབ་ཐོབ་ཏུ་བརྩིས་པ་ ༢༤༨ ཙམ་ཞིག་ "ཧྲི" ཨང་དང་བོར་བཀོད་ཡོད་པ་དེ་ཚོའི་ནང་ནས་འདིར་གྲུབ་ཐོབ་ ༡༨ ཙམ་གྱི་མཛད་རྣམ་རྗེ་བཙུན······ཏཱརནཱཐ་དང་། དེབ་ཐེར་སྔོན་པོ། པད་དཀར་ཆོས་འབྱུང་སོགས་ལ་གཞི་བྱས་ཏེ་དེ་དག་གི་མཛད་པ་མདོར་བསྡུས་དང་། སྡེ་དགེ་བསྟན་འགྱུར་གྱི་དཀར་ཆག་ཏོའོ་འཀུ་ལ་གཞི་བྱས་ཏེ་དེ་རྣམས་ཀྱི་གསུང་བོད་སྐད་དུ་བཞུགས་པ་ཁག་གཤམ་དུ་འགོད་རྒྱུ་ལགས། །

ABSTRACT OF THE ARTICLES

Śrībhagavatyāryatārādevyā namaskāraikaviṁśatistotram 1-3

This stotra is from the unpublished stotra group leaf no. 33-34, stotra no. 60 taken from the private collection of Prof. Jagannatha Upadhyaya. Details are given in DHĪḤ Vol. I pp. 51.

trikāyavajrayoginyaḥ Ṣoḍaśaślokātmikā piṇḍārthastutiḥ 4-5

It is taken from the collection of Guhyasamaya Sādhanas leaf no. 181-182, serial no. 24 which is in the private collection of Prof. Jagannatha Upadhyaya.

Introduction to rare Buddhist texts 6-49

Under this title descriptive lists of Guhyasamayasādhanasaṁgraḥ and Bauddha-stotrasaṁgraḥ are given in Vol. I of DHĪḤ. The present issue introduces Dhāraṇyādisaṁgraḥ under the same title bearing number 1.

This is a collection of 371 texts which include 263 of dhāraṇī and rakṣāmantra, 48 stotras and 56 fragments. Although there is no definite order in collection of these texts, serial number is given at the end of every text. Therefore, for convenience the texts of dhāraṇis and rakṣa-mantras are arranged in alphabetical order and the numbers inscribed on the texts are given 'Text number'. No note is added to these mantra texts. Descriptions as of fragments are given and those of stotra are given in the Stotrasaṁgraḥ.

It is to be noted that this collection is different from that of Brihddharaṇīsaṁgraḥ remarked by M. M. Haraprasada Shastri in Vol. II of Nepal Darbar Library mss catalogue.

Stotra collections are introduced in number 2 under the same title. Descriptive text of total 144 stotra texts are given : 37 in Bauddha stotra saṁgraḥ, 55 in nāmsaṅgītī, Stotrasaṁgraḥ and 48 included in Dhāranyā-disaṁgraḥ. The initial portion of every stotra is given to avoid confusion among the texts bearing same name.

Lost Buddhist texts 50-63

About 30 works and their authors, cited in Sekoddeśaṭīkā, caryāgītikoṣa Vyākhyā, Advayavajra-saṁgrah, jñānasiddhi and Niṣpannayogāvalī, are given with necessary notes in Vol. I of DHĪḤ under the same topic. This issue also brought about the same number of works and authors cited in Tatvajñānasansiddhiṭīkā, Vasantatilakaṭīka, Sādhanamālā, Guhyasamayasādhanasaṁgrah and Hevajratantratīkā (Yogaratnamālā).

Glossary of Buddhist Technical Terms 64-81

A brief mention of the nature of this project has been made in the first issue of this journal. Some tāntrika technical terms and their comments found in Sekoddeśaṭīkā have been given there. In continuation, the rest technical terms and comments of technical terms found in Advayavajra-saṁgrah are given here.

The five Supplements of Advayavajra-Saṁgrah 82-107

A total number of 21 texts of Advayavajra were published in Gaekwar Oriental Series, Baroda in 1927 under the name Advayajra-saṁgrah. The preface bears brief introduction by M.M. Harprasada Shastri, to all the texts. The New Catalogus Catalogorum gives information regarding the manuscripts of these and other texts of Adyavajra and the published texts of the same. According to this the Amanasikāra was published in the proceedings of the 20th Oriental Conference Vol. II pp. 93-107, Dohākoṣa by Sarahapāda and its commentary were published by Dr Prabodhacandra Bagchi in Calcutta Sanskrit Series 1938. Siṁhanādasadhana, Vajravārāhī-Sādhanā and ṣaṭha Guptākṣaṇsādhana were published in the Sādhana mālā the text published in the name of Caturmudrā in Advayavajra-saṁgraha should be Mudrābandha which is a work of ācārya Nāgārjuna. Probe in detail is necessary for some of the texts famous as the works of Advayavajra, a same as the Sekoddeśatīkā edition. The published edition of Advyavajra-saṁgrah does not give any supplement, therefore, in the present issue five supplements are given to facilitate the readers in knowing various precepts of ācāryas in their different texts especially in tattvaratnāvalī, pañcatathāgatamudrāvivaraṇa and so on, knowing their philosophy and technical terms used in Buddhist tantra. Attempts are made to find out the original

source of those quoted by Advayavajra. Apart from the quotations found in the saṁgraḥ beginning portion of every śloka in the saṁgraḥ are given here alphabetically.

Sources for Rare texts *108-115*

Information of sources of 27-28 texts were given in Vol. I of DHĪḤ under this heading. A brief introduction of the project was also given there. The present issue bears information of sources of 16 texts. If circumstance accords information regarding the Chinese and Japanese editions of these texts will be given in future.

Essence of the system of Nāḍi and Cakra in the Buddhist Tantra *116-125*

In yoga, the practice to acquire complete control of prāṇa is called prāṇāyāma. Among the six external practices the prāṇāyāma deserves important place. It is prāṇāyāma through which the vajrayāna practitioner controls the prāṇa. Since prāṇa is connected with citta they are closely related. Therefore, it is naturally easier to acquire control of citta when prāṇa is controlled.

The vajrayāni practitioner practices the prāṇa and apāna with the help of mantrayoga. There are three exercises : pūraka, Kumbhaka and recaka. In these three exercises three syllables viz. Oma, Āḥ and Huṁ in three colours are recited respectively. Mantra is used to get control of the *prāṇa-āpan vāyu* control of prāṇa-apāna. Accomplished reciting vajra mantra restrains citta from downward movement and moves upward and lastly enjoys the Mahāsukha in the uṣṇīṣa cakra. To control the downward movement of citta mudrā, āsana and prāṇayāma of haṭhayoga are practised.

In the present article prāṇa, apāna, udāna, samāna and vyāna, the five mūla Vāyus and Nāga, Kūrma, Kṛkara, Devadatta and Dhanañjaya, the five aṅga vāyus are presented with philosophical analysis of their generation. Their nature and functions are described and their seed-letters are also given.

After explaining the mūla vayu and aṅga vāyus the circulation of vāyu in four cakras viz. hṛdaya, lalāṭā, kaṇṭha and nābhi is elucidated.

On gaining perfection knowledge of the system of prayoga and anuyoga the yogi liberates from the cyclic exsistence and attains Buddhahood. But having no exemption from the nature of prāṇa and vāyu beings bewilder in world and experience hapiness and sorrow.

Brief notes related to Siddhas *126-137*

Apart from the biographies of 84 siddhas written by Abhaya-datta Vajrāsanapāda, Bhiksusena, Buston, Pha-dam-pa and others have added many ācāryas and Buddhas in the list of Siddhas. Number 357 was given in the 1st. issue and the present issue bears brief biographies of 17 Siddhas on the basis of works of historians like Taranatha, Pad-ma-dkar-po, gS̄on-nu-dpal and their works, according to Tohoku catalogue, in Tibetan version.

